राजभाषा भारती

o"kZ % 39 • vad 153 • vDrwcj&fnlEcj 2017

जन जन की भाषा है हिंदी

Hkkjr ljdkj
xg ea=ky;
jktHkk"kk foHkkx

nf{k.k ,o nf{k.k if'Pke {k=h; jktHkk"kk lEeyu] fo'kk[kkiÍ.ke e lck/ku nr g,
ekuuh; xg jkT; e=h Jh fdju jhtht rFkk epk lhu vfrfFkx.kA

{k=h; jktHkk"kk lEeyu] okjk.klh e jk"Vxku d nkjku
ekuuh; jkT;iky Jh jke ukbd] lfpo ¼jk-Hkk-½ Jh iHkkl dekj Ökk]
l;a lfpo ¼jk-Hkk-½ Mk- fcfiu fcgkjh rFkk vU; epklhu vfrfFkA

भारति जय विजय करे, कनक–शस्य–कमल धरे
–निराला

राजभाषा विभाग की त्रैमासिकी

वर्ष : 39 अंक : 153

(अक्तूबर–दिसंबर, 2017)

राजभाषा भारती

☛ संरक्षक
प्रभास कुमार झा
सचिव, राजभाषा विभाग

☛ प्रतिपालक
डॉ. बिपिन बिहारी
संयुक्त सचिव, राजभाषा विभाग

☛ संपादक
डॉ. श्रीप्रकाश शुक्ल
संयुक्त निदेशक (नीति/पत्रिका)
दूरभाष : 011–23438250

☛ उप संपादक
डॉ. धनेश द्विवेदी
दूरभाष : 011–23438159

पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। सरकार अथवा राजभाषा विभाग का उससे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

पत्र व्यवहार का पता :
संपादक
राजभाषा विभाग
एनडीसीसी भवन–II, चौथा तल, बी विंग,
जय सिंह रोड, नई दिल्ली–110001
ईमेल–patrika-ol@nic.in
वेबसाइट–rajbhasha.nic.in

निःशुल्क वितरण के लिए

❖ उद्‌बोधन–सचिव (राजभाषा) 1

❖ संयुक्त सचिव की कलम से... 3

❖ संपादकीय 5

❖ साक्षात्कार–1 7

❖ साक्षात्कार–2 11

क्र.सं.	लेख का शीर्षक	लेखक का नाम	पृष्ठ सं.
1.	वर्तमान हरियाणा का साहित्यिक अवदान	प्रोफेसर लालचन्द गुप्त 'मंगल'	15
2.	सरल हिंदी और राष्ट्रीय एकता	प्रो. चतुर्भुज सहाय	24
3.	केरल के हिंदी प्रचार का शैक्षिक आयाम	डॉ. सुधा ए.एस.	28
4.	राजभाषा हिंदी जरूरत आज की	डॉ. संतराम यादव	31
5.	गोवा प्रदेश में प्रशंसनीय हिंदी कार्यान्वयन	डॉ. शंभू बा. प्रभुदेसाई	36

6.	हिंदी उत्थान के प्रमुख सेतु	श्रीनिवास राव	42
7.	पारिभाषिक शब्दावली और हिंदी माध्यम शिक्षण	डॉ. जितेन्द्र कुमार	46
8.	कार्यालयीन हिंदी में सरलता–डायग्लोसिया (भाषा–द्वैत) के परिप्रेक्ष्य में	डॉ. रामवृक्ष सिंह	52
9.	बाल विकास में सहायक–विज्ञान की भाषा	आइवर यूशिएल	61
10.	संवेदनाओं की अभिव्यक्ति का महत्वपूर्ण स्रोत है–हिंदी	डॉ. मनोरमा शर्मा	64
11.	मानव संसाधन प्रबंधन एवं सांगठनिक आत्मीयता में हिंदी की भूमिका	डॉ. साकेत कुमार	68
12.	मानवीय मूल्यों को आत्मसात करता हिंदी साहित्य	केवल कृष्ण	73
13.	अरुणाचल प्रदेश : सांस्कृतिक विरासत की झलकियां	राजेश कुमार सिंह	77
14.	भाषा का सार	डॉ. धनेश द्विवेदी	80

सचिव (रा.भा.) का उद्‌बोधन

राजभाषा भारती के माध्यम से आप के सम्मुख अपनी बात रखने का मौका मिलता है जिससे मुझे अत्यंत प्रसन्नता होती है। पिछले अंकों में अपनी बात कहते हुए मैंने कई विषयों पर विचार रखे और यह सिलसिला जारी रखते हुए इस अंक में अनुवाद के संबंध में कुछ बातें आप से साझा करने का मानस बना है। जैसा कि हम सभी जानते हैं कि विगत दशकों में अनुवाद की महत्ता व उपादेयता को विश्वभर में स्वीकारा जा चुका है। वैदिक युग के 'पुनः कथन' से लेकर आज के 'ट्रांसलेशन' तक आते–आते अनुवाद अपने स्वरूप और अर्थ में बदलाव लाने के साथ–साथ अपने बहुमुखी व बहुआयामी प्रयोजन को सिद्ध कर चुका है। प्राचीन काल में 'स्वांतः सुखाय' माना जाने वाला अनुवाद कर्म आज संगठित व्यवसाय का मुख्य आधार बन गया है। दूसरे शब्दों में कहें तो अनुवाद प्राचीन काल की व्यक्ति परिधि से निकलकर आधुनिक युग की समष्टि परिधि में समा गया है। आज विश्वभर में अनुवाद की आवश्यकता जीवन के हर क्षेत्र में किसी–न–किसी रूप में अवश्य महसूस की जा रही है। भारत जैसे बहुभाषा–भाषी देश के जन–समुदायों के बीच अंतःसंप्रेषण के संवाहक के रूप में अनुवाद का बहुआयामी प्रयोजन सर्वविदित है। यदि आज के इस युग को 'अनुवाद का युग' कहा जाए तो कोई अतिश्योक्ति न होगी क्योंकि आज जीवन के हर क्षेत्र में अनुवाद की उपादेयता को सहज ही सिद्ध किया जा सकता है।

यदि भारत के परिप्रेक्ष्य में बात करें तो ज्ञात होता है कि विश्व की लगभग सभी भाषाएं हिंदी में अनूदित होकर भारतीय बाजार में अपनी पैठ बनाने में सफल हुई हैं। हिंदी अब बाजार–तंत्र की, ज्ञान विज्ञान की, व्यवसाय–व्यापार की, संचार–तंत्र की तथा शासकीय व्यवस्था की एक समृद्ध भाषा के रूप में स्थापित हो चुकी है। हिंदी भाषा में, और हिंदी भाषा से अनुवाद की परम्परा अब सुदीर्घ होने के साथ–साथ पुख्ता और उल्लेखनीय भी होती जा रही है। इस कड़ी में हिंदी में ज्ञान–विज्ञान की संपदा (कंटेंट) को बढाने के लिए हर संभव प्रयास करने की आवश्यकता है। आज चीन की ओर नजर डालते हैं तो यह पता चलता है कि वह सबसे तेज उभरती हुई अर्थव्यवस्था के रूप में अग्रणी स्थान पर काबिज है।

इसका एक कारण यह है कि उन्होंने अन्य भाषाओं विशेषकर अंग्रेजी में उपलब्ध ज्ञान सामग्री का व्यापक रूप से अनुवाद कर अपनी भाषा में सुलभ कराया। उनके भाषाई स्वाभिमान व पश्चिम से आगे निकलने की महत्वाकांक्षा से हमें सीख लेनी चाहिए।

अंग्रेजी की तुलना में हिंदी में ज्ञान–विज्ञान सामग्री का भारी अभाव है। यही स्थिति अन्य भाषाओं की भी है। केंद्रीय कार्यालयों में अच्छी

खासी संख्या में अनुवादक तैनात हैं जो हिंदी के साथ–साथ अंग्रेजी भी भली–भांति जानते हैं। वैसे भी अंग्रेजी जानने वालों की बड़ी संख्या हमारे देश में है। आवश्यकता इस बात की है कि हम अपनी क्षमता का प्रयोग अपनी भाषा के संवर्धन में करें। इस हेतु राजभाषा विभाग एक निःशुल्क मेमोरी आधारित अनुवाद का सॉफ्टवेयर विकसित कर रहा है जो अनुवादकों के लिए भारी वरदान साबित होगा। वे इस टूल के माध्यम से न केवल तेजी से अनुवाद कर सकेंगे वरन् जैसे–जैसे अनुवाद का डाटा बेस बढ़ेगा, वैसे वैसे अनुवाद का कार्य सहज और सरल होता जाएगा। हमें उम्मीद है कि अगले छह माह में यह सॉफ्टवेयर आप के हाथ में होगा। दुनिया भर में अब कंप्यूटरीकृत अनुवाद हो रहा है और यहां भी अब अनुवाद को इसी तरह मानव श्रम से मुक्त करने का समय आ गया है। हमारे सक्षम अनुवादक और कंप्यूटर आधारित अनुवाद टूल का गठजोड़ निश्चय ही हिंदी की ज्ञान संपदा को आगे बढ़ाने व अधुनातन बनाने में निर्णायक भूमिका अदा करेगा।

अनुवाद की कड़ी मेहनत से देश के किशोर व युवाओं को अपनी भाषा में बेहतर ज्ञान मिल सकेगा और अपनी भाषा के प्रति गर्व व स्वाभिमान भी बढ़ेगा। इससे हमारी मानसिकता भी बदलेगी ओर हम अंग्रेजी के अनावश्यक दबाव व तनाव से मुक्त होकर अपनी भाषा में रचनात्मक सृजन की ओर उन्मुख हो सकेंगे।

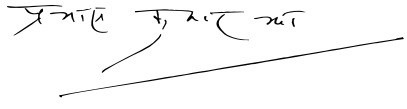

संयुक्त सचिव की कलम से..

हिंदी दिवस पर राजभाषा विभाग द्वारा आयोजित कार्यक्रम में माननीय राष्ट्रपति जी के कर–कमलों से राजभाषा गौरव एवं राजभाषा कीर्ति पुरस्कार वितरित किए गए। इस मौके पर माननीय गृह मंत्री तथा माननीय गृह राज्य मंत्रियों की गरिमामयी उपस्थिति से कार्यक्रम अधिक उत्कृष्ट हो गया। पूरे देश में सितंबर माह के दौरान विभिन्न कार्यक्रम आयोजित किए गए जिससे पूरा राष्ट्र हिंदीमय होता प्रतीत हुआ। यह जानकर मुझे व्यक्तिगत रूप से अत्यंत आनंद का अनुभव हुआ कि संविधान के अनुपालन में देश के प्रत्येक प्रांत में राजभाषा के कार्यान्वयन की दिशा में सकारात्मक प्रयास किए जा रहे हैं।

राजभाषा विभाग हिंदी के प्रचार–प्रसार तथा प्रभावी कार्यान्वयन हेतु प्रतिबद्ध है और इस कड़ी में सदा प्रयासरत है। विभाग द्वारा इस तिमाही में कई उल्लेखनीय कार्य किए गए जिनका सूक्ष्म विवरण राजभाषा भारती के इस अंक में आपके सामने रखते हुए मुझे बेहद प्रसन्नता हो रही है।

माननीय राष्ट्रपति जी के कर–कमलों से 'लीला मोबाइल एप' का लोकार्पण 14 सितंबर 2017 को हिंदी दिवस के अवसर पर किया गया। इस एप के माध्यम से देश की 15 भाषाओं में हिंदी सीखना तथा हिंदी में कार्य करना आसान हो सकेगा। विभाग द्वारा राजभाषा प्रचार–प्रसार की कड़ी में एक कदम आगे बढाते हुए–सी–डेक, पुणे को प्रवाह–राजभाषा नामक सॉफ्ट वेयर के विकास हेतु आदेश जारी किया गया।

दिनांक 18 सितंबर, 2017 को माननीय गृह राज्य मंत्री की अध्यक्षता में देश भर के सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों की बैठक का आयोजन किया गया जिसमें सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों के 265 वरिष्ठ अधिकारियों ने भाग लिया। इस बैठक का उद्देश्य सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों में राजभाषा के प्रभावी कार्यान्वयन में आने वाली समस्याओं पर चर्चा करना तथा उनका निवारण करते हुए उनकी भागीदारी को नई गति देना था ।

दिनांक 22 सितंबर, 2017 को इंदौर में सचिव (राजभाषा) की अध्यक्षता में राजभाषा विभाग द्वारा तकनीकी संगोष्ठी का आयोजन किया गया जिसमें महाराष्ट्र, गुजरात, गोवा, दमन दीव, दादरा नगर हवेली, मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ राज्यों तथा केंद्र शासित प्रदेशों के कार्यालयों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। इसी क्रम में दिनांक 10.11.2017 को गुवाहाटी में सचिव (राजभाषा) की अध्यक्षता में पूर्व एवं पूर्वोत्तर क्षेत्रों के कार्यालयों के लिए तकनीकी संगोष्ठी का आयोजन किया गया।

केंद्रीय अनुवाद ब्यूरो, केंद्र सरकार के कार्यालयों में अनुवाद कार्य से जुड़े अधिकारियों एवं कर्मचारियों के लिए अनुवाद प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन करता है। इसी क्रम में, ब्यूरो

द्वारा इस तिमाही में 08 उच्च स्तरीय प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए गए जिनमें कुल 166 प्रशिक्षार्थियों को प्रशिक्षित किया गया। ब्यूरो द्वारा सितंबर, अक्तूबर एवं नवंबर 2017 में कुल 4042 मानक पृष्ठों की अनूदित सामग्री विभिन्न मंत्रालयों/विभागों को प्रेषित की गई।

केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण द्वारा देश के विभिन्न शहरों में 20 हिंदी प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन किया गया। केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण संस्थान द्वारा इस अवधि में पांच गहन हिंदी कार्यशालाओं का आयोजन किया गया जिनमें 140 कार्मिकों ने भाग लिया। हिंदी शिक्षण योजना के अंतर्गत वरिष्ठ उप महालेखाकार (प्रशासन) श्रीनगर (जम्मू एवं कश्मीर) के कार्यालय में 25 दिवसीय पूर्णकालिक गहन हिंदी प्रबोध प्रशिक्षण पाठ्यक्रम का आयोजन किया गया। इसके साथ–साथ उपनिदेशक (परीक्षा) द्वारा निफ्टेम, सोनीपत केंद्र पर 62 कार्मिकों हेतु ऑनलाइन परीक्षा का आयोजन राजभाषा प्रशिक्षण की दिशा में विशेष प्रयास रहा। अखिल भारतीय स्तर पर संस्थान द्वारा प्रबोध, प्रवीण, प्राज्ञ, प्राज्ञ बैंकिंग तथा पारंगत की ऑनलाइन एवं ऑफलाइन परीक्षाओं का संचालन किया गया।

इस समय, देश भर में नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों की संख्या बढ़ कर 457 पहुँच गई है। देश के विभिन्न नगरों में 213 नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों की बैठकों का आयोजन किया गया जिनमें राजभाषा नीति के कार्यान्वयन और इस संबंध में जारी आदेशों के अनुपालन की स्थिति एवं उसमें सुधार के उपायों पर चर्चा की गई।

राजभाषा विभाग द्वारा जारी की जाने वाली वार्षिक मूल्यांकन रिपोर्ट 2016–17 तैयार कर मुद्रण हेतु भेज दी गई । विभाग में इस तिमाही में कुल 319 शिकायतें प्राप्त हुईं और मुझे यह बताते हुए प्रसन्नता हो रही है कि इन शिकायतों में से 298 का निवारण किया गया।

तदर्थ वरिष्ठ अनुवादकों तथा कनिष्ठ अनुवादकों को वरिष्ठ अनुवादकों के पद पर नियमित पदोन्नति समिति की बैठक आयोजित कर पदोन्नति देने के लंबित कार्य का निपटान किया गया।

पत्रिका के उज्ज्वल भविष्य की कामना करते हुए राजभाषा भारती का यह अंक आपके सुपुर्द करता हूं तथा आपके सुझावों और मनोभावों का सदैव स्वागत है।

हार्दिक शुभकामनाओं सहित!

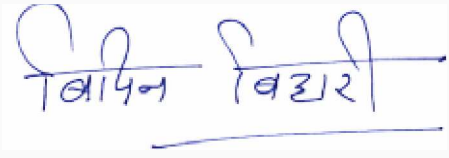

संपादकीय

शब्द शक्ति कल्पनातीत है। महान वैयाकरण भतृहरि ने शब्द को 'ब्रह्म' की संज्ञा देते हुए लिखा–''अनादि निधनं ब्रह्म शब्द तत्वं यदक्षरम्। विवर्तते अर्थभावेन प्रक्रिया जगतो यतः। अर्थात् शब्द ही ब्रह्म है और संपूर्ण जगत इस शब्द ब्रह्म का विवर्त है। जैसे जल का विवर्त लहरें, तरंगें और बुलबुले आदि हैं। शब्द के अर्थ की चरम अनुभूति ही ब्रह्मतत्व की अनुभूति कराती है और यह भी है कि 'ब्रह्मतत्व' की परिकल्पना के ठीक पूर्व ''शब्दतत्व'' भाषित होता है। शब्द का यह स्वरूप अत्यन्त गूढ़ विषय है। किन्तु हम सभी लोग शब्द की उपच्छाया से भलीभांति परिचित हैं। एक ही शब्द का विभिन्न संदर्भ में प्रयोग अंतःस्थल में अर्थ को अलग–अलग प्रबलता से प्रभावित करता है। यह शब्द की उपच्छाया पर निर्भर करता है। जन्म और मृत्यु एक शाश्वत सत्य है। हर दिन लाखों लोग मृत्यु को प्राप्त होते रहते हैं और इस संदर्भ में 'मृत्यु' शब्द की उपच्छाया सामान्य अर्थ देती है, किंतु यही शब्द मोहल्ले के किसी व्यक्ति के लिए, पड़ोस के किसी व्यक्ति के लिए, किसी स्वजन के लिए और घर के किसी व्यक्ति के लिए प्रयुक्त होने पर अलग–अलग प्रबलता से प्रभावित करता है। शब्द एक है किंतु उसकी उपच्छाया का प्रभाव बदल जाता है।

परतंत्रता और स्वतंत्रता भी ऐसे ही शब्द हैं। इन शब्दों के मायने हमारे पूर्वजों के जेहन में अलग थे, जिन्होंने परतंत्र होने का त्रास झेला था। जिन लोगों ने इसे केवल शब्द के रूप में सुना है उनके लिए इन शब्दों की उपच्छाया अलग रूप में प्रभावित करती है। शब्दों की उपच्छाया का सीधा संबंध मन की संवेदना से है।

स्वतंत्र राष्ट्र, अपना संविधान, राष्ट्रध्वज, प्रतीक चिह्न और राष्ट्रगान आदि मन को छू लेने वाले शब्द हैं। इनकी उपच्छाया हमें प्रभावित करती है। यही कारण है कि 'राष्ट्रगान' की धुन सुनते ही हम सावधान हो जाते हैं। एक संप्रभु राष्ट्र के लिए उक्त शब्द जितने महत्व के हैं उतने ही महत्व का शब्द ''राजभाषा'' भी है। यहां विचारणीय है कि 'राजभाषा' शब्द की उपच्छाया हमारे अंतर्मन को कितनी गहराइयों तक प्रभावित करती है। हमें कहां तक यह लगता है कि हम विदेशी भाषा के आश्रय में अपना कार्य करते हुए अभी भी किस हद तक अपूर्ण हैं। हमें 'राजभाषा' शब्द सुनकर कहां तक यह लगता है कि राजभाषा हिंदी भी संप्रभु राष्ट्र के संविधान, राष्ट्रध्वज, प्रतीक चिह्न और राष्ट्रगान की तरह ही महत्वपूर्ण है। राष्ट्र की सांस्कृतिक एकता और राष्ट्र की पहचान बनाये रखने के लिए एक राजभाषा अनिवार्य है। हिंदी भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम है, राष्ट्र की वाणी है, पहचान है और समस्त राष्ट्र को एक सूत्र में अनुस्यूत करने वाली भाषा है। हमें राजभाषा हिंदी शब्द की उपच्छाया कितना उद्वेलित करती है?

राजभाषा भारती का प्रस्तुत अंक इन्ही सब भावनाओं को समेटते हुये आपके समक्ष प्रस्तुत है तथा सचिव (रा.भा.) एवं संयुक्त सचिव (रा.भा.) की ओर से स्थायी स्तम्भ हमेशा की तरह ज्ञान वर्धक एवं उपादेय हैं।

आशा है अंक आपके लिये उपयोगी होगा।

माननीय राज्य मंत्री (स्वतंत्र प्रभार) ऊर्जा, खान तथा कोयला, श्री पीयूष गोयल जी का साक्षात्कार

1. भाषा तथा संस्कृति की विविधता, देश के विभिन्न प्रांतों को किस प्रकार प्रभावित करती है?

हमारे लिए यह सौभाग्य की बात है कि हमारा देश भाषा एवं संस्कृति की दृष्टि से अत्यंत समृद्ध देश है। विशालता, उदारता तथा सहिष्णुता भारतीय संस्कृति की विशेषता है। यहां विभिन्न धर्म, रीति–रिवाज तथा अनेक समृद्ध भाषाएं हैं। भाषा एवं संस्कृति की इस विविधता के होते हुए इनमें एक अंतर्निहित एकता है व यही हमारे देश की विशेषता है।

2. हिंदी भाषा की वर्तमान स्थिति के बारे में आपके क्या विचार हैं?

हिंदी भाषा संख्या की दृष्टि से सर्वाधिक लोगों द्वारा बोली और समझी जाती है। हमें देश के हर प्रांत में एवं विश्व के प्रायः सभी देशों में हिंदी लिखने, बोलने अथवा समझने वाले लोग मिल जाएंगे। यही इसकी असली ताकत है। जैसा कि आपको पता ही है कि हमारे माननीय प्रधानमंत्री अंतर्राष्ट्रीय मंचों पर भी अक्सर हिंदी में ही अपनी बात रखते हैं। इससे अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हमें यह पहचान मिली है कि अब हम किसी विदेशी भाषा पर आश्रित नहीं हैं और अपनी भाषा में अपने विचार मजबूती से रखने में सक्षम हैं। सच तो यह है कि जिस देश ने अपनी भाषा को अपने राष्ट्रीय कार्यों में गौरवपूर्ण स्थान दिया है, उस राष्ट्र के विकास की गति निःसंदेह अत्यंत तीव्र रही है। हमें भी अपनी भाषाओं को अपने सभी कार्यों में गौरवपूर्ण स्थान देना है।

3. आपने अपनी पार्टी के प्रचारक के रूप में भी कार्य किया है, इस तरह के कार्यों में भाषा की भूमिका किस प्रकार होती है?

पार्टी के प्रचारक के रूप में मुझे देश के विभिन्न क्षेत्रों में जाना पड़ता है और वहां के स्थानीय समुदाय/निवासियों से संपर्क करना पड़ता था। किसी व्यक्ति के साथ मजबूत संपर्क स्थापित करने के लिए भाषा की बहुत महत्वपूर्ण भूमिका होती है। अपने और अपनी पार्टी के विचार दूसरे को समझाने के लिए ऐसी सरल और स्पष्ट भाषा का प्रयोग करना होता है जिससे सामने वाला बिना किसी परेशानी के आपकी बात आसानी से समझ पाए। हिंदी भाषी क्षेत्रों में जाकर हिंदी में अपनी बात करने में ज्यादा आसानी होती है।

4. आप स्वयं एक हिंदी भाषी प्रदेश से आते हैं, राष्ट्र स्तर पर हिंदी में कार्य करने में आपको किस प्रकार की चुनौतियों का सामना करना पड़ा?

प्रत्यक्ष रूप से मुझे हिंदी में कार्य करने में कोई विशेष परेशानी कभी नहीं हुई। कभी–कभी हिंदी लिखने और पढ़ने में कुछ परेशानी इसलिए सामने आती है क्योंकि ऐसे कुछ शब्द या वाक्यांश हिंदी में प्रयोग में लाए जाते हैं जो काफी कठिन होते हैं जिसके कारण उनका मतलब कई बार हिंदी भाषी व्यक्ति को भी समझ में नहीं आता। हिंदी के वास्तविक प्रचार–प्रचार के लिए यह आवश्यक है कि हम सरल और सहज हिंदी का प्रयोग करें। आजकल वेबसाइट/एप्स व नई तकनीकों के माध्यम भी हिंदी के प्रचार–प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं।

5. सरकारी काम–काज में राजभाषा हिंदी के प्रयोग से क्या आप संतुष्ट हैं?

सरकारी काम–काज में हिंदी का प्रयोग काफी हद तक बढ़ा है, किंतु हिंदी में काम करने के अभ्यास को बढ़ाने की आवश्यकता है। हिंदी को अनुवाद के

पिंजरे से निकाल कर मौलिक लेखन से जोड़ने की भी जरूरत है। जैसे अंग्रेजी में नोटिंग और पत्राचार आदि के प्रारूप उपलब्ध रहते हैं, वैसे ही हिंदी में भी इस प्रकार का कार्य गुणवत्तात्मक दृष्टि से जितना अधिक होगा और आसानी से उपलब्ध रहेगा तो हिंदी को अधिक बल मिल सकेगा। मेरी समझ में, विशेषकर तकनीकी और लीगल विषयों में काम करते हुए कार्मिकों को काफी समस्याएं आती हैं। इसके लिए उनके साथ बैठ कर काम करना होगा ताकि जहां–जहां उन्हें जिस प्रकार की कठिनाइयां महसूस हों, उनका निराकरण किया जा सके, जैसे–जैसे उनकी इन समस्याओं का समाधान होता जाएगा, वैसे–वैसे राजभाषा हिंदी में काम बढ़ता जाएगा।

6. विद्युत मंत्रालय के अंतर्गत अनेक छोटी–छोटी इकाइयां कार्यरत हैं। इन कार्यालयों में राजभाषा के कार्यान्वयन को कैसे सुनिश्चित किया जा सकता है?

विद्युत मंत्रालय के अंतर्गत सभी कार्यालयों में बहुत अच्छा राजभाषा कार्यान्वयन किया जा रहा है। गत वर्ष भारत सरकार द्वारा उत्कृष्ट राजभाषा कार्यान्वयन के लिए दिए जाने वाला सर्वोच्च 'राजभाषा कीर्ति' पुरस्कार विद्युत मंत्रालय के अधीनस्थ एन.एच. पी.सी., पी.एफ.सी. आदि कई उपक्रमों को प्रदान किया गया था। इन संस्थाओं को यह पुरस्कार पिछले कई वर्षों से मिल रहा है। विद्युत मंत्रालय के अंतर्गत सभी कार्यालयों के बीच राजभाषा कार्यान्वयन का कार्य उत्तम तरीके से करने के लिए प्रतिस्पर्धात्मक वातावरण तैयार गया गया है। इसके लिए राजभाषा शील्ड योजना लागू की गई है जिसके तहत उत्कृष्ट राजभाषा कार्यान्वयन करने वाले कार्यालयों को शील्ड व प्रशस्ति पत्र प्रदान किया जाता है। इसके अतिरिक्त हिंदी के कार्यान्वयन को सुनिश्चित करने के लिए निम्नलिखित उपाय किए जा सकते हैं :–

- हर कार्यालय के कार्मिक से वन–टू–वन बात की जाए और वह जिस प्रकृति का कार्य कर रहा है, उसके अनुसार उसे हिंदी में कार्य करने में पूरी सहायता की जाए।
- प्रत्येक कार्यालय अपने विभागों में प्रयुक्त होने वाले शब्दों की शब्दावली बना ले और साथ ही छोटे–छोटे वाक्यों को संकलित करके एक छोटी–सी पुस्तक जारी कर सकते हैं, ताकि कार्मिकों को अपने रोजमर्रा के काम में सुविधा हो सके।
- विभागीय स्तर पर विभागाध्यक्षों से संपर्क करके उनके विभाग में होने वाले कार्यों की प्रकृति के अनुरूप हिंदी में काम करने के लिए उन्हें प्रेरित किया जाए।
- हिंदी में कार्य करने वाले कार्मिकों के लिए एक सकारात्मक एवं प्रेरणास्पद वातावरण बनाया जाए जिससे वे प्रेरित हों।

7. ऊर्जा मंत्रालय द्वारा संचालित 'अरबन ज्योति अभियान' के अंतर्गत हिंदी भाषी प्रदेशों की वेबसाइट केवल अंग्रेजी में उपलब्ध है, हिंदी में जानकारी उपलब्ध कराने हेतु किस प्रकार के प्रयास किए जा रहे हैं?

'अर्बन ज्योति अभियान' की वेबसाइट www.urjaindia.com.in अंग्रेजी व हिंदी दोनों भाषाओं में उपलब्ध है।

8. तकनीक तथा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हिंदी के प्रयोग को कैसे बढ़ाया जा सकता है?

मेरा मानना है कि जिस देश ने अपनी भाषा को विज्ञान, प्रौद्योगिकी और शिक्षा का माध्यम बनाया है उस देश ने विज्ञान और तकनीकी में बहुत अधिक उन्नति की है। जैसे चीन, जापान आदि देशों में शिक्षा उनकी भाषा में करायी जाती है तथा जर्मनी, रूस आदि में तो अनुसंधान एवं विकास के कार्यों में भी उनकी अपनी ही भाषा का प्रयोग होता है। तकनीकी और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हिंदी के प्रयोग को बढ़ाने के लिए बहुत आवश्यक है कि शैक्षिक स्तर पर हिंदी में भी कुछ–न–कुछ जानकारी दी जाए, ताकि जब वे अपनी शिक्षा पूरी करने के बाद कार्यालयों में आएं तो हिंदी में कार्य करना उनके लिए सहज हो सके।

अंग्रेजी माध्यम से पढ़कर जब किसी को हिंदी में काम करने के लिए कहा जाता है तो ऐसा नहीं

कि उसका हिंदी से कोई विरोध होता है, लेकिन उसके भीतर आत्मविश्वास की कमी होती है। वह यह सुनिश्चित नहीं कर पाता कि तकनीकी और प्रौद्योगिकी संबंधी जो कार्य हिंदी में कर रहा है वह निश्चित रूप से ठीक है। इसके लिए फिलहाल एक उपाय यह भी किया जा सकता है कि तकनीकी और प्रौद्योगिकी विषय से जुड़े हुए संबंधित व्यक्ति मूल कार्य हिंदी में करें क्योंकि वह विषय का ज्ञाता है और उसे उस विषय से संबंधित सारी संकल्पनाओं की भी जानकारी है। बाद में भाषाविद् या भाषा के ज्ञाता उसे भाषा की दृष्टि से ठीक कर सकते हैं। इससे हिंदी में गुणवत्तात्मक कार्य हो सकेगा।

9. आपके अधीन दूसरे मंत्रालयों जैसे कोयला तथा खान के भी ज्यादातर कार्य आम जनता से जुड़े होते है, इसमें हिंदी भाषा की उपयोगिता को किस प्रकार देखते हैं?

आज के समय में सरकारी कार्यालयों में अधिक से अधिक कार्य हिंदी में ही किया जा रहा है। बैठकों तथा अन्य अवसरों पर विचार–विमर्श के दौरान आमतौर पर बातचीत हिंदी में ही की जाती है। इस बात का विशेष ध्यान रखा जाता है कि जन संवाद के लिए अनिवार्य रूप से हिंदी का भी प्रयोग किया जाए। कोयला एवं खान के विभिन्न उपक्रमों का खनन के कार्य में आम जनता से सीधा संपर्क होता है। इन क्षेत्रों की जनता के लाभ के लिए प्रधानमंत्री खनिज क्षेत्र कल्याण योजना जैसी योजनाओं को हिंदी एवं अंग्रेजी दोनों भाषाओं में तैयार किया गया है जिससे कि सभी लोग इसका लाभ उठा सकें। खानों में कार्य करने वाले कामगारों के सुरक्षा उपायों को ध्यान में रखते हुए आवश्यक सामग्री हिंदी में भी तैयार की जाती है। इससे इस क्षेत्र में हिंदी की उपयोगिता स्वतः ही सिद्ध हो जाती है।

10. विदेशी कंपनियों ने भारतीय बाजार में उपभोक्ताओं को भाषायी रूप में किस प्रकार प्रभावित किया है?

विदेशी कंपनियां शुरू में अपने विज्ञापन अंग्रेजी भाषा में देती थीं। परंतु धीरे–धीरे उन्हें समझ आ गया कि यदि समस्त उपभोक्ताओं तक पहुंचना है तो उपभोक्ता की भाषा और परिवेश को शामिल करके विज्ञापन बनाने होंगे। जैसे ही उन्हें यह बात समझ आई, उन्होंने अपने विज्ञापनों में सरल से सरल और आम बोलचाल की भाषा का प्रयोग करना शुरू कर दिया। आज बाजार में बने रहने के लिए यह बहुत जरूरी है कि उपभोक्ता की भाषा में ही अपने उत्पाद को उपभोक्ता तक पहुंचाया जाए। इस प्रकार कहा जा सकता है कि विदेशी कंपनियों ने भारतीय बाजार में भाषायी रूप से उपभोक्ताओं को प्रभावित किया है। गूगल, माइक्रोसॉफ्ट जैसी विदेशी कंपनियां भारत में व्यापार करने से पहले भली–भांति जानती हैं कि अपनी पकड़ बनाने के लिए उन्हें हिंदी अपनानी होगी। गूगल के मैप में आप देख सकते हैं कि अंग्रेजी के साथ–साथ हिंदी में भी स्थानों के नाम लिखे गए हैं। विदेशी कंपनियों के अन्य उत्पादों में भी हिंदी का विशिष्ट रूप देखा जा सकता है।

11. क्या रोजगार की दृष्टि से हिंदी भाषा–भाषियों को किसी प्रकार की परेशानियों का सामना पड़ता है?

रोजगार के लिए हिंदी भाषा–भाषियों को प्रत्यक्ष रूप से कोई परेशानी का सामना नहीं करना पड़ता। बल्कि हिंदी भाषा–भाषियों के लिए रोजगार के और अवसर पैदा हुए हैं जैसे अनुवादक, लेखक आदि। किंतु यह भी सच है कि वैश्वीकरण की वजह से केवल एक भाषा पर आश्रित रहकर रोजगार के अवसर सीमित हो जाते हैं। इसलिए यह आवश्यक है कि हिंदी भाषा का खूब प्रचार–प्रसार करें लेकिन साथ ही रोजगार के लिए दूसरी भाषाओं पर भी पकड़ रखें।

12. हिंदी भाषा की वैश्विक स्थिति के बारे में क्या कहना चाहेंगे। वैश्विक परिदृश्य में हिंदी–भाषियों के लिए क्या कोई असुविधा देखते हैं?

विगत दशकों में हिंदी का अंतर्राष्ट्रीय विकास बहुत तेजी से हुआ है। आज के वैश्वीकरण के युग में माननीय प्रधानमंत्री ने सभी अंतर्राष्ट्रीय मंचों पर हिंदी का प्रयोग कर प्रत्येक देशवासी का, विशेषकर हिंदी भाषी का सर गौरव से ऊंचा किया है। हिंदी की लोकप्रियता इस बात से देखी जा सकती है कि

बॉलीवुड की फिल्में सारे विश्व में चाव से देखी जा रही हैं। हिंदी के शब्द अंग्रेजी में भी प्रयोग होने लगे हैं– और यह सिर्फ भारत में ही नहीं बल्कि यूके में भी। विभिन्न देशों में रहने वाले भारतीय हिंदी को संपर्क भाषा के रूप में प्रयोग करते हैं इसमें कोई शक नहीं है कि बोलने और समझने के हिसाब से हिंदी पूरे विश्व में स्थापित हो चुकी है।

13. आपने सी ए तथा न्याय की पढ़ाई मुंबई विश्वविद्यालय से की है, इन क्षेत्रों में हिंदी की वर्तमान स्थिति क्या है तथा क्या हिंदी भाषा में इन विषयों की पढ़ाई में किसी प्रकार की कठिनाई होती है?

हिंदी का प्रयोग व्यवसायिक पाठ्यक्रम में कम ही होता है क्योंकि इनके लिए उच्च स्तर का मौलिक संदर्भ साहित्य हिंदी में उपलब्ध नहीं है जिसकी वजह से इस तरह के विषयों की पढ़ाई हिंदी में उपलब्ध नहीं है, जिसकी वजह से इसके विषयों की पढ़ाई हिंदी में करने में कुछ कठिनाई तो आती है। लेकिन अब परिस्थितियों में सुधार हो रहा है। ज्ञान–विज्ञान के सभी क्षेत्रों में शिक्षण, प्रशिक्षण एवं शोध को हिंदी माध्यम से बढ़ाने के उद्देश्य से वर्ष 2011 से मध्यप्रदेश शासन ने अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय की भोपाल में स्थापना की है। इस विश्वविद्यालय का नामकरण संयुक्त राष्ट्र संघ में पहली बार हिंदी की आवाज बुलंद करने वाले पूर्व प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी जी के नाम पर किया गया है। इस विश्वविद्यालय का उद्देश्य ऐसी युवा पीढ़ी का निर्माण करना है जो समग्र व्यक्तित्व विकास के साथ रोजगार कौशल और चारित्रिक दृष्टि से विश्वस्तरीय हो। यह पहल निश्चित रूप से संपूर्ण हिंदी प्रदेश के विद्यार्थियों के लिए एक वरदान सिद्ध होगी।

14. बैंकिंग सेवा के दौरान आपने किन क्षेत्रों में कार्य किया है तथा संपर्क की भाषा के रूप में हिंदी की भूमिका किस प्रकार की रही?

बैंकिंग एक ऐसा क्षेत्र है जो अन्य क्षेत्रों के साथ–साथ आम जनता से भी जुड़ा हुआ है, इसलिए यह आवश्यक है कि इसका काम–काज उस भाषा में हो जिसे लोग आसानी से समझ सकें। इस दृष्टि से हिंदी सर्वथा उपयुक्त है जो बैंकिंग क्षेत्र में एक संपर्क भाषा के रूप में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। हमारी सरकार ने आम जनता को बैंकिंग क्षेत्र से जोड़ने के लिए कई महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं। जनधन योजना के अंतर्गत 25 करोड़ से अधिक बैंक खाते खोलकर गरीब लोगों को मुख्य धारा में शामिल किया गया है। आम जनता की सुविधा के लिए भीम व अन्य एप्स को हिंदी भाषा में भी उपलब्ध कराया गया है जिससे कि अंतिम छोर का व्यक्ति भी इसका लाभ उठा सके।

15. हिंदी भाषा को जन–जन की भाषा बनाने के लिए किस प्रकार के प्रयासों की आवश्यकता है?

हमें अनुवाद पर निर्भरता खत्म करते हुए मूल लेखन पर अधिक बल देना चाहिए। मेरा मानना है कि मूल लेखन में जितनी सरल व सहज हिंदी का प्रयोग कर हम अपनी बात स्पष्टता से रख सकते हैं, वैसी समझ और भावना अनुवाद के माध्यम से नहीं आ पाती। यदि हम अनुवाद की भाषा से बचें तो हमें हिंदी का प्रयोग बढ़ाने में सहायता मिलेगी।

16. आपके मंत्रालयों के कार्यालय दक्षिण तथा पूर्वोत्तर भारत में भी हैं। इन क्षेत्रों में हिंदी को लोकप्रिय बनाने के लिए क्या उपाए किए जा सकते हैं?

भारत के कई क्षेत्रों में हिंदी मुख्य संपर्क भाषा के रूप में प्रयोग की जाती है। पूर्वोत्तर भारत में हिंदी की स्थिति बहुत अच्छी है। इसका उदाहरण अरुणाचल प्रदेश है जहां हिंदी प्रथम भाषा के रूप में पढ़ाई जाती है। अरुणाचल में कई स्थानीय भाषाएं हैं, इनके बावजूद दो इतर भाषाई समुदाय आपस में संपर्क भाषा के रूप में हिंदी का प्रयोग करते हैं। यह इस बात का प्रमाण है कि हिंदी वहां लोकप्रिय भाषा के रूप में स्थापित हो चुकी है। मेरा मानना है कि स्थानीय भाषाओं के साथ सौहार्द बनाए रखते हुए, स्थानीय भाषाओं का सम्मान करते हुए इन क्षेत्रों में हिंदी का प्रचार–प्रसार किया जाए।

आपका बहुत बहुत आभार

साक्षात्कार

शिक्षा नीति में भाषा पर विचार करना चाहिए

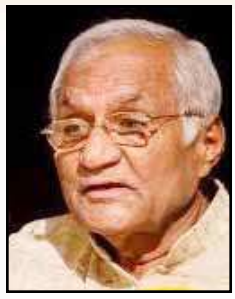

डॉ. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी

वरिष्ठ साहित्यकार और वर्तमान में साहित्य अकादमी, नई दिल्ली के अध्यक्ष डॉ. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी का जन्म सन् 1940 में उत्तर प्रदेश के कुशीनगर जिले में हुआ था। गोरखपुर विश्वविद्यालय से सेवानिवृत्त होने के बाद डॉ. तिवारी पूर्णतया साहित्य को समर्पित हैं तथा साहित्य संवर्धन, संरक्षण की दिशा में उल्लेखनीय कार्य कर रहे हैं। अपने उत्कृष्ट कार्यों के लिए डॉ. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी को विभिन्न संस्थानों द्वारा सम्मानित एवं पुरस्कृत किया गया है। प्रस्तुत हैं राजभाषा, हिंदी पर केंद्रित साक्षात्कार के कुछ अंश ... ...

राष्ट्रीय संदर्भ में विभिन्न बोलियों और भाषाओं को किस प्रकार देखते हैं?

जहाँ तक भाषाओं और बोलियों का सवाल है, अपनी अभिव्यक्ति के लिए वे सभी बहुत ही महत्वपूर्ण और जरूरी उपकरण हैं और उन सबको एक समान दर्जा देना चाहिए। संख्या के आधार पर किसी को छोटा–बड़ा मानना ठीक नहीं है। आत्माभिव्यक्ति के लिए सभी बोलियां एवं भाषाएं वहां के निवासियों एवं क्षेत्रों के लोगों के लिए एक समान जरूरी हैं। उदाहरण के लिए संथाली भाषा है या कोंकणी है या डोगरी हैं, देखने में ये कम लोगों द्वारा बोली जाती है, इन भाषाओं को दूसरी भाषाओं जैसे बांग्ला, असमिया, उर्दू या अंग्रेजी की तुलना में छोटा समझना या कम महत्व देना बिल्कुल ठीक नहीं है। सबको समान महत्व मिलना चाहिए। हिंदी भाषा की लगभग 50 बोलियां है, लेकिन बहुत से लोग हैं सुदूर क्षेत्रों में जो अपनी बोली में ही अपनी अभिव्यक्ति करते हैं, वे बोली कम महत्वपूर्ण नहीं हैं। भाषाओं और बोलियों की संख्या भारत में बहुत ज्यादा है। संसार में यही एक ऐसा देश है जिसमें सबसे ज्यादा भाषाएं एवं बोलियां हैं। खासतौर से भारत का जो उत्तर पूर्व क्षेत्र है, वहां तो हर कबीले की अपनी बोली है, थोड़ी–थोड़ी दूर पर बदलती भाषा है। कोशिश यह होनी चाहिए कि उनका संरक्षण हो, वे लुप्त न होने पाएं।

हिंदी भाषा इन सभी भाषाओं में किस प्रकार संपर्क भाषा के रूप में स्थापित है?

एक तो भारत के दस, ग्यारह राज्यों की प्रमुख भाषा हिंदी है। दूसरे कम–से–कम इतने ही राज्यों की भाषाओं का संस्कृत से संबंध है जिनसे हिंदी भी निकली है। इस तरह से 20–22 राज्यों में हिंदी या तो अपने कारण या अपनी पूर्व परंपरा की भाषा से उपजी होने के कारण, जैसे बांग्ला, गुजराती, मराठी ये सब संस्कृत रूप की भाषा हैं, संस्कृत जड़ वाली भाषाएं हैं, चलन में हैं। जो भाषाएं संस्कृत स्रोत से निकली हैं वे भी हिंदी को महत्व देती हैं और समझती हैं। उन भाषाओं में भी हिंदी का महत्व है। तो इस प्रकार से लगभग इस देश का 90 प्रतिशत हिस्सा आज भी हिंदी

समझता है और हिंदी के द्वारा देश के किसी भी हिस्से में आप को जरूरी कार्यों में कोई कठिनाई नहीं होगी। इसलिए इस देश में अगर कोई संपर्क भाषा हो सकती है, वो हिंदी ही हो सकती है। जिसे हमारे महापुरुषों ने भी स्वीकार किया है। महात्मा गांधी, सुभाष चंद्र बोस तथा दूसरे अहिंदी भाषी लोगों ने इसीलिए स्वाधीनता आंदोलन की भाषा हिंदी रखी। हिंदी में ही उन्होंने जनता से संपर्क किया। इसमें कोई संदेह नहीं कि हिंदी सभी भाषाओं में ज्यादा व्यापक है, इस देश की संपर्क भाषा है और होने लायक भी है।

सरकारी कार्यालयों में हिंदी की स्थिति को आप किस प्रकार देखते हैं?

जो सरकारी कार्यालय हिंदी प्रदेशों में हैं उनमें तो हिंदी में काम होता है, अगर कोई कठिनाई है तो वो सिर्फ इसलिए कि वो अंग्रेजी में काम करने में अभ्यस्त हैं, उनके इस अभ्यास को तोड़ना है।

लेकिन उनकी मातृभाषा तो अंग्रेजी नहीं है फिर भी वह अंग्रेजी में कैसे अभ्यस्त हो जाते हैं?

जो राज–काज की भाषा होती है उसका बड़ा प्रभाव पड़ता है। अंग्रेजी से पहले फारसी भाषा थी तो कचहरियों में फारसी में ही सारे कामकाज होते थे, सारे दस्तावेज फारसी में लिखे जाते थे। सभी वकील उर्दू में, फारसी में बहस करते थे। जब अंग्रेजो का शासन हुआ और राज–काज की भाषा अंग्रेजी हुई तो अंग्रेजी में सारा काम चलने लगा। अभी तक हम उनका पूरी तरह हिंदीकरण नहीं कर पाए हैं। राज्य जिस भाषा को महत्व देते हैं उस भाषा का प्रचलन सरकारी काम–काज में बढ़ जाता है या होने लगता है। यही कारण है कि हमारे देश में अंग्रेजी में सरकारी काम होता है। मगर बहुत आसानी से उसका स्थान हटाया जा सकता है और देशी भाषाओं को वहां लागू किया जा सकता है।

देशी भाषा से आपका तात्पर्य?

देशी भाषाओं से मेरा तात्पर्य भारत की जो प्रमुख भाषाएं हैं, जो व्यवहार में हैं जिनमें से 22 को भारत सरकार ने अपनी 8वीं अनुसूची में रखा है। वे 22 भाषाएं महत्वपूर्ण भाषाएं हैं। देशी भाषाओं का मतलब यह भी है कि जैसे हिंदी प्रदेश में तो हिंदी में सारा काम हिंदी में होता है। लेकिन जो हिंदीतर प्रदेश हैं उनमें सारा काम–काज हिंदी में नहीं होता है। वे लोग अंग्रेजी की जगह हिंदी में या अपनी भाषाओं में जो अपनी देशी भाषाएं हैं, उन भाषाओं में काम–काज कर सकते हैं। इसमें कोई बहुत कठिनाई नहीं हैं।

संघ द्वारा हिंदी को राजभाषा का दर्जा प्राप्त है। सरकारी कार्यालयों में इस दायित्व का निर्वहन कैसे सुनिश्चित किया जा सकता है।

यह लोकतंत्र का देश है और भाषा का मसला बड़ा संवेदनशील मसला होता है। अगर किसी राज्य में हिंदी में कार्य करने में बहुत कठिनाई होती है तो उसमें मूलपत्र के साथ हिंदी पत्र लगाए जा सकते हैं। जैसे आपने तमिलनाडु चिट्ठी भेजनी है तो उनकी भाषा के साथ आप हिंदी लगा सकते हैं। अंग्रेजी के साथ आप हिंदी का अनुवाद लगा सकते हैं। हमारे यहां साहित्य अकादमी है, 24 भाषाओं को मान्यता मिली है, 24 भाषाओं में काम होता है। हम अंग्रेजी पाठ के साथ हिंदी पाठ लगा देते हैं या उसका अनुवाद हिंदी में कर देते हैं। तो ऐसा करना हमारे लिए उपयुक्त होगा और

भाषा चूंकि अत्यंत संवेदनशील मुद्दा है अतः उस पर किसी को बहुत ज्यादा आक्रोशित नहीं करना चाहिए।

साहित्य अकादमी द्वारा 24 भाषाओं में काम होता है। क्या हिंदी भाषा पर विशेष ध्यान दिया जाता है?

हमारा काम भाषा के लिए कम साहित्य के लिए ज्यादा होता है। सभी भाषाओं के साहित्य पर यह अकादमी विचार करती है। साहित्य अकादमी संस्था का मुख्य क्षेत्र तो साहित्य ही है इसलिए इसमें भाषा का बहुत अधिक सवाल नहीं उठता है फिर भी हम लोग यह कोशिश करते हैं कि इसकी बैठकों, जिन्हें हम लोग जनरल काउंसिल कहते हैं, उसमें हिंदी का इस्तेमाल किया जाये और लिखने पढ़ने का सामान्य प्रपत्र भी हिंदी में ही होता है। लेकिन जैसा मैंने कहा हमारा कार्य सभी 24 भाषाओं पर केंद्रित होता है।

भाषा की दृष्टि से वर्तमान में हिंदी भाषा के साहित्य के स्तर में कुछ बदलाव महसूस कर रहे हैं।

हिंदी साहित्य में भाषा की दृष्टि से यह बदलाव देखा जा सकता है कि सहजता की ओर लेखकों का ध्यान ज्यादा है। यानि पहले अपने बचपन में हम लोग संस्कृतनिष्ठ भाषा को अच्छा समझते थे, लेकिन अब यह धारणा बदल गई है। जब कोई कहानी अथवा कविता पढ़ते हैं तो उस कविता या कहानी की शब्दावली, उसकी भाषा आपको जनसमाज के निकट दिखाई पड़ेगी। उसमें आपको उर्दू के भी कुछ शब्द मिलेगे। उसमें संस्कृत की वह अलंकारिक व्यवस्था अब न के बराबर है। लेखकों की भाषा में अलंकार का प्रयोग खत्म होता जा रहा है। अतः हम कह सकते हैं कि हिंदी लेखन की भाषा की दृष्टि से जो गति है, वो सहजता की ओर है।

क्या यह सकारात्मक है?

निश्चित रूप से ये सकारात्मक है और ऐसा होना ही चाहिए।

आपने एक बहुत लम्बा समय साहित्य अकादमी को दिया है इसके कुछ अनुभव राजभाषा भारती के पाठकों तक साझा करना चाहेंगे?

साहित्य अकादमी बहुत महत्वपूर्ण संस्था है जो भारत की 22 नहीं 24 भाषाओं के साहित्य पर कार्य कर रही है। अकादमी ने 2 और भाषाओं को मान्यता दे रखी है जो राजस्थानी और अंग्रेजी है। अकादमी में 8 पूर्व की भाषाएं हैं, 8 उत्तर की भाषाएं हैं, 4 दक्षिण की भाषाएं हैं और 4 मध्य क्षेत्र की भाषाएं हैं। इन 24 भाषाओं में अनुवाद कराना, 24 भाषाओं के लेखकों को पुरस्कृत करना और हर भाषा क्षेत्र में अलग–अलग साहित्यिक कार्यक्रम करना साहित्य अकादमी के ये तीन मुख्य काम हैं। और मेरे कार्यकाल में इन तीनों में बहुत बढ़ोतरी हुई है। ये नहीं कि पिछले कार्यकाल की हम अवमानना करते हैं लेकिन आपको जानकर, आश्चर्य होगा कि मेरे कार्यकाल में 365 दिनों में 600 कार्यक्रम हुए हैं और हर 18 घंटे पर एक पुस्तक प्रकाशित हुई है। जिन स्थानों पर कार्यक्रम नहीं हुए थे, उन स्थानों पर कार्यक्रम करने का प्रयत्न किया गया। एक 'ग्रामालोक' कार्यक्रम है, जिसके अंतर्गत गांव तक पहुंचने का काम साहित्य अकादमी

करेगा। स्त्रियों के लिए 'अस्मिता' प्रोग्राम होता है। कभी कोई प्रवासी भारतीय आता है, उसके भी कार्यक्रम करवाए जाते हैं। इस प्रकार हमारा अनुभव यह है कि पूरी तरह से स्वायत्त रह कर साहित्य अकादमी ने साहित्य के क्षेत्र के काफी काम किया है।

भविष्य में अकादमी के कार्यों को किस प्रकार विस्तार देने का सुझाव देना चाहेंगे?

हम लोगों ने बच्चों पर काम करने के लिए 'बालसाहित्य' पर काम किया, 'युवाओं' की शिकायत थी कि उनकों पुरस्कार नहीं मिल रहा है, उनकी उपेक्षा हो रही है तो हम लोगों ने एक 'युवा पुरस्कार' पर भी काम किया है। यह मेरे कार्यकाल में शुरू हुआ, इनमें और अधिक कार्य की आवश्यकता है। भाषा की यदि बात करें तो अंग्रेजी सबके सामने चुनौती बनी हुई है। जो लोग हिंदी को एक भाषिक चुनौती मान रहे थे उन्ही के लड़के अपनी मातृभाषा नहीं बल्कि अंग्रेजी पढ़ते हैं। तमिलनाडु, कर्नाटक, केरल आदि के बच्चों को वहां का एजुकेशन सिस्टम बहुत नुकसान पहुंचा रहा है। सारे बच्चे प्रारंभिक शिक्षा अंग्रेजी के माध्यम से प्राप्त कर रहे हैं। अब उनके सामने अपनी भाषा में काम करने में भी कठिनाई पैदा हो रही है। सरकारी कार्यालयों की कठिनाई से ज्यादा बड़ी कठिनाई है, जो एक बड़ी चुनौती के रूप में भी हमारे सामने आने वाली है वह यह कि वे बच्चे बड़े होने के बाद अपनी–अपनी भाषा छोड़ कर अंग्रेजी में काम करेंगे। कई ऐसे लेखक मिलते हैं जो कहते हैं कि उनके लड़के उनकी लिखी किताबें अपनी भाषा में नहीं अंग्रेजी में पढ़ना चाहते हैं। जैसे मुझे एक कन्नड़ लेखक मिले, उन्होंने कहा कि हमारे परिवार के बच्चे कहते हैं कि आपका उपन्यास अंग्रेजी में पढ़ने को कैसे मिलेगा। यह बहुत बड़ी चुनौती है। एजुकेशन सिस्टम का नीचे जाना, शिक्षा की भाषा नीति के सामने एक चुनौती पैदा कर रही है। सारे हिंदी प्रदेश के बच्चे अंग्रेजी में प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। अब वो जानते ही नहीं कि हिंदी के अंक, हिंदी के महीने आदि कैसे लिखेंगे। तो मुझे लगता है कि सरकार की शिक्षा नीति में भाषा पर विचार करना चाहिए।

राजभाषा विभाग द्वारा किए जा रहे प्रयासों को किस प्रकार और प्रभावशाली बनाया जा सकता है?

राजभाषा विभाग का क्षेत्र सरकार के कार्यालयों में राजभाषा का प्रभावी कार्यान्वयन सुनिश्चित करना है जिसमें उल्लेखनीय प्रगति हो रही है। विभाग अपने कार्य को बखूबी कर रहा है। विभागीय निरीक्षण टीमें जाती हैं, कार्य को देखती हैं और आवश्यकतानुसार कार्रवाई करती हैं। कुछ पुरस्कारों की अच्छी योजनाएं भी राजभाषा विभाग द्वारा संचालित की जा रही हैं जिससे लोगों को प्रेरणा और प्रोत्साहन प्राप्त होता है। विभागीय लोगों का उत्साहवर्धन भी आवश्यक है, इस दिशा में भी प्रयास होते रहने चाहिए। सबसे महत्वपूर्ण कार्य जो मुझे लगता है कि राजभाषा विभाग द्वारा करने की आवश्यकता है वह है शिक्षा नीति में बदलाव, जिसके लिए संबंधित मंत्रालय से विचार–विमर्श करना चाहिए।

आपका बहुत–बहुत आभार

साक्षात्कारकर्ताः डॉ. धनेश द्विवेदी

वर्तमान हरियाणा का साहित्यिक अवदान

प्रोफेसर लालचन्द गुप्त 'मंगल'

प्रथम नवम्बर, 1966 ई. को, सत्रहवें स्वतंत्र राज्य के रूप में, स्वाधीन भारत के मानचित्र पर उदित, वर्तमान हरियाणा का इतिहास–भूगोल तो मात्र 50 वर्ष पुराना ही है, लेकिन, प्रस्तुत लेख में, हमारा उद्देश्य गत लगभग एक हजार वर्ष में, राष्ट्रीय स्तर पर रचित हिंदी–साहित्य की समानता में, प्रागैतिहासिक काल से लेकर अब तक, हरियाणा के हिंदी–साहित्य, विशेषकर वर्तमान हिंदी–साहित्य, की प्रमुख उपलब्धियों को मूल्यांकित–रेखांकित करना है, ताकि इस प्रदेश के साहित्यिक अवदान को हिंदी–साहित्येतिहास में समुचित स्थान मिल सके।

आपगा, दृषद्वती और सरस्वती नदियों के मध्यवर्ती/तटवर्ती भूखंड 'हरियाणा' को आदि–सृष्टि का उद्गम–स्थल माना जाता है। संसार के प्राचीनतम–उपलब्ध ग्रंथ ऋग्वेद में (8.25.22) हरियाणा प्रदेश का स्पष्ट उल्लेख हुआ है– ''ऋज्रमुक्षण्यायने रजनं हरयाणे। रथं युक्तम् असनाम सुषामणि।'' दिल्ली के निकट सारवान गांव में की गई खुदाई से प्राप्त एक प्राचीन शिलालेख (विक्रमी संवत् 1385, फाल्गुन शुक्ला–सप्तमी, मंगलवार) में इस प्रदेश को 'धरती का स्वर्ग' कहा गया है–''देशोऽस्ति हरयाणाख्यः पृथिव्यां स्वर्ग सन्निभः।'' संस्कृत वाङ्मय के अनुसार, यह भूमि तीनों लोकों में सर्वश्रेष्ठ है। यही वह क्षेत्र है, जो संसार में 'बहुधान्यक' संज्ञा से अभिहित हुआ है। यहां प्रवहमान सदानीरा सरस्वती को 'विष्णु की जिह्वा' और 'ब्रह्मा की पुत्री' कहा गया है। मानव जाति की उत्पत्ति जिस वैवस्वत मनु से हुई बताई जाती है, वह इसी प्रदेश के राजा थे और, 'अवन्ती सुन्दरी कथा' के अनुसार, स्थाण्वीश्वर (थानेसर–कुरुक्षेत्र) के निवासी थे। इसी प्रदेश के 'सन्निहित सरोवर' में वह अंडा विद्यमान था, जिससे प्रजापिता ब्रह्मा जी उत्पन्न हुए थे–''यस्मिन् स्थाने स्थितं हयण्डं तस्मिन् सन्निहितं सरः। अण्डमध्ये समुत्पन्नां ब्रह्मा लोकपितामहः।।'' और उन्होंने इसी क्षेत्र के पृथुदक् नगर (पिहोवा) में अवस्थित ब्रह्मयोनि–तीर्थ के तट पर चतुर्वर्ण की रचना की थी। हरियाणा की उत्तर पूर्वी सीमा में अवस्थित शिवालिक–उपत्यका से पिंजौर–कालका के निकट प्राग्हड़प्पा, हड़प्पा और परवर्ती–हड़प्पा संस्कृति के जो जीवाश्म/अवशेष/उपकरण मिले हैं, उनसे भी इस क्षेत्र में आदिमानव के प्राचीनतम अस्तित्व पर महत्वपूर्ण प्रकाश पड़ा है। वाग्देवी–वीणावादिनी सरस्वती की भी इस भूमि पर विशेष अनुकंपा रही है। फलस्वरूप चिन्तन और सृजन की इस आदि–भूमि 'ऋग्वेद' आदि वेदों, वेदांगों, महाभारत (भगवत्गीता सहित), मारकण्डेय, वामन आदि पुराणों, सांख्यदर्शन, अष्टाध्यायी, नाट्यशास्त्र, मनुस्मृति और कादम्बरी आदि महान् ग्रंथों का प्रणयन हुआ, विश्वविख्यात विद्या–केन्द्रों/ऋषि–कुलों की स्थापना हुई और साहित्य–कला का बहुमुखी विकास हुआ। संक्षेप में आर्य संस्कृति, वैदिक वाङ्मय और ब्राह्मण–साहित्य की ज्ञानपीठ के रूप में ख्याति–प्राप्त यह प्रदेश, निस्संदेह, अनादि काल से ही चिन्तन–सृजन और भारतीय अध्यात्म, धर्म, दर्शन, संस्कृति एवं साहित्य का सर्जक–पालक रहा है।

यदि हरियाणा में रचित हिंदी–साहित्य के सन्निकट साहित्यिक परिवेश पर दृष्टिपात करें, तो सर्वप्रथम हमारा परिचय 'प्रियदर्शिका', 'रत्नावली'

और 'नागानन्द' के प्रणेता हर्षवर्द्धन से होता है। कुरुक्षेत्र–सम्राट् हर्षवर्द्धन का युग (606–646 ई.) भारतीय इतिहास का गौरव–मानदंड माना जाता है। जहां उन्होंने स्वयं कालजयी साहित्य का सृजन किया, वहीं अन्य साहित्यकारों को भी प्रेरित–प्रोत्साहित किया। 'कादम्बरी', 'हर्षचरित' ओर 'पार्वती परिणय' का प्रणेता बाणभट्ट इसी राज्य का निवासी और हर्षवर्द्धन का दरबारी कवि था। बाण भट्ट–पुत्र भूषण भी एक प्रतिभाशाली साहित्कार था। 'मयूरशतक', 'सूर्यशतक' और 'मातंगदिवाकर' का रचयिता मयूर यहीं का रहने वाला था। नाटककार धावक भी हर्ष की राजसभा का सदस्य था। इसी सभा के एक और सदस्य गुणप्रभ (बौद्ध विद्वान् वसुबंधु के शिष्य) द्वारा रचित 'तत्त्वसंदेश शास्त्र' अपने समय की एक अत्यन्त प्रसिद्ध कृति है। गुणप्रभ के शिष्य मित्रसेन ने ही ह्वेनत्सांग को बौद्ध धर्म में दीक्षित–पारंगत किया था। बाणभट्ट ने अपने 'हर्षचरित' में हरियाणा के पुष्पदन्त–कृत 'महापुराण' का तो उल्लेख किया ही है, वहां के वायुविकार (प्रकृत–कवि) तथा वेणीभारत (लोकभाषा–कवि) की भी चर्चा की है। इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि हिंद–साहित्य के शुभारंभ की पूर्व–संध्या तक हरियाणा में साहित्य–सृजन कली एक सुदीर्घ–समृद्ध परंपरा विद्यमान थी।

आपको यह जानकर सुखद आश्चर्य होगा कि हिंदी में साहित्य–सृजन का श्रीगणेश भी हरियाणा से ही हुआ है। संवत् 1015 के आस–पास अपभ्रंश के अंतिम और पुरानी हिंदी के प्रथम कवि के रूप में जिस पुष्य/पुष्प/पुष्पदंत का नाम लिया जाता है, वह रोहतक के निवासी थे। चार ग्रंथों (महापुराण, जसहरचरिउ, णायकुमारचरिउ, देशज शब्दों का एक कोश) के प्रणेता महाकवि पुष्प जैन–मतावलम्बी ब्राह्मण, महान् पण्डित और प्रतिभाशाली कवि थे तथा अपने नाम के साथ 'अभिमानमेरु', 'काव्यरत्नाकर' व 'कविकुलतिलक' आदि विशेषण लगाते थे। श्री अगरचन्द नाहटा ने श्रीधर (बारहवीं शती–उत्तरार्द्ध) को हिंदी का प्रथम कवि माना है। चार तीर्थंकरों (चन्द्रप्रभ, शान्तिनाथ, पार्श्वनाथ एवं वर्द्धमान महावीर) पर चार चरितकाव्य लिखने वाले श्रीधर ने अपना परिचय देते हुए लिखा है कि वह हरियाणा के निवासी हैं, अग्रवाल–कुल में जन्में हैं और विल्होदेवी–गोल्ह की संतान है। इधर पण्डित चन्द्रकांत बाली ने फरीदुद्दीन शकरगंज (शेख–उल–इस्लाम मौलाना दीवान बाबा फरीद–उद्–दीन–गंज–ए–शकर सुलेमान अजोधनी उर्फ बाबा फरीद (तेरहवीं सदी) को हिंदी का प्रथम कवि घोषित किया है।

वर्तमान हरियाणा के साहित्यिक परिदृश्य की झलक पाने से पहले प्राचीन हरियाणा के उन महान् हिंदी–हरियाणवी साहित्यकारों के प्रति विनम्र श्रद्धांजलि अनिवार्य हो जाती है, जिसके कृपा–प्रसादस्वरूप वर्तमान पीढ़ी ने चलना–बढ़ना सीखा है। इन प्रमुख मनीषियों में, कालक्रमानुसार, सर्वश्री पुष्पदंत, श्रीधर, शेख फरीद्, महाकवि सूरदास, कुछ अंशों में गोस्वामी तुलसीदास भी, गरीबदास, गुलाबसिंह, संतोखसिंह, निश्चलदास, साहिबसिंह, 'मृगेन्द्र', अल्ताफ हुसैन 'हाली' पानीपती, अहमदबख्श थानेसरी, शम्भूदास, बालमुकुन्द गुप्त, माधवप्रसाद मिश्र, विश्वंभरनाथ शर्मा कौशिक, तुलसीदास शर्मा 'दिनेश' और लखमीचन्द आदि गण्य हैं। अब मैं वर्तमान हरियाणा के उन प्रमुख हिंदी–साहित्यकारों की उपलब्धियों को रेखांकित करना चाहता हूँ, जो उन्हें हिंदी–साहित्य में उचित स्थान दिलाने में सर्वथा समर्थ–सक्षम हैं–

1. सर्वश्री विष्णु प्रभाकर, निशांतकेतु, यशपाल वैद, राजेन्द्रमोहन भटनागर, चन्द्रकांता, सुनीता जैन, अमृतलाल मदान, राकेश वत्स, स्वदेश दीपक, ज्ञानप्रकाश विवेक, विकेश निझावन, रामनिवास 'मानव', घमण्डीलाल अग्रवाल, माधव कौशिक, रोहिणी अग्रवाल और भगवानदास मोरवाल आदि का, अपने–अपने क्षेत्रों में, राष्ट्र स्तरीय योगदान जग–जाहिर है। इसलिए इन्हें हरियाणा की हदबंदी में ही जकड़े रखना

न्यायोचित नहीं है। इन पर तो अलग से विस्तृत चर्चा–परिचर्चा अपेक्षित है। फिर भी, इनमें से दो–चार साहित्यकारों का यथाप्रसंग उल्लेख किया जा रहा है।

2. जयनाथ 'नलिन', हर दृष्टि से, हरियाणा के जयशंकर प्रसाद हैं।

3. पाश्चात्य जगत में मुंशी प्रेमचन्द को सर्वप्रथम मान्यता दिलाने वाले और 'अमर कथाकार प्रेमचन्दः विशिष्ट जीवनी', 'कमल का मज़दूरः प्रेमचन्द', 'प्रेमचन्द की आत्मकथा' तथा 'प्रेमचन्द के जीवनीकार की आत्मकथा' आदि 81 विशिष्ट ग्रंथों के प्रणेता मदनगोपाल के अनुपम योगदान की चर्चा करने के लिए चार–पांच शोधग्रंथों की आवश्यकता पड़ेगी।

4. जीवन्त भाषा और परिकृत–परिमार्जित शिल्प के आधार पर हिंदी गद्य–साहित्य को ठोस आधारभूमि प्रदान करने वाले मोहन चोपड़ा को हरियाणा का मोहन राकेश कहा जाता है।

5. कामायनी–पूर्व धरा के जन्म से लेकर मृत्यु तक का चित्रण होने के कारण छविनाथ त्रिपाठी–कृत 'धरा की यात्रा' महाकाव्य, सहज ही, प्रसाद–कृत 'कामायनी' का रूप–विस्तार है और निस्संदेह हिंदी–साहित्य की अन्यतम उपलब्धि है।

6. वर्तमान हरियाणा के प्रथम राज्यकवि, हिंदी 'रुबाई' के प्रवर्त्तक और हिंदी–वृत्तकाव्य के प्रस्तोता उदयभानु हंस समकालीन हिंदी–कविता के एक हीरक हस्ताक्षर हैं।

7. जब–जब पेप्सू, पंजाब और हरियाणा में गुरुमुखी लिपि में रचित हिंदी–साहित्य की पहचान–परख और मूल्यांकन का अवसर आएगा, श्री सत्पाल गुप्त को सबसे पहले याद किया जाएगा।

8. हरियाणा की सांस्कृतिक पहचान को राष्ट्रीय मंच प्रदान करने वाले देवीशंकर प्रभाकर के दो उपन्यास–'खड़गपुत्र' और 'गणपुत्र'–हिंदी की ऐतिहासिक उपन्यास–यात्रा के दो मील–पत्थर हैं।

9. गुरुमुखी लिपि में उपलब्ध हिंदी–साहित्य, विशेषकर साठ हजार छन्दों पर आधारित 'गुरुनानक प्रकाश' और 'गुरुप्रताप सूरज' पर प्रकाशवृत्त केंद्रित करने तथा इसी दिशा में आजीवन अनुसंधान–रत रहकर 'रीतिकाल का पुनर्मुल्यांकन' करने वाले जयभगवान गोपाल को हिंदी–संसार, चाहकर भी, भुला नहीं पायेगा।

10. 'मैंने नहीं लिखा महाभारत' (साक्षात्कार) और 'महाकाव्य हज़रत मुहम्मद' सहित छब्बीस कृतियों के रचयिता सुगमचंद 'मुक्तेश' का यह कथन सही है कि अपने विशिष्ट प्रकार की ये दोनों रचनाएं हिंदी–साहित्य में पहली बार लिखी गई हैं।

11. समकालीन कविता–परिदृष्य में 'सहज कविता' आन्दोलन के आरंभकर्त्ता, पुरोधा–कवि और आद्याचार्य सुधेश को हर कोई जानता है।

12. हिंदी उपन्यास–साहित्य के सृजन, शोध और समीक्षा में जीवन खपा देने वाले शाशिभूषण सिंहल, संभवतः विरले ही हैं।

13. हिंदी–साहित्य के प्रत्येक काल के प्रेरणा–स्रोतों के अन्वेषण, अखंड वैचारिक सातत्य के प्रतिपादन, प्रवृत्तियों के सर्वांगीण वैज्ञानिक–मनोवैज्ञानिक विवेचन–विश्लेषण, सांस्कृतिक एवं मूल्यात्मक दृष्टि से निर्वहण तथा पूर्ववर्ती हिंदी–साहित्येतिहास–ग्रंथों में रह गई ऐतिहासिक भूलों के निराकरण की दृष्टि से हरिश्चन्द्र वर्मा द्वारा लिखित 'हिंदी साहित्य का इतिहास', साहित्येतिहास–चिन्तन

और लेखन को, एक सर्वथा मौलिक तथा अनुपम दृष्टि प्रदान करता है।

14. यश गुलाटी ऐसे प्रथम आलोचक हैं, जिन्होंने अपने 'कविता और संघर्ष चेतना' ग्रंथ के माध्यम से 'प्रतिबंधित साहित्य' के ऐतिहासिक, राजनीतिक, सामाजिक और साहित्यिक परिप्रेक्ष्य एवं महत्व की जानकारी हिंदी–जगत् को प्रदान की है।

15. लीलाधर 'वियोगी' हरियाणा की वह महान् साहित्यक विभूति हैं, जिन्होंने संस्कृत में उपलब्ध समस्त पुराणों/उपपुराणों को सबसे पहले हिंदी में प्रस्तुत करके राष्ट्रव्यापी ख्याति अर्जित की है। महाकवि सूरदास पर प्रथम महाकाव्य–'सीही का संत'–लिखने का श्रेय भी आपको ही है। पुराख्यान और मिथकाधारित नौ खंडकाव्यों/एकार्थकाव्यों के प्रणेता–रूप में भी आप प्रथम पंक्ति में प्रथम हिंदी–साहित्यकार हैं। काव्य की दृष्टि से यदि आप हरियाणा के नरेश मेहता हैं, तो शिल्प की दृष्टि से 'दिनकर' और धर्मवीर भारती की युगलमूर्ति हैं।

16. लगभग 100 विविध विधात्मक ग्रंथों के माध्यम से हरियाणा के गौरवमय सांस्कृतिक इतिहास को पुनर्जागरित करने वाले जयनारायण कौशिक का एक–अकेला 'हरियाणवी–हिंदी कोश' ही उन्हें राष्ट्रीय पहचान दिलाने में समर्थ है।

17. हिंदी काव्यशास्त्र की स्वतंत्र अस्मिता की पक्षधर और व्याख्याकार के साथ–साथ पुष्पा बंसल द्वारा रचित 'प्रतिवाद्–पर्व' कथाकाव्य हिंदी में एक सर्वथा नवीन विधा (नाटक+उपन्यास+काव्य) की प्रथम कृति है।

18. अमरीकी भाषाविद् ल्युओनार्ड ब्लूमफील्ड द्वारा प्रतिपादित भाषा–विश्लेषण की पद्धति पर आधारित देवीशंकर द्विवेदी–कृत 'भाषा और भाषिका' हिंदी का पहला मौलिक ग्रन्थ है। उनकी 'देवनागरी' पुस्तक भी, पहली बार, देवनागरी लिपि का मौलिक एवं सुचिंतित विश्लेषण प्रस्तुत करती है।

19. साहित्य की प्रायः सभी प्रमुख विधाओं में 250 से अधिक ग्रंथों के प्रणेता और महाकवि सूरदास के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रथम उपन्यास–'सूरदास'–के रचयिता राजेन्द्रमोहन भटनागर अकेले हरियाणवी/भारतीय हैं, जिन्होंने साधिकार विपुल साहित्य का सृजन करके विश्व–मानवता की सोच और वसुधैव–कुटुम्बकम् की भावना को, राष्ट्रीय स्तर पर, सशक्त वाणी प्रदान की है।

20. 'कथा सतीसर' सहित दो दर्जन सर्जनात्मक ग्रंथों की लेखिका चन्द्रकांता ने, काश्मीर की पृष्ठभूमि पर, राष्ट्रीय–अन्तर्राष्ट्रीय आंतकवाद एवं उग्रवाद को लेकर, जिस साहित्य का प्रणयन किया है, वह सचमुच अनुपम और अद्वितीय है।

21. सिद्धान्त एवं व्यवहार, दोनों की दृष्टियों से, मधुसूदन पाटिल की व्यंग्यकारी के बिना, समकालीन हिंदी–व्यंग्य की कहानी आधी–अधूरी ही रहेगी।

22. हिंदी–नवगीत को राष्ट्रीय स्तर पर समृद्धतर करने में सर्वश्री कुमार रवीन्द्र, राधेश्याम शुक्ल और माधव कौशिक का नाम अग्रणी पंक्ति में लिया जाता है।

23. नन्दलाल मेहता 'वागीश'–कृत 'संस्कृति तत्व–मीमासा' ग्रन्थ इसलिए प्राथमिक श्रेय का अधिकारी है, क्योंकि इसमें संस्कृति–तत्व सम्बंधी अवधारणाओं को तो पहली बार, विशुद्ध तत्व–मीमांसन की उत्तीर्णता पर, स्वरूपित किया ही गया है, साथ ही, संस्कृति और सांस्कृतिक मूल्यों का भी निर्धारण किया गया है।

24. अस्सी से अधिक ग्रंथों के रचयिता और विपुल ज्ञान–राशि के भंडार बलदेवराज 'शांत' की पहचान एक शब्द–साधक, भाव–शोधक और विचार–विश्लेषक के रूप में सर्वविदित है।

25. पद्मश्री सुनीता जैन अपने 'सुनीता जैन : समग्र' (चौदह खंड) के साथ हिंदी में सर्वाधिक लेखन करने वाले महिला–साहित्यकार हैं। सुनीता जैन ने नारी–मन के उन पहलुओं को समग्रता से छुआ है, जिन पर अब तक कुछ–नहीं या मात्र–सांकेतिक ही लिखा गया था। मां का ऐसा वृहद् रूपक तो शायद ही किसी अन्य कवयित्री ने प्रस्तुत किया हो।

26. नाटक के प्रचलित–अप्रचलित रूप–रंगों एवं आकार–प्रकार पर शताधिक नाटकों की रचना करके अमृतलाल मदान ने समय के साथ तो कदमताल की ही है, हरियाणा में सर्वाधिक नाट्य–रचना का कीर्तिमान भी स्थापित किया है।

27. ''कानून का कबीर और ''अज्ञेय का पट्ठा'' (कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर') तथा ''वकील होते हुए भी इन्साफ की चिंता'' करने वाला ('अज्ञेय') विधि–श्री पवन चौधरी 'मनमौजी' हिन्दुस्तान की कानून–कचहरी की कीकर पर, हिंदी–माध्यम से, विविध विधाओं के साहित्यिक फल–फूल उगाने वाला पहला हिंदुस्तानी है।

28. लघुकथा संबंधी चिन्तन–सृजन, स्वरूप–निर्धारण, शोधन–समीक्षण और सम्मान–प्रकाशन के क्षेत्र में सर्वश्री रूप देवगुण और अशोक भाटिया की भूमिका सदैव अग्रणी रहेगी।

29. लगभग दो दर्जन ग्रंथों के प्रणेता, सिद्ध नाट्यसमीक्षक और प्रख्यात नाट्यकवि लक्ष्मीनारायण भारद्वाज ने आठ नाट्यकाव्य लिखकर एक नया राष्ट्रीय कीर्तिमान स्थापित किया है।

30. कविता के रंगपाठ की परिकल्पना, सैद्धान्तिकी, प्रयोग और मंचन को हिंदी–जगत से परिचित करवाकर कँवलनयन कपूर ने राष्ट्रीय स्तर पर एक साहित्यिक धमाका किया है। 'लघुनाटक' एवं 'एकल पात्रीय नाटक' की अवधारणा, संरचना और प्रस्तुति–कला भी केवल इन्हीं के खातों में दर्ज है। सामाजिक प्रतिबद्धता से प्रारंभ करके अध्यात्म के संदर्भों, रहस्यों और आयामों को उद्घाटित करने में भी आपको अद्वितीय भूमिका है।

31. व्यक्तित्व और कृतित्व, उपलब्धियों और सीमाओं, सभी दृष्टियों से, बैजनाथ सिंहल हरियाणा के 'अज्ञेय' हैं।

32. लगभग बारह सौ पृष्ठों पर आधारित संतोष गोयल का 'हिंदी उपन्यासकार कोश', अकेला ही उनकी राष्ट्रीय ख्याति के लिए पर्याप्त है।

33. व्यवस्था–विरोध के आदि–गजलकारों में गण्य चन्द्र त्रिखा को, उनके भारत–विभाजन संबंधी साहित्य–सृजन के लिए, 'झूठा–सच' और 'तमस' की परम्परा में, अवश्यमेव याद किया जाएगा।

34. मध्यम वर्गीय परिवारों के जीवन्त चितेरे और 'पुष्पगंधा' पत्रिका के यशस्वी मालिक–प्रकाशक–सम्पादक विकेश निझावन ने हरियाणा की समकालीन हिंदी–कहानी और कविता को राष्ट्रीय पहचान दिलाने में अपना स्मरणीय योगदान दिया है।

35. सोलह कविता–संग्रहों सहित लगभग तीन दर्जन ग्रंथों के प्रणेता सुभाष रस्तोगी की कविता, समकालीन हिंदी कविता–परिदृश्य में, एक प्रकाशवर्ष बनकर उपस्थित हुई है। सकारात्मक मूल्यबोध उनकी कविताई की विशिष्ट पहचान है और शब्द की क्रांतिकारी भूमिका के प्रति वे अत्यधिक आश्वस्त हैं। इस

दृष्टि से उन्हें, सहज ही, हरियाणा का अशोक वाजपेयी कहा जा सकता है।

36. अब तक विविध विधात्मक लगभग 100 कृतियों का प्रणयन कर चुके कथाकार–नाटककार मधुकांत की यह दिली–इच्छा है कि उन्हें स्वैच्छिक रक्तदान, अंगदान और स्वच्छ भारत–अभियान सम्बन्धी साहित्य–सृजन के लिए ही स्मरण किया जाए। ठीक भी है, क्योंकि अब यही लेखन उनकी राष्ट्रीय पहचान का आधार बन चुका है।

37. काव्य के अंतर्गत गजल, नवगीत और खंडकाव्य–सृजन में सफलतापूर्वक कलम चलाने वाले माधव कौशिक आज गजलकार दुष्यंतकुमार के असली वारिस हैं। भाषा और शिल्प के सर्वाधिक–सार्थक प्रयोगकर्ता इस गजलकार ने, गजल के लिए अब तक अनिवार्य समझी जाने वाली, इश्की–मुश्की शब्दावली का पूर्ण बहिष्कार किया है तथा उर्दू–अंग्रेजी शब्दों से परहेज रखते हुए, आम बोलचाल की भाषा में, हिंदी–गजल को अभिनव कलात्मक ऊंचाई प्रदान की है। इसीलिए उनकी गजलों की पहुंच अंतिम पंक्ति के अंतिम व्यक्ति तक है। बाल–साहित्य के अंतर्गत दो गजल–संग्रह और स्वगत–कथन शैली में दो खंडकाव्य लिखने का प्रथम श्रेय भी माधव कौशिक को ही जाता है।

38. 'हरियाणा में रचित सृजनात्मक हिंदी साहित्य' और 'हरियाणा में रचित हिंदी महाकाव्य' शोधप्रबंधों पर क्रमशः पीएच.डी. और डी. लिट्, उपाधि–प्राप्त डॉ. रामनिवास 'मानव' हरियाणा के समकालीन सृजनात्मक हिंदी–साहित्य के प्रथम शोधार्थी/अधिकारी विद्वान्, लघुकथा में 'समाचार–शैली' के प्रवर्त्तक और त्रिपदी काव्य–विधा के प्रतिष्ठापक कवि–आचार्य होने के साथ–साथ दोहा, बालगीत एवं लघुकथा–विधाओं के भी सशक्त राष्ट्रीय हस्ताक्षर हैं।

39. समकालीन हरियाणा में अब तक 30 महाकाव्यों का प्रणयन हो चुका है। इनमें से निरंजनसिंह 'योगमणि', राणाप्रताप 'गन्नौरी', छविनाथ त्रिपाठी, धर्मचन्द्र विद्यालंकार, लक्ष्मणसिंह, प्रेमनाथ 'प्रेमी', जयनाथ 'नलिन', भारतभूषण सांघीवाल, सारस्वतमोहन 'मनीषी', लीलाधर 'वियोगी' और परमानंद 'अधीर' ने एक–एक, उदयभानु हंस, अमृतलाल मदान, सुगनचन्द 'मुक्तेश' और ब्रह्मदत्त 'वाग्मी' ने दो–दो, रत्नचन्द्र शर्मा ने पांच और पुरुषोत्तमदास 'निर्मल' ने छह महाकाव्यों की रचना की है।

40. महाकाव्यों के ही समान रचे गए समकालीन 55 खंडकाव्यों/एकार्थकाव्यों की प्रामाणिक सूची मेरे पास है। इस विधा की उपलब्ध कृतियों में रामनिवास 'मानव', नरेन्द्र लाहड़, धर्मचन्द विद्यालंकार, माधव कौशिक, सुधेश और सुनीता जैन के दो–दो, भगवानदास 'निर्मोही' और रत्नचन्द्र शर्मा के तीन–तीन; राजेन्द्र 'नटखट' के सात और लीलाधर 'वियोगी' के नौ खंडकाव्य/एकार्थकाव्य विशेष उल्लेखनीय हैं।

41. वर्तमान हरियाणा में दोहा–सतसई परंपरा भी खूब फल–फूल रही है। यही कारण है कि तुलसीराम शर्मा 'दिनेश' की 'श्याम सतसई' के पश्चात् यहां हिंदी/हरियाणवी में अब तक 50 से अधिक सतसइयां/दोहावलियां प्रकाश में आ चुकी हैं। रक्षा शर्मा 'कमल', महेन्द्र शर्मा 'सूर्य', उदयभानु हंस, डॉ. सुधेश, मेजर शक्तिराज, राधेश्याम शुल्क, डॉ. नरेश, लक्ष्मणसिंह, रामकुमार आत्रेय, लक्ष्मीनारायण 'लक्ष्मी' हरिसिंह शास्त्री, श्यामसखा 'श्याम', चतरभुज बंसल और पुरुषोत्तमदास 'निर्मल'

की एक–एक; बलदेवराज 'शांत' एवं सत्सवीर नाहड़िया की दो–दो सतसइयों के साथ–साथ रामनिवास 'मानव', हरेराम 'समीप', रोहित यादव और राजेन्द्र 'नटखट' के सहस्राधिक–सहस्राधिक दोहे भी हमारी विशिष्ट उपलब्धि हैं। सारस्वतमोहन 'मनीषी' और हरिकृष्ण द्विवेदी ने तो पांच–पांच सतसइयों की रचना करके नए कीर्तिमान ही स्थापित कर दिए हैं। इसी क्रम में अमरीकसिंह, सतपालसिंह चौहान 'भारत', नरेन्द्र आहूजा 'विवेक', देवेन्द्र गोयल, घमंडीलाल अग्रवाल, कमलेश सगवाल, प्रद्युम्न भल्ला, रघुविन्द्र यादव और कृष्णलता यादव प्रभूति दोहाकार भी अपने पांव जमा चुके हैं।

42. इसी कड़ी में लगभग दो दर्जन 'नाट्यकाव्य' भी हमारी विशेष पूंजी हैं। इनमें से लक्ष्मीनारायण भारद्वाज के पांच; कुमार रवीन्द्र के तीन; सुगनचन्द 'मुक्तेश', वेद 'व्यथित' और अमृतलाल मदान के दो–दो तथा जयनाथ 'नलिन'–कृत 'तिमिर भंवर से उगा चांद' राष्ट्रीय स्तर पर जाने जाते हैं। 'लंबी कविता' के अंतर्गत हरिश्चन्द्र वर्मा, कंवलनयन कपूर, कुमार रवीन्द्र, सुभाष रस्तोगी और विकेश निझावन ने सिद्धि प्राप्त की है।

43. नव्यतर विधाओं के अंतर्गत, जहाँ तक आत्मकथा, यात्रा, जीवनी, संस्मरण एवं साक्षात्कार आदि का प्रश्न है, यहां भी हरियाणा का रचनाकार बराबर अपनी उपस्थिति दर्ज करवा रहा है। दो दर्जन से अधिक आत्मकथाओं में सर्वश्री मदनगोपाल, उदयभानु हंस, पवन चौधरी 'मनमौजी', स्वदेश दीपक, विष्णु प्रभाकर, सुमेरचन्द, लीलाधर 'वियोगी', राजवीर देसवाल और शमीम शर्मा की आत्मकथाएं ध्यान आकृष्ट करती हैं। यात्रा–साहित्य के अंर्गत तीस ग्रंथ तो प्रकाशित हो ही चुके हैं, पत्र–पत्रिकाओं में भी सर्वश्री राधेश्याम शर्मा, राजकिशन नैन और ओमप्रकाश कादियान आदि के हजारों–हजार पृष्ठ बिखरे पड़े हैं। पुस्तकालय प्रमुख यात्रा–साहित्य के अंतर्गत मोहन चोपड़ा, सुगनचन्द 'मुक्तेश', संधेश, जयनारायण कौशिक, उर्मिकृष्ण, बी.डी. कालिया 'हमदम', प्रदीप शर्मा 'स्नेही' और अनुराधा बेनीवाल की कृतियां गण्य हैं। हमारे यहां जीवनियां इतनी अधिक–मात्रा में रची गई हैं कि गणनातीत हैं। साक्षात्कार और स्मरण–लेखन में, इस समय, मुझे सर्वश्री सुगनचन्द 'मुक्तेश' और सुभाष रस्तोगी के नाम याद आ रहे हैं।

44. हरियाणा में बालसाहित्य भी प्रभूत मात्रा में लिखा गया है। इस कार्य में हमारी शताधिक साहित्य–सेवी लगे रहे/हुए हैं। फलस्वरूप सर्वश्री विष्णु प्रभाकर, इन्द्रा 'स्वप्न', हेमराज 'निर्मम', हरिश्चन्द्र वर्मा, उर्मिकृष्ण, राजेन्द्रमोहन भटनागर, राजकुमार निजात, राजनिवास 'मानव', मधुकांत, श्रीनिवास वत्स, माधव कौशिक, केशवचन्द्र बधावन, रामकुमार आत्रेय और कमला चमोला आदि–आदि द्वारा रचित बाल–साहित्य अपनी राष्ट्रीय पहचान बना चुका है। हमारे घमंडीलाल अग्रवाल तो बाल–साहित्य के पर्याप्त ही हैं। उनके द्वारा अब तक लिखित/सम्पादित 66 ग्रंथ प्रकाशित हो चुके हैं, जो स्वयं में एक कीर्तिमान हैं।

45. नव्यतम विधाओं (नारा, क्षणिका, द्विपदी, त्रिपदी, तिक्का, हाइकु, माहिया, ताँका, सेदोका, चोका, हाइबन, गद्यकाव्य और काव्योक्ति आदि) में भी हरियाणा का योगदान सराहनीय है। 'त्रिपदी' में जहां रामनिवास 'मानव' ने अपनी पहचान बनाई है, वहीं 'हाइकु' में डॉ. सुधेश, हरेराम 'समीप' और जयभगवान गुप्त 'राकेश' के अतिरिक्त सुदर्शन रत्नाकर सहित, लगभग

दो दर्जन महिला–रचनाकारों की भरी–पूरी भीड़ जुटी हुई है। 'काव्योक्ति' के अंतर्गत 758 छंदों पर आधारित, डॉ. मक्खनलाल तंवर की, 'बेटी–समसई' स्वयं में एक कीर्तिमान है। सरोज दहिया के 'हाइबन' अलग से ध्यान आकृष्ट करते हैं। इन विधाओं, विशेषकर 'गद्यकाव्य', 'हाइकु', 'तांका' और 'चोका' आदि के अंतर्गत बंसल ने एक विशिष्ट सिद्धि प्राप्त की है–पीरी पाई है। इस दृष्टि से उनके आधा दर्जन संकलन ('जीवन–कला', 'तोड़ो जंजीरें', 'संबंध–सिंधु', 'स्मृति–मंजरी', हे विहंगिनी', 'झाँका भीतर' आदि) रेखांकित किए जा सकते हैं। इन विधाओं पर, अपने सम्पादन में, 'हरिगन्धा' का एक विशेषांक (275, जुलाई 2017) निकालकर आपने ऐतिहासिक महत्व का कार्य किया है।

46. हरियाणा का महिला–लेखन भी पर्याप्त समृद्ध है और इसकी गूँज–अनुगूँज राष्ट्रीय स्तर पर कभी–भी, कहीं–भी, सुनी जा सकती है। वर्तमान हरियाणा में इन महिला–रचनाकारों की संख्या लगभग एक शतक तक पहुंच चुकी है। वरिष्ठ लेखिकाओं में सर्वश्री इन्द्र 'स्वप्न', शकुन्तला ब्रजमोहन, चन्दनबाला जैन, सुधा जैन, रक्षा शर्मा 'कमल', उषा अग्रवाल, उर्मिकृष्ण, चन्द्रकांता, सुनीता जैन, सुदर्शन रत्नाकर, सावित्री वशिष्ठ, संतोष गोयल, कमलेश मलिक, कमला चमोला, मुक्ता, कमल कपूर, संतोष धीमान और शील कौशिक आदि उल्लेखनीय भारी–भरकम प्रशासनिक दायित्वों का निर्वाह करते हुए स्तरीय साहित्य–सृजन के लिए समय निकाल लेना मुश्किल कार्य है परंतु हरियाणा में चमत्कार कर–दिखाया है सर्वश्री कुमुद बंसल, समेधा कटारिया, सुमिता मिश्रा और धीरा खंडेलवाल ने। कश्मीरीदेवी यदि दलित साहित्य का सृजन कर रही हैं तो शमीम शर्मा हरियाणवी हास्य–व्यंग्य के निखार–प्रसार में जुटी हुई है। नयी पीढ़ी में गण्य सर्वश्री संतोष गर्ग, आशमा कौल, ज्ञानीदेवी, मनजीत शर्मा 'मीरा', इन्दु गुप्ता, आशा खत्री 'लता', रश्मि बजाज, राजवंशी मान, अंजु दुआ जैमिनी, मीनाक्षी जिजीविषा, मंजु दलाल और किरण मल्होत्रा प्रभृति समकालीन समस्त सरोकारों पर केंद्रित विविध विमर्शीय साहित्य–सृजन में रत हैं। प्रोफेसर रोहिणी अग्रवाल के विशिष्ट अवदान को रेखांकित किए बिना इस संदर्भ में पटाक्षेप संभव नहीं है। स्त्री–विमर्श को पितृसत्तात्मक व्यवस्था का पुनरीक्षण स्वीकार करते हुए रोहिणी अग्रवाल ने हिंदी–आलोचना में पुरुष–वर्चस्व को तोड़ा है। आप अपनी कहानियों और आलोचना के माध्यम से स्त्री–विमर्श की सैद्धांतिकी तो गढ़ती ही हैं, शुष्क कही जाने वाली हिंदी–आलोचक में सर्जनात्मकता को गूंथकर उसे आस्वाद्य भी बनाती हैं। इस दृष्टि से राष्ट्रीय स्तर पर, अंगुलियों पर गिने जाने वाले रचनाकारों में, रोहिणी अग्रवाल का एक सम्मानित स्थान है।

47. हरियाणा में दलित–लेखन की जड़ें यहां के लोक–साहित्य में गहराई तक समायी हुई हैं। सांगों और गीतों पर आधारित एतद्विषयक एक दर्जन से अधिक भारी–भरकम ग्रंथावलियां, डॉ. राजेन्द्र बड़गूजर के सम्पादन में, प्रकाशित भी हो चुकी हैं। हिंद माध्यम में रचित यहाँ का दलित–लेखन भी अपनी राज्य/राष्ट्र–स्तरीय पहचान बना चुका है। उल्लेखनीय दलित–लेखकों में सर्वश्री रामेन्द्र जाखु, धनसिंह, भगवानदास मोरवाल, कश्मीरीदेवी, अभय मोर्य, मक्खनलाल तंवर, रमेश और राजेन्द्र बड़गूजर आदि गण्य हैं। कविवर प्रेमनाथ 'प्रेमी' द्वारा सन् 1992 में

रचित 'प्रायश्चित' महाकाव्य वर्णभेद–विरोध की पृष्ठभूमि पर लिखा जाकर हरियाणा के दलित लेखन में एक मील–पत्थर सिद्ध हुआ है।

48. सर्वांगीण हरियाणवी लोक–साहित्य के रचाव–सजाव, उभार–निखार और प्रचार–प्रसार में सर्वश्री मदनमोहन शास्त्री, भारतभूषण सांघीवाल, सुमेरचन्द, राजेन्द्रस्वरूप वत्स, कँवर हरियाणवी, जयनारायण कौशिक, लक्ष्मणसिंह, सावित्री वाशिष्ठ, रामकुमार आत्रेय, हरिकृष्ण द्विवेदी, सारस्वतमोहन 'मनीषी', चतरभुज बंसल और अनिल 'पृथ्वीपुत्र' का अनन्य–अद्वितीय योगदान हैं। हरियाणवी भाषा और साहित्य के सर्वेक्षण–संकलन, शोधन–समीक्षण और लेखन–प्रकाशन में डॉ. पूर्णचन्द शर्मा, डॉ. बाबूराम एवं डॉ. राजेन्द्र बड़गूजर ने ऐतिहासिक महत्त्व का कार्य किया है। हरिकृष्ण द्विवेदी–कृत 236 कुंडलिया छंदों का संकलन 'धूप–छाम', कँवर हरियाणवी का गजल–संग्रह 'तारे नवें–नवें से' और सुरेन्द्र आनंद 'गाफिल' के गीत, गजल, नाटक और व्याकरण संबंधी अनेक ग्रंथ वर्तमान हरियाणी विशिष्ट पूंजी है। इन क्षेत्र में डॉ. महावीर शास्त्री ने तो एक नया कीर्तिमान ही स्थापित कर दिया है। इस दृष्टि से 'जय हरियाणा' और 'राणी माद्री' (महाकाव्य), 'एक रपैया अर एक ईट (नाटक) तथा 'धणी होणै का मंतर' (लघुकथा) आदि कृतियां उल्लेखनीय हैं।

49. गत 50 वर्षों में हरियाणा में, हिंदी और हरियाणवीं में, स्तरीय भावानुवाद का भी उल्लेखनीय कार्य हुआ है। प्रमुख रूप से वाल्मीकि रामायण, श्रीमद्भगवद्गीता, दुर्गा सप्तशती और मुख्य उपनिषदों पर आधारित यह सामग्री सर्वश्री रामेश्वरदयाल शास्त्री, मदनगोपाल शास्त्री, सरिता वशिष्ठ, सत्यवीर नाहड़िया, हरिकृष्ण द्विवेदी, लक्ष्मण सिंह, कंवलनयन कपूर, पुरुषोत्तमदास 'निर्मल', भारतभूषण सांधीवाल, राजेन्द्र 'नटखट', परमानन्द अधीर, मनोज भारत और महेन्द्रपाल सारस्वत द्विवेदी 'काण्व' हरियाणवी आदि के माध्यम से सामने आयी है।

प्रस्तुत आलेख के अवलोकन से, मेरा विश्वास है, आपके सामने यह तथ्य स्वयं उजागर हो जाएगा कि अखिल भारतीय स्तर पर रचित हिंदी–साहित्य में काल और तद्गत यथार्थ की ऐसी कोई प्रवृत्ति, कथ्यगत कोई आयाम और शिल्पगत ऐसा कोई प्रयोग नहीं है, जो हरियाणा के साहित्यकार के पास उपलब्ध न हो। आप यह भी मान जाएंगे कि राष्ट्रीय साहित्यिक परिदृश्य में, अनेकानेक स्थलों पर, हरियाणा के साहित्यकारों का कद न केवल बहुत ऊंचा उठा है, बल्कि अनेक बार तो वे पहल करने के अधिकारी भी बने हैं। समकालीन संदर्भों में राष्ट्रीय एकता और अखंडता की यह माँग है कि देश के प्रत्येक अंचल में रचित महत्वपूर्ण साहित्य–सम्पदा की गुणवत्ता/महत्ता को रेखांकित किया जाए और उसे भारतीय साहित्य की मुख्य धारा में सम्मिलित किया जाए। तभी, सही अर्थों में 'सबका साथ : सबका विकास' की अवधारणा और 'भारतीय हिंदी–साहित्य' की परिकल्पना साकार हो सकेगी।

अध्यक्ष हिंदी विभाग, पत्रकारिता विभाग,
यूरोपीय भाषा विभाग, उर्दू फारसी विभाग,
कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र, हरियाणा,
पिन कोड–136118

सरल हिंदी और राष्ट्रीय एकता

प्रो. चतुर्भुज सहाय

सरल हिंदी और राष्ट्रीय एकता में गहरा संबंध है। हमारा देश विविधताओं से भरा हुआ है। जैसे एक वाटिका में नाना प्रकार के पुष्प खिले होते हैं, गुलमोहर, गुलदाउदी, चंपा, गेंदा, सदाबहार, गुलाब, बेला, मोंगरा, पारिजात, गुड़हल, चाँदनी, कनेर आदि, वैसे ही इस देश में नाना प्रकार के लोग, भाषाएँ भौगोलिक परिस्थितियां, खान–पान, पहिरावे, रीतिरिवाज, मान्यताएँ, पर्व आदि है। किंतु इस विविधता में समरसता का एक भाव है और इस भाव की अभिव्यक्ति हिंदी के माध्यम से होती है। देश के किसी कोने में चले जाइए हिंदी आपका साथ देगी। नागालैंड की राजधानी कोहिमा है। दूर स्थित इस राजधानी से भी दूर एक जगह है, मोकोकचुंग। हिंदी अध्यापकों के प्रशिक्षण के प्रसंग में मुझे वहां जाने का अवसर प्राप्त हुआ। मैं जहाँ ठहरा हुआ था वहाँ से अपने कार्य स्थान पर जा रहा था। रास्ते में विद्यालय जाते हुए एक बालक से भेंट हुई। मुझे यों ही उस बच्चे से हिंदी में बात करने की इच्छा हुई, यह समझते हुए भी कि वह शायद ही हिंदी में बात कर सके। किंतु मुझे यह देखकर सुखद आश्चर्य हुआ कि उस बच्चे ने मुझसे हिंदी में बिना किसी रुकावट या झिझक के बात की। सोचिए, सुदूर नागालैंड में सातवीं कक्षा में पढ़ने वाला छात्र एक हिंदी भाषी से हिंदी में सफलतापूर्वक बात कर सके। यह यथार्थ यहाँ उत्तर प्रदेश में बैठे हुए आदमी के लिए कल्पनातीत है। पूर्वांचल ही क्यों, देश के किसी कोने में जाइए, केरल हो, दीव हो, लेह हो, सिक्किम हो या अरुणाचल प्रदेश का कोई स्थान विशेष हो। हिंदी सबको एक सूत्र में पिरोये हुए है। सच तो यह है कि किसी शिखर पर चढ़ कर यदि आप पूरे देश को एक साथ देखना चाहते हो, देश के भूगोल को समझना चाहते हो, हिंदुस्तान का अर्थ जानना चाहते हो तो वह शिखर हिंदी है। यदि कोई देश का नेतृत्व करना चाहता है, चाहता है कि देश करवट बदले, उठे और अपने सोये हुए गौरव को पुनः प्राप्त करे तो उसे हिंदी का सहारा लेना होगा।

हिंदी और राष्ट्रीय एकता की बात ऊपर हुई। अब सरल हिंदी की बात है। भाषा की सरलता पर विचार करने से पूर्व भाषा के विशेषकर मानक भाषा के, प्रयोजन पर विचार कर लेना चाहिए। भावों एवं विचारों के संप्रेषण का भाषा एक सशक्त माध्यम है। भाषा प्रयोग की सफलता की पहली कसौटी यही है कि क्या वक्ता जो कहना चाहता है वह स्पष्ट और सटीक रूप में श्रोता तह पहुंचा या नहीं। भाषा को सरल बनाने के लिए हम भाषा की इस विशेषता को नजरअंदाज नहीं कर सकते। मानक भाषा का दूसरा प्रयोजन यह है कि वह एक बड़े भूभाग और एक लंबे कालखंड में लोगों के भावों और विचारों के आदान–प्रदान का माध्यम बन सके, इसलिए हमें भाषा की सरलता की बात करते समय उसके मानक रूप की रक्षा पर भी ध्यान देना होगा। हमें उसकी अभिव्यक्ति क्षमता तथा मानकता पर पूरा ध्यान देना होगा।

सरल हिंदी का क्या रूप हो, इसे समझने के लिए हमें भाषा के प्रमुख अंगों पर विचार कर लेना चाहिए। भाषा की सरलता से क्या अभिप्राय है? उच्चारण में सरलता या शब्दावली में सरलता या व्याकरणिक नियमों में सरलता या फिर तीनों में सरलता? भाषा के तीन प्रमुख अंग हैं, ध्वनियां, शब्द समूह तथा व्याकरण। भाषा मुख्यतः मौखिक होती है। संसार की सभी भाषाओं की ध्वनियां मुख्य रूप से दो भागों में विभक्त होती है, स्वर तथा व्यंजन। किंतु स्वर और व्यंजन अकेले स्वतंत्र रूप से अर्थवान नहीं होते, बल्कि इनका समूह सार्थक होता है। क् अ, म् अ्, अलग–अलग इन स्वरों या व्यंजनों का कोई मतलब नहीं है, किंतु इनके एक निश्चित क्रम

में एक साथ आने पर 'कमल' शब्द बनता है, जो अर्थवान है। स्वरों एवं व्यंजनों के अलावा हर भाषा में उच्चारणगत कुछ अन्य विशेषताएँ होती हैं, जो स्वर और व्यंजन से कम महत्वपूर्ण नहीं होतीं, जैसे उच्चारण में बल, विराम, वाक्योच्चारण की शैली इत्यादि। विचार करने की बात यह है कि क्या उच्चारण की दृष्टि से कोई भाषा सरल या कठिन होती है। या उच्चारण की दृष्टि से प्रयत्नपूर्ण किसी भाषा को सरल या कठिन बनाया जा सकता है। भाषाविदों के मत से ऐसा नहीं है। सरल और कठिन, ऐसा कोई विभाजन भाषाओं में नहीं किया का सकता। जो भाषा आती है, वह सरल है, जो भाषा नहीं आती है वह कठिन है। जो भाषा आती है वह हम धाराप्रवाह बोलते हैं, उसके शब्दों और वाक्यों का स्पष्ट उच्चारण करते हैं। शब्दावली भाषा का दूसरा महत्वपूर्ण अंग है। भावों और विचारों को व्यक्त करने के लिए हम मन में ही उपयुक्त शब्दावली का चयन करेते हैं। फिर शब्दों को व्याकरण के नियमों के अनुसार जोड़कर वाक्य बनाते हैं। तदुपरांत उसका उच्चारण करते हैं। यहां हमें यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि जिस तरह भाषा के उच्चारण नियम तथा व्याकरणिक नियम सीमित, किंतु सख्त होते हैं उस प्रकार शब्दों के प्रयोग के नियम सख्त नहीं होते। शब्दों के प्रयोग में हमें चयन का अवसर मिलता है। एक–एक शब्द के लिए अनेक पर्यायवाची शब्द मिलते हैं। कमल्, पद्म, अरविंद, राजीव, कुवलय, पुंडरीक आदि एक ही पुष्प के नाम हैं। अवसर के अनुसार हम इनमें से एक का चयन कर सकते हैं। व्याकरण या उच्चारण में इस तरह चयन के अवसर प्राप्त नहीं होते। जहाँ 'ने' का प्रयोग होना चाहिए वहां 'ने' का ही प्रयोग होगा, जहां 'श' का उच्चारण करना है वहाँ 'श' का ही उच्चारण होगा। कहने का तात्पर्य यह है कि व्याकरण और उच्चारण के मुकाबले भाषा का शब्दसंसार विशाल, खुला और शिथिल सीमाओं वाला होता है। भाषा के सरल और क्लिष्ट रूपों के दर्शन यही होते हैं। शब्द आते–जाते रहते हैं, कुछ प्रयोग के बाहर चले जाते हैं कुछ नए प्रयोग में आ जाते हैं। दूसरी भाषाओं से शब्दों का आदान–प्रदान भी खूब होता है।

आगे हम भाषा के तीन प्रमुख अंगों में सरल हिंदी की संभावनाओं की तलाश करेंगे।

जैसा कि पहले ही कहा गया है, उच्चारण के नियम हिंदी ही नहीं, बल्कि किसी भी भाषा के कठोर होते हैं। उनमें सरलता लाने के लिए नए–नए प्रयोग नहीं किए जा सकते। भाषा की ध्वनि व्यवस्था में जानबूझकर कोई परिवर्तन लाना संभव नहीं होता। ऐसा हो भी क्यों न? आखिरकार, वक्ता तथा श्रोता में संबंध उच्चारण और श्रवण के माध्यम से ही स्थापित होता है। भ्रष्ट उच्चारण और अनजान लहजा सम्प्रेषण खत्म कर देता है, जो भाषा का पहला प्रयोजन है। फिर भी उच्चारण की दृष्टि से हिंदी को सरल बनाने की थोड़ी गुंजाइश दिखाई देती है। विशेषकर जो ध्वनियां बाहर से आयी हैं उनके चुनावों में समझदारी दिखाकर हिंदी को थोड़ा सरल बना सकते हैं। अंग्रेजी 'ऑ' स्वर के स्थान पर हिंदी 'आ' के उच्चारण को स्वीकार किया जा सकता है, फ, ज, ख, ग तथा क में केवल फ तथा ज का उच्चारण कम कष्टप्रद है। धीरे–धीरे ये दोनों ध्वनियां हिंदी में ही अपना स्थान भी बना रही हैं इन्हें स्वीकार किया जा सकता है। हिंदी का एक बहुत बड़ा भूभाग है। उच्चारण में क्षेत्रीय विशेषताएं झलकती हैं। किंतु भाषा के मानक रूप की रक्षा के लिए क्षेत्रीय विशेषताओं को कम से कम स्थान दिया जाना चाहिए। पूरब में 'पैसा' को 'पइसा' बोलते हैं। 'पइसा' रूप में संप्रेषण में कोई बाधा नहीं होती, किंतु भाषा का मानक रूप बिगड़ता है। मालवी क्षेत्र में 'ऐ' को 'ए' तथा 'औ' को 'ओ' बोलते हैं। 'बैल' को 'बेल' और 'और' को 'ओर' बोलते हैं। यह परिवर्तन भाषा के केवल मानक रूप को ही नहीं बिगाड़ता, अपितु संप्रेषण में भी बाधक बनता है। बैल–बेल तथा और–ओर भिन्न–भिन्न शब्द हैं। किंतु हिंदी को सरल रूप देने के लिए क्षेत्रीय लहजे से यह संकेत मिलता है कि यह पूरब का है, यह पश्चिम का है, यह बंबई का है, यह हैदराबाद का है, यह पंजाबी है, यह मराठी है तो इसमें कोई बुराई नहीं है। बड़े भूभाग में बोली जानेवाली भाषा में इतना विचलन स्वीकार्य होना चाहिए।

उच्चारण के नियमों के समान व्याकरण के नियम भी सीमित किंतु कठोर होते हैं। हिंदी को सरल बनाने के लिए सबसे बेतुकी बातें उसके व्याकरण के नियमों को लेकर की जाती है। लिंग

की समस्या, अन्विति की समस्या, 'ने' की समस्या, निजवाचक 'अपना' की समस्या, मतलब इन सुधारकों को हिंदी व्याकरण में सब समस्या ही समस्या दिखाई पड़ती है। इनके अनुसार 'लड़का जाता है' की तरह 'लड़की जाता है' होना चाहिए। 'अच्छा लड़का' की तरह अच्छा 'लड़की' होना चाहिए। परसर्गों की सूची में 'ने' को हटा देना चाहिए, हम नहाये, 'हम सोये' की तरह 'हम खाये', 'हम पढ़े' रूपों को स्वीकार कर लेना चाहिए। 'मैं अपना काम करता हूँ' यह नहीं, अपितु 'मैं मेरा काम करता हूँ', यही सही है। सुधारकों को इसकी चिंता नहीं है कि इन परिवर्तनों से भाषा का मानकता की नष्ट नहीं होती, बल्कि उसकी संप्रेषणीयता भी नष्ट होती है। 'गौरी आया', 'गौरी आयी', पहले वाक्य में गौरी लड़के का नाम है, दूसरे वाक्य में यह लड़की का नाम है।

भाषा में परिवर्तन नहीं होता, ऐसा नहीं है। किंतु जिस तरह के परिवर्तनों का उल्लेख ऊपर किया गया है वह कृत्रिम भाषा में, मानव निर्मित भाषा में, तो हो सकता है, किंतु किसी प्रकृतिप्रदत्त सहज भाषा में नहीं। सहज भाषा में भी परिवर्तन होता है, किंतु मंदगति से अनजाने में होता है। हम कली को देखते हैं फिर उसके विकसित रूप फूल को देखते हैं। किरणों का स्पर्श पाकर पंखुड़ियां चुपके से कब खुल जाती हैं, यह दृष्टिगोचर नहीं होता। भाषा में कुछ परिवर्तन बाह्यप्रभाव के कारण होता है। हिंदी में 'आप कहां से हैं?' 'मैं इलाहाबाद से हूँ' वाक्यों में 'से' का प्रयोग अंग्रेजी का प्रभाव है। 'तुम' और 'आप' के लिए एक ही क्रिया रूप 'जाओ', 'खाओ' का प्रयोग अंग्रेजी का प्रभाव है। 'मैं मेरा काम कर रहा हूँ' में 'मेरा' का प्रयोग भी अंग्रेजी प्रभाव है या अन्य भारतीय भाषाओं का प्रभाव है। किंतु ये प्रयोग हिंदी में चल पड़े हैं। इन्हें निकालना संभव नहीं लगता। भाषा में कुछ परिवर्तन भाषा के भीतर से ही होते हैं 'वह' तथा 'वे' दोनों के लिए 'वो' का प्रयोग इसी प्रकार का है। 'यह' और 'ये' दोनों के लिए 'ये' भी इसका उदाहरण है। जैसे सरल विभक्ति में 'जो' 'सो' 'कौन' एकवचन और बहुवचन दोनों रूपों में एक होते हैं उसी प्रकार 'वो' और 'ये' भी दोनों वचनों में एक होते हैं। सहज ढंग से भाषा सरलता की ओर बढ़ रही है। सरल दिशा में होनेवाले एक अन्य परिवर्तन का भी रोचक उदाहरण है। अंगागी संबंध, स्थायी संबंध या खून के रिश्तों को व्यक्त करने के लिए 'के' परसर्ग का प्रयोग किया जाता है, 'केकड़े के आठ टांगें होती हैं' 'मोहन के एक बेटी है', इत्यादि। अब 'के' के स्थान पर 'का–की–के' का प्रयोग चल पड़ा है, केकड़े की आठ टांगे होती हैं, 'मोहन की एक बेटी है, अर्थात् दो भिन्न परसर्गों के स्थान पर एक ही परसर्ग का प्रयोग। जैसे पानी अपना तल ढूंढ़ लेता है वैसे ही भाषा भी सरलता का मार्ग चुन लेती है। इस तरह के परिवर्तनों को स्वीकार करके भाषा को सरल बनाया जा सकता है। किसी भाषा को सरल बनाने का यही सही मार्ग है।

भाषा का तीसरा अंग शब्दावली शिथिल सीमाओं वाली होती है, विविध रंगों, छटाओं और दीप्तियोंवाली होती है। कहाँ मार्ग कंटकाकीर्ण होगा, कहाँ उबड़खाबड़, कहाँ समतल भूमि मिलेगी, कहाँ फिसलन होगी, यह बहुत कुछ शब्दों के चयन पर निर्भर है। कब वातावरण नादमय होगा, कब सुरभिमय कब बसंत की तरह रूपवान, और कब पतझड़ की तरह श्रीविहीन, यह शब्दों की संघटना पर निर्भर है। भाव यह है कि भाषा को विविध रूप देने में शब्दों की भूमिका महत्वपूर्ण है। भाषा की समृद्धि तथा दरिद्रता उसकी शब्द संपदा पर ही निर्भर है। यहां उच्चारण तथा व्याकरण के नियमों की भूमिका नगण्य है।

भाषा की सरलता और क्लिष्टता का संबंध मुख्यतया शब्दों के प्रयोग से है। जब हम सरल हिंदी या क्लिष्ट हिंदी की बात करते हैं तो हमारा ध्यान मुख्य रूप से गद्य या पद्य में प्रयुक्त सरल और क्लिष्ट शब्दों पर ही होता है। संस्कृत और अरबी–फारसी के शब्दों से लदी हुई भाषा न स्वयं आगे बढ़ती है, न श्रोता या पाठक को आगे बढ़ने देती है। वातावरण के सृजन में संस्कृत या अरबी–फारसी के शब्दों का संतुलित प्रयोग ठीक है, किंतु केवल पाण्डित्य प्रदर्शन के लिए कठिन और विरल शब्दों का प्रयोग भाषा के मुख्य प्रयोजन संप्रेषण को बाधित करने लगता है। किसी रचना का रसास्वादन करते समय यदि बार–बार भी भरकम कोश को पलटना पड़े तो लगता है कि दांतो के बीच बारबार कंकड़ी आ रही है।

व्यवहार की दृष्टि से भाषा के शब्दों के दो समूह बनते हैं। 1. आधारभूत शब्दावली और 2. विशिष्ट शब्दावली। आधारभूत शब्दावली में दिन–प्रति–दिन सामान्य व्यवहार में आने वाले शब्द आते हैं। जीवन धारण करने के लिए जो हमारी मूलभूत आवश्यकताएँ होती हैं, उनकी पूर्ति में सहायक शब्दावली भाषा समाज के प्रत्येक व्यक्ति की भाषा का अंग होती है। सामान्य व्यवहार में आनेवाली भाषा में सरल और प्रचलित शब्दों का व्यवहार उचित होता है। भाषा की सरलता या क्लिष्टता की बात इसी संदर्भ में उठायी जाती है। विशिष्ट शब्दावली का संबंध विभिन्न व्यवसायों, पेशों, ज्ञान–विज्ञान की विभिन्न शाखाओं से होता है। मानव सभ्यता के विकास के मूल में श्रमविभाजन का सिद्धांत है। बढ़ई, लुहार, नाई, किसान, डॉक्टर, इंजीनियर, व्यापारी सबके काम अलग–अलग है। सबका काम अलग–अलग होने से सबकी अपने–अपने काम में विशेषज्ञता होती है। सब एक दूसरे की आवश्यकता के पूरक होते हैं।

इस तरह हम देखते हैं कि श्रम विभाजन विशेषज्ञता का मूलाधार है। यदि मानव समाज में श्रम विभाजन का सिद्धांत नहीं अपनाया गया होता तो मनुष्य आज भी अन्य वन्य जीव–जन्तुओं की भांति नग्नावस्था में विचार शून्यता की दुनिया में रह रहा होता। यहा एक महत्वपूर्ण प्रश्न उठता है, ''यह श्रम विभाजन कैसे संभव हुआ?'' इसका एकमात्र उत्तर है, भाषा। भाषा न होती तो श्रम विभाजन न होता। श्रम विभाजन न होता तो मनुष्य इतनी तरक्की न करता और वह आज भी प्रकाश की जगह अँधेरे में होता। न आकाश में उड़ता, न सागर की अतल गहराइयों को छूता।

जहाँ विशेषज्ञता की बात आती है वहीं विशिष्ट शब्दावली की बात उठती है। हर पेशे की, ज्ञान–विज्ञान की प्रत्येक शाखा की अपनी विशिष्ट शब्दावली होती है। एक शाखा की शब्दावली को दूसरी शाखा का विशेषज्ञ नहीं जानता। विशिष्ट शब्दावली के संदर्भ में सरल और कठिन शब्दों की बात नहीं उठती। ज्ञान विशेष से जुड़े शब्द सामान्य व्यवहार की भाषा के शब्दों से पृथक होते हैं, उन शब्दों से सामान्य जन का परिचित होना आवश्यक नहीं होता। विशिष्ट शब्द प्रायः उच्चारण की दृष्टि से भी सुगम नहीं होते क्योंकि उनकी रचना प्रायः क्लासिकल भाषाओं के शब्दों से होती है। किंतु ज्ञान–विज्ञान की शब्दावली भले ही सामान्य भाषा की शब्दावली से भिन्न हो, उसका व्याकरण सामान्य भाषा के व्याकरण से भिन्न नहीं होता।

यह पहले कहा गया है कि भाषा की शब्दावली शिथिल सीमावली होती है। भाषाओं में परस्पर शब्दों का आदान–प्रदान होता रहता है। इससे परस्पर सौमनस्य और एकता का भाव उद्दीप्त होता है। हिंदी बड़ी उदारता से अन्य भाषाओं से शब्द लेती है। राष्ट्रीय एकता बढ़ाने में हिंदी की अहम भूमिका है। भारतीय भाषाओं से खान–पान, पहिरावे, रीतिरिवाजों तथा प्रमुख पर्वों से संबंधित शब्दावली हिंदी बराबर ले रही है और इसे आत्मसात कर रही है। भारत के विभिन्न प्रदेशों को एक सूत्र में बांधने का काम आज हिंदी सफलतापूर्वक कर रही है। जो पर्व पहले प्रादेशिक स्तर पर मनाये जाते थे, आज वे पूरे हिंदुस्तान के पर्व हो चुके हैं। महाराष्ट्र का गणेश पूजन अब उसी धूमधाम और उत्साह से अन्य प्रदेशों में भी मनाया जाता है। गरबा नृत्य, बिहू नृत्य, बंबू डांस अब प्रदेश विशेष के नहीं रहे। इसी प्रकार सलवार कुर्ता अब अखिल भारतीय पहनावा बन चुका है। इडली, डोसे का स्वाद हिंदुस्तान के किसी भी कोने में हम ले सकते हैं। यह सब सरल हिंदी का प्रसाद है, इसमें दो मत नहीं हो सकते।

सरल हिंदी के संदर्भ में उसके अनुवाद साहित्य की भी चर्चा करना आवश्यक है। भारतीय भाषाओं से या अंग्रेजी से जो अनुवाद हिंदी में हुए हैं उनमें अधिकांश संतोषजनक नहीं हैं। अच्छे अनुवाद के लिए जो चीजें आवश्यक है उनमें विषय का अच्छा ज्ञान और दोनों भाषाओं में अनुवादक की अच्छी पकड़ होनी चाहिए। किंतु दुर्भाय की बात है कि ऐसा कम होता है। विषय का अधूरा ज्ञान और भाषा की दुर्बलता दोनों मिलकर अनूदित साहित्य को मूल से अधिक दुरूह और दुर्बोध बना देते हैं। अनुवाद की भाषा पर मूल की भाषा का स्पष्ट ग्रहण दिखायी देता रहता है। अनुवाद में सरल हिंदी का प्रयोग तभी संभव है जब अनुवादक विषय को समझकर उसे अपनी भाषा में रखने का प्रयास करेगा।

केरल के हिंदी प्रचार का शैक्षिक आयाम

डॉ. सुधा ए.एस.

किसी देश की भाषा उसकी संस्कृति की वाहिक है। बिना भाषा के संस्कृति का प्रकाशन संभव नहीं। इसी कारण प्रत्येक स्वाभिमानी, स्वतंत्र राष्ट्र अपनी भाषा को सर्वोच्च आसन पर प्रतिष्ठित करता है। राष्ट्रभाषा राष्ट्र को एकता के सूत्र में पिरोनेवाली और उसमें अस्मिता बोध जगानेवाली संजीवनी है।

हिंदी जनता की वाणी है, वह राष्ट्र की वाणी है। अर्थात हिंदी का भविष्य भारत का भविष्य है। स्वभाषा के विकास के बिना जनता का विकास संभव नहीं। डॉ. रघुवीर, डॉ. ग्रियर्सन, डॉ. सुनीत कुमार चटर्जी जैसे भाषा–विज्ञान के आचार्यगण और भारत राष्ट्र के नेताओं ने भी इस बात का अनुभव किया कि हिंदी भारत की केंद्रीय राज भाषा है। स्वामी दयानंद, बाबू हरिश्चन्द्र, गांधीजी, डॉ. हेडगेवार आदि महानुभवों ने अपना समस्त कार्य जहां हिंदी में किया, वहाँ देशवासियों को भी इस बात की प्रेरणा दी कि वे अपने दैनिक जीवन में हिंदी को अपनाएँ।

स्वतंत्रता के बाद देश की स्थिति में व्यापक परिवर्तन हुआ। जहाँ सैकड़ों देशी राज्यों को भारत भूखंड का अविच्छिन्न अंग बना कर राष्ट्र की एकता को दृढ़ किया गया, वहाँ दलगत राजनीति द्वारा सत्ता पर अधिकार के लिए भेदभाव की कुछ कृत्रिम दीवारें भी खड़ी की जाने लगीं और की जा रही है। इससे भंजकों का तो कोई लाभ नहीं हुआ, किंतु देश के प्रगति की गाड़ी की गति रुकी और रास्ता भी अवरुद्ध हुआ। देश में राष्ट्रीय व्यक्तित्व का उदय न होकर असंतुलित क्षेत्रीय भाषायी व्यक्तित्व का प्रधान्य हुआ। हिंदी माता का मूर्ती–भंजन भी स्थिर स्वार्थ के कारण किया गया और नाना–प्रकार के तर्क–वितर्क इस संबंध में दिए गए, किंतु हिंदी का संकल्प केवल संवैधानिक संकल्प ही नहीं था, वह राष्ट्र की आत्मा को जयी संकल्प था, इसलिए सब ने उसकी सत्यता को स्वीकारा।

भाषा सही अर्थों में समाजवादी है। क्योंकि कोई भाषा महान् तब होती है, जबकि उसका प्रयोग जनता स्वीकार करे। इसी अवसर पर तुलसीदास की वाणी याद करती है।

"भाषा भनिति भूति भलि सोई
सुरसरि सब सब कर हित होई।"

इसलिए हिंदी पर सभी भारतवासियों का रंग रंजित होना चाहिए, लेकिन जिस रंग के कारण वह राष्ट्रभाषा हुई है वह रंग भी उसका स्पष्ट झलकना चाहिए।

हिंदी के प्रचार प्रसार के लिए आर्य समाज, कांग्रेस तथा राष्ट्रीय–स्वयं सेवक संघ, दक्षिण–भारत हिंदी प्रचार समिति, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग जैसी संस्थाओं का योगदान महत्वपूर्ण है। नागरी प्रचारिणी सभा ने हिंदी के आदि ग्रंथों की खोज तथा प्रकाशन द्वारा, भारत भर में हिंदी प्रचार की महत्वपूर्ण कार्य किया। पंजाब में हिंदी को विकसित करने का भगीरथ प्रयास पंजाब विश्वविद्यालय की ओर से भी हुआ।

अहिंदी भाषी क्षेत्रों में हिंदी पढ़ाने का और हिंदी की शिक्षा के विस्तार के राष्ट्रीय महत्व का कार्य भी उत्तर भारत की संस्थाओं ने किया।

दक्षिण भारत में हिंदी प्रचार का श्रीगणेश गांधीजी के हाथों से हुआ। गांधीजी ने अपने पुत्र देवदास जी को मद्रास भेजा। उन्नीस सौ अठारह, मई महीने में मद्रास का पहला हिंदी वर्ग शुरू हुआ। प्रथम केंद्रीय विद्यालय मद्रास में उन्नीस सौ चौबीस में स्थापित हुआ। उन्नीस सौ अठारह से लेकर सताईस तक हिंदी साहित्य सम्मेलन की देखरेख में मद्रास की दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा का कार्य चलता रहा। सत्ताईस में हिंदी प्रचार सभा स्वतंत्र संस्था हो गई। हिंदी प्रचार बड़े–बड़े नगरों में शुरू हुआ, किंतु शीघ्र ही वह छोटे नगरो व ग्रामों में भी लोकप्रिय हो गया। स्त्रियों के बीच में हिंदी प्रचार की अधिक लोकप्रियता के कारण आगे चलकर हिंदी अध्यापन के क्षेत्र में भी स्त्रियां ही अग्रसर रहीं।

केरल हिंदी को सहज रूप में स्वीकार करने के अनेक कारण होते हैं। अपने देश के बड़े हिस्से में बोली हुई भाषा को पसन्द करना सहज बात थी। श्रीशंकराचार्य की आध्यात्मिकता से प्रभावित पूरे देश के प्रति ममता का अनुभव करना केरलवासियों की विशेषता थी। काशी की भाषा होने के नाते, तुलसी, सूर, मीरा जैसे महान भक्त कवियों की भाषा होने के नाते, दक्खिनी भाषा से निकटतम संपर्क रखने से केरल ने हिंदी का हार्दिक स्वागत किया। बंबई–कलकत्ता, प्रवासियों एवं सैनिकों से प्रभावित होकर हिंदी फिल्मों एवं फिल्मी गीतों से आकर्षित होकर अनेक भाई–बहनों में हिंदी सीखने की रुचि हो गई।

नागरी लिपि ने हिंदी को केरल निवासियों की भी सुगम भाषा बना दिया। क्योंकि संस्कृत सीखने के बाद हिंदी सीखना शुरू किया तो हिंदी बड़ी प्रिय और सरल लगी। वाल्मीकी, व्यास, कालिदास, भवभूति, जयदेव आदि संस्कृत कवियों की रचनाएं हिंदी व मलयालम दोनों में अनूदित है। इसलिए हिंदी साहित्य का रसास्वादन भी केरल वासियों के लिए सुलभ रहा है। स्कूल–कॉलेज में अखिल भारतीय पाठ्विषयों प्रवेश, नव जागरण और नए नेताओं की वाणी, प्रशासनिक फारसी शब्दों का प्रभाव आदि कारणों से भी हिंदी केरल के लिए बिलकुल अनजान नहीं रही।

केरल के अनेक गाँवों में हिंदी का संदेश सबसे प्रथम पहुंचने का श्रेय स्व. एम.के दामोदरनण्णी को है। उण्णीजी ने चुने हुए युवकों को हिंदी सीखना शुरू किया। केरल में हिंदी यद्यपि सारे गांवों में पहुंची है तथापि नगर ही हिंदी के केंद्र रहे। तिरुवितांकूर हिंदी प्रचार सभा की स्थापना वासुदेवन पिल्लै जी ने की। हिंदी प्रचार सभा के तत्वावधान में प्रमाणपत्र वितरण, हिंदी सप्ताह, विद्वानों के भाषण सबसे बढ़कर छमाही परीक्षाएं आदि होती थी।

उन्नीस सौ इकतीस का वर्ष तिरुवनन्तपुरम के हिंदी प्रचार के इतिहास में चिरस्मरणीय है। उसी वर्ष ट्रावंकोर लजिस्लेटिव कौंसिल में एम. एस. दामोदरनाशान ने 'स्कूलों में अनिवार्य हिंदी' शुरू करने का प्रस्ताव पेश किया था। इसके बाद उन्नीस सौ सैंतीस–चालीस (1937–40) में श्री.के.एन. परमेश्वर पणिक्कर, वासुदेवन पिल्लै आदि के सतत प्रयास और सरकार के अनुकूल रुख के कारण हिंदी को ट्रावनकूर विश्वविद्यालय ने इंटर में द्वितीय भाषा का स्थान दिया। इसी काल में अनेक आकादमिक आचार्यों का आगमन भी यहाँ हुआ। फिर प्रशिक्षण संख्याएं शुरू हुई। उन्नीस सौ सतावन से तिरुवनन्तपुरम यूनिवर्सिटी कॉलेज में नए स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम शुरू हुआ। यहीं से होकर हिंदी की विजययात्रा शुरू होने लगी। तिरुवनन्तपुरम के जैसे कोल्लम, कोच्चिन, पालघाट, तृश्शूर आदि अन्य नगरों में और

संपूर्ण केरल में हिंदी प्रचार के लिए स्वतंत्र संस्थायें महान कार्य कर रही हैं। केरल हिंदी प्रचार सभा, दक्षिण हिंदी प्रचार सभा, हिंदी विद्यापीठ, केरल हिंदी साहित्य आकादमी आदि हिंदी संस्थाओं और कई हिंदी विद्वानों, बृहद पुस्तकालयों के द्वारा हिंदी की जड़ और गहरी होकर चल रही है। यही नहीं विश्वविद्यालयों एवं कॉलेजों में भी हिंदी एम.ए., एम.फिल, पाठ्यक्रम चल रहे हैं। हिंदी के शोध परक कार्य संतोषजनक ढंग से हो रहे हैं। हिंदी प्रचार सभाओं के कार्य की सफलता उनके प्रचारकों पर निर्भर रही है। परंपरागत रूप से वे विद्यालय चलते आ रहे हैं और सैकड़ों छात्र–छात्राएं सभाओं की परीक्षाओं में भाग ले रहे हैं। दक्षिण के चार राज्यों की हिंदी प्रचार संस्थाओं का भारतीय स्तर पर समन्वयन करनेवाली एक संस्था भी है–अखिल भारतीय हिंदी संस्था संघ।

हिंदी के शिक्षण–प्रशिक्षण, भाषा विश्लेषण, भाषा का तुलनात्मक अध्ययन तथा शिक्षण सामग्री निर्माण आदि को विकसित करने के लिए शिक्षा मंत्रालय के द्वारा सन् 1961 में केंद्रीय हिंदी संस्थान की स्थापना आगरा में की गई। अहिंदी भाषी क्षेत्रों के लिए योग्य, सक्षम एवं प्रभावकारी हिंदी अध्यापकों को ट्रेनिंग कॉलेज और स्कूली स्तरों पर पढ़ाने के लिए प्रशिक्षित करना इस संस्था का प्रारंभिक कार्य रखा। बाद में हिंदी के शैक्षिक प्रचार–प्रसार और विकास को ध्यान में रखकर संस्था ने अपने कार्य क्षेत्रों और प्रकार्यों को विस्तृत किया।

हिंदी प्रचार के शैक्षिक आयाम के अंतर्गत पत्र पत्रिकाओं का योगदान भी महत्वपूर्ण है। केरल में सबसे पहले हस्तलिखित पत्रिकाएं, उसके बाद मुद्रित पत्रिकाएं उनमें हिंदी मित्र, हिंदी गरिमा, ललकार, अरविंद प्रताप, आर्य कैरली, केरल पत्रिका, राष्ट्रवाणी, युगप्रभात आदि पत्रिकाओं ने अपने अपने काल में हिंदी का प्रचार–प्रसार किया है। आज उत्तर भारत से प्रकाशित अनेक दैनिक, मासिक, साप्ताहिक पत्र–पत्रिकाओं के साथ–साथ केरल ज्योति, संग्रथन, केरल भारती जैसी पत्रिकाएं भी केरल के हिंदी प्रेमियों को अनेक बातों पर जानकारी देती आई है। मलयालम से हिंदी में अनुवाद का विकास एवं हिंदी से मलयालम में अनूदित साहित्य की वृद्धि भी हिंदी प्रचार के लिए आशाजनक कार्य है। आज हिंदी भारत की सीमा पार करके संसार के एक सौ से अधिक विश्वविद्यालयों में पढ़ाई जा रही है। फिर भी हिंदी के समर्थक अनेक चुनौतियों का सामना करते हैं। भाषा की समस्या का सर्वोत्तम हल तभी होगा जब त्रिभाषा सूत्र का स्वरूप निश्चित करने से, जिसमें संपर्क भाषा के रूप में हिंदी शिक्षण अनिवार्य होना ही चाहिए।

आज तक हिंदी का जो विकास हुआ है उससे हिंदी प्रेमियों को संतुष्ट न होना चाहिए क्योंकि ज्ञान–विज्ञान ने भाषा और साहित्य के अध्ययन के लिए नयी तकनीकों का आविष्कार किया है और उसका संस्पर्ष कुछ अंशों में हिंदी से है, किंतु उसका अभाव अधिकांश हिंदी शिक्षण पद्धति में है। हिंदी में उच्च कक्षाओं में अध्ययन और अध्यापन के लिए प्रशिक्षण की तकनीकी पद्धति की खोज और उसका उपयोग होना चाहिए। इस दिशा में गंभीर प्रयत्नों की अपेक्षा है। भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, हिंदी के विभिन्न प्रचार संस्थाएं आदि को इसका उत्तरदायित्व लेना ही चाहिए। जो भी हो हिंदी के प्रचार–प्रसार बहुत अधिक तेज गति से आगे की ओर लाने का पूर्ण उत्तरदायित्व हिंदी के अध्यापकों का है। इसलिए हिंदी के अध्यापक हिंदी का नेतृत्व अपने कर्म से करें और हिंदी की प्रगति को समय सिद्ध दिशा प्रदान करें।

असिस्टेंट प्रोफेसर
हिंदी विभाग, यूनिवर्सिटी कॉलेज
तिरुवनन्तपुरम, केरल

राजभाषा हिंदी–जरूरत आज की

डॉ. संतराम यादव

भारत की अर्वाचीन सभ्यता और मिली जुली संस्कृति से साक्षात रूबरू होने के लिए विश्व के विभिन्न भागों में विचरण करता मानवजन सदैव लालायित रहता है। इस पावन भूमि को ऋषि मुनियों ने अपने त्याग, प्रेमभाव, ज्ञान और लहू से समय समय पर सींचा है। हमारी सदैव यही इच्छा रही है कि मानव जाति सुखी और समृद्ध रहे। भारत ही एकमात्र ऐसा देश है जहां के शासकों और देशवासियों ने सदैव दुश्मनों की भी उन्नति और खुशहाली की कामना की है।

इसमें कोई दो राय नहीं है कि भारतीयों ने विश्व के मानस पटल पर सदैव अपनी अमिट छाप छोड़ी है। युग बदला और नित नवीन प्रौद्योगिकीयाँ उभरकर आईं। भारत की प्राचीन संकल्पना को आज फिर से वैज्ञानिक आधार मिला है। विदेशियों ने भारतीयों के जलवे को पहचान लिया है। सभी पलक पांवड़े बिछाए आज के भारत को आशा भरी नजरों से निहार रहे हैं। आज विश्व में चहुं ओर फिर से हमारे ऋषि मुनियों की वसुधैव कुटुम्बकम की योजना को सराहा जा रहा है। वर्तमान में उपलब्ध प्रौद्योगिकी ने अपने पराए का भेदभाव मिटाते हुए यह सिद्ध कर दिया है कि आज के युग में मानव के लिए नित कुछ नया कर गुजरने हेतु सब कुछ संभव है। इसलिए बदलती परिस्थितियों में हम एक ने काम करने के लिए एकजुट होकर यह कहना होगा कि 'आओ भगवान से हम दुआ मांगे, जिंदगी जीने की अदा मांगे। अपनी खातिर तो बहुत मांगा है, आओ आज सबके लिए भला मांगे।'

यह बात सर्वविदित ही है कि देश ने अपने संविधान में देवनागरी लिपि में लिखी गई हिंदी को संघ की राजभाषा के रूप में अंगीकार किया है। हालांकि यह बात भी सर्वविदित ही है कि केवल संविधानिक दिशा व निर्देशों से राजभाषा हिंदी का अभी तक पूरा विकास हो नहीं पाया है। कंपनी को प्रोडेक्ट को बेचने की मजबूरी रही हो यह फिर हमें अपने काम निकालने की विवशता रही हो, हिंदी की सभी को पग पर जरूरत महसूस होती रही है। इसलिए इसमें कोई संदेह नहीं है कि इस नेक कार्य में हम अभी को राजभाषा हिंदी के साथ मानसिक एवं आत्मीय रूप जुड़कर उसकी प्रगति हेतु ठोस कदम उठाते हुए समयानुसार उन कदमों की समीक्षा करनी होगी। आज समय की मांग है कि देश के कार्यपालकों को अपनी कार्यशैली के जरूरी अंग के रूप में राजभाषा हिंदी के कार्य की समीक्षा करके नई पहल करनी ही चाहिए। यदि वह इस नेक कार्य में थोड़ा सा भी सहयोग करेंगे तो केंद्र सरकार के कार्यालयों में राजभाषा कार्यान्वयन सही ढंग से होना शुरू हो जाएगा। जब अधिकांश कार्यालयों में राजभाषा कार्यान्वयन सुचारू रूप से होने लगेगा तो हम भी एक स्वाभिमानी राष्ट्र के नागरिक के रूप में दुनिया को यह दिखा सकेंगे कि केवल हिंदी न केवल हमारी संपर्क भाषा ही है अपितु राजभाषा के रूप में भी इसका विशेष महत्व है। भारत सरकार के सभी कार्यालयों में रोजमर्रा की जरूरतों को पूरा करने और राजकाज के कार्यों के निपटान की भाषा के रूप में यदि किसी भाषा का स्थान है तो वह मुकाम केवल राजभाषा हिंदी को ही प्राप्त है। हिंदी ही वो भाषा है जो कि समस्त भारतवंशियों

और अनेकानेक विदेशियों के दिलों की भाषा के रूप में अपना विशेष स्थान बना चुकी हैं।

हमारा यह मानना है तथा यह ऐतिहासिक तथ्य भी है कि संतों की न तो कोई अपनी जाति होती है और न ही उनका कोई राज्य या निश्चित स्थान नहीं होता। वे तो घुमंतु प्रवत्ति के हैं जो कि क्षेत्रीयता की भावना से ऊपर उठकर संपूर्ण देश में एक स्थान से दूसरे स्थान पर जा जाकर संदेश देते रहते हैं। कबीरदास भी कह गए हैं कि जाति न पूछो साधु की, पूछ लीजिए ज्ञान। मोल करो तलवार का, पड़ा रहन दो म्यान। अतीत को खंगालते पर हम पाते हैं कि महाराष्ट्र के नामदेव, काशी के कबीर, पंजाब के गुरु नानकदेव और बंगाल के केशव सेन आदि महान संतों ने अपने विचारों को देश के एक कोने से दूसरे कोने तक जनता जनार्दन तक आदान प्रदान करने के लिए अपनाया तो वह कोई और भाषा नहीं अपितु केवल हिंदी ही थी।

भाषा के संबंध में डॉ. श्रुतिकांत पांडेय का विचार है कि ''भाषा ध्वनियों का समूह और भावों की अभिव्यक्ति का साधन मात्र न होकर किसी व्यक्ति या समाज का दर्पण, उसकी सभ्यता एवं संस्कृति की संरक्षक, शैक्षिक एवं आर्थिक स्थिति की निर्धारक और विचारधारा तथा आकांक्षाओं की परिचायक होती है।'' इसी परिप्रेक्ष्य में वाणी प्रकाशन द्वारा 1987 में प्रकाशित डॉ. बलराज सिंह सिरोही जी की पुस्तक ''संघीय राष्ट्रभाषा के संदर्भ में पारिश्रमिक वैज्ञानिक शब्दावली के निर्माण की समस्याएं''के पृष्ठ 58 से 67 पर महात्मा गांधी के विचारों को उद्धृत करते हुए बताया है कि ''रूस ने अपनी सारी वैज्ञानिक प्रगति अंग्रेजी के बिना की है। यह हमारी दिमागी गुलामी है, जो हम कहते हैं कि अंग्रेजी के बिना काम नहीं चल सकता।'' इसलिए समय की यह मांग है कि हमें उनके विचारों की कद्र करते हुए भी राजभाषा हिंदी का सर्वाधिक प्रयोग करना चाहिए।

विश्व में भारतभूमि ही एकमात्र सर्वाधिक धर्मों की धर्मस्थली कहलाती है। हमारे यहां जिसने भी चारों धाम की तीर्थ यात्रा इस जन्म में कर ली, तो यह मान लिया जाता है कि उसने स्वर्ग के द्वार की अपनी टिकट पहले ही आरक्षित करवा ली है। ये चारों धाम अर्थात् बद्रीनाथ, जगन्नाथपुरी, द्वारकापुरी और रामेश्वरम में साधु संतों के बीच संपर्क भाषा के रूप में कार्य करने वाली भाषा अतीत की भाँति आज भी हिंदी ही है। यह भी दिखलाई पड़ता है कि हिंदुओं के अधिकांश अवतारों ने हिंदी भाषी प्रदेशों में स्थित स्थानों पर ही जन्म लिया है।

आजादी के आंदोलन में महात्मा गांधी जी ने हिंदी को राष्ट्रभाषा के रूप में स्थापित करने हेतु एक विशेष अभियान चलाया था। नवजीवन राजून के 1931 में प्रकाशित अंक से ज्ञात होता है कि गांधी जी सदैव आशावादी थे। एक स्थान पर वे कहते हैं कि ''मैं इस पराजयवादी मत को कभी स्वीकार नहीं कर सकता। मैं यह मानता रहा हूँ कि हम किसी भी हालत में प्रांतीय भाषाओं को मिटाना नहीं चाहते हैं। मेरा मतलब तो सिर्फ यह है कि विभिन्न प्रांतों के पारस्परिक संबंध के लिए हम हिंदी को सीखें। ऐसा कहने से हिंदी के प्रति हमारा कोई पक्षपात प्रकट नहीं होता। राष्ट्रभाषा वही बन सकती है जिसे अधिसख्यंक लोग जानते हैं और बोलते हैं तथा जो सीखने में सुगम हो, ऐसी भाषा हिंदी ही है।'' बनारस विश्वविद्यालय में 1942 में भारत छोड़ो आंदोलन के समय गांधी जी कहते हैं कि ''मातृभाषा मनुष्य के लिए इतनी ही स्वाभाविक है, जैसे बच्चे के शरीर के विकास के लिए माँ का दूध। मैं बच्चों के मानसिक विकास के लिए उन पर माँ की भाषा को छोड़कर दूसरी कोई भाषा लादना मातृभूमि के प्रति पाप समझता हूँ।'' उस समय की संपर्क भाषा के रूप में हिंदुस्तानी भाषा ही सर्वाधिक प्रचलित थी। यह वही भाषा थी जिसमें हिंदी और उर्दू के शब्दों की भरमार थी। इससे पूर्व इंदौर में 19 अप्रैल, 1935 को गाँधी जी ने भाषा के संबंध में कहा था कि ''हम उनकी

भाषा को छाती से चिपकाए हुए हैं, जिन्होंने हमें गुलाम बनाया।'' वो केवल यही तक सीमित नहीं रहे अपितु हरिजन संकेत नामक पत्र में 18 मार्च, 1952 को कहते दिखलाई पड़ते हैं कि ''मैं विदेशी माध्यम से दी जाने वाली शिक्षा को राष्ट्रीय संकट मानता हूँ।'' हरिजन संकेत के 21 सितंबर 1947 के अंक से पता चलता है कि भाषा के संबंध में गांधी जी ने बलपूर्वक इस बात को स्पष्ट किया कि ''कोई भी जाति नक्कालों की कौम पैदा करके बड़ी नहीं हो सकती।''

आजादी से पूर्व बड़ौदा और अलवर दो ऐसी रियासतें थी, जहां पर हिंदी के प्रोत्साहन और राजभाषा को सम्मान देने का प्रयास किया। अलवर में इसका श्रेय सवाई जयसिंह जी को जाता है। उनका मानना था कि – ''हिंदी के ज्ञान से नवयुवकों को रोजगार के अवसर उपलब्ध होंगे। यदि हम लोगों को मातृभाषा सिखाएंगे तो उनका भौतिक व अध्यात्मिक विकास एक साथ संभव होगा... मातृभाषा सीखने में आसान होती है ...। राजा जयसिंह जी का मानना था कि ''नीति और धर्म का पालन तथा उसका अभ्यास उन्नति का कारण है किंतु जो मातृभाषा नहीं जानता, वह अपने यहां की नीति और धर्म को क्या मानेगा? पूरी दुनिया में कोई अंग्रेज, तुर्क अथवा जर्मन ढूंढ़ने पर ऐसा नहीं मिलेगा जो अपने देश की भाषा अंग्रेजी, तुर्की, जर्मन को न जानकर हिंदी भाषा जानता हो, पर ऐसे हजारों भारत के सपूत मिलेंगे जो अंग्रेजी आदि भाषाओं के पूर्ण पंडित होंगे पर मातृभाषा हिंदी का शुद्ध शब्द भी नहीं जानते होंगे? क्या इसी का नाम देशोन्नति है? और इससे अधिक लज्जा की बात क्या हो सकती है।'' आजादी के आंदोलन के दौरान यह बात स्पष्ट रूप से उभरकर आई थी कि हिंदुस्तानी एक ऐसी जबान है जो आमतौर से उपयोगी साबित होती है और मेरी समझ में संसार की किसी भी भाषा से इसका व्यवहार बहुत बड़े पैमाने पर होता है। हिंदी भाषा के उज्ज्वल भविष्य की कामना करते हुए 20 अप्रैल 1935 को गांधी जी ने इंदौर में कहा था कि ''हिंदी बोलने वालों की संख्या सदा ही करोड़ों में रहेगी, किंतु अंग्रेजी जानने वालों की संख्या कुछ लाख से आगे कभी नहीं बढ़ेगी। इस अंग्रेजी के लिए प्रयत्न करना भी जनता के साथ अन्याय करना है।''

अपनी भाषा के बिना कोई राष्ट्र गूंगा है। अपने भावों को संप्रेषित करने के लिए जीव जंतुओं तक को अपनी भाषा का प्रयोग करना पड़ता है। फिर चाहे वह सांकेतिक भाषा हो या बोलचाल की भाषा या फिर चिल्ला–चिल्लाकर ध्यानाकर्षण करने की भाषा हो। हम अपनी बात दूसरों तक किसी न किसी रूप में पहुंचाते ही रहते हैं। जिस तरह जल के बिना नदी का अस्तित्व संभव नहीं है। सूर्य के बिना किरणों का कहीं स्थान नहीं है। चंद्रमा के बिना चांदनी नहीं छिटक सकती। उसी तरह समाज के बिना साहित्य नहीं रह सकता और साहित्य के बिना समाज नहीं रह सकता। यदि समाज एक चक्र है तो साहित्य उसकी धुरी। जिस तरह पृथ्वी अपने कक्ष में घूमती रहती है, ठीक उसी तरह साहित्य भी समाज रूपी कक्ष पर चक्कर काटता दिखलाई पड़ता है। यही कारण है कि 2 सितंबर 1921 को हिंदी जनजीवन में गांधी जी सबका साथ सबका विकास की बात करते हुए दिखते हैं कि जब तक हम हिंदी भाषा को राष्ट्रीय और अपनी अपनी प्रांतीय भाषाओं को उनका योग्य स्थान नहीं देते हैं, तब तक स्वराज्य की बातें निरर्थक हैं।

हिंदी की विशेषता के बारे में जहां एक ओर मैथिलिशरण गुप्त जी कहते हैं कि ''हिंद उन सभी गुणों से अलंकृत है, जिनके बल पर वह विश्व की साहित्यिक भाषाओं की अगली श्रेणी में आसान हो सकती है।'' वहीं दूसरी ओर अतीत का संदर्भ देते हुए डॉ. राजेन्द्र प्रसाद जी सहज की कह उठते हैं कि ''हिंदी चिरकाल से ऐसी भाषा रही

है जिसने मात्र विदेशी होने के कारण किसी शब्द का बहिष्कार नहीं किया।'' हिंदी को राजभाषा का दर्जा प्राप्त है। उस समय की परिस्थितियों के अनुसार हिंदी ही एकमात्र ऐसी भाषा थी जो कि सर्वाधिक लोकप्रिय थी तथा जनता से सीधे संवाद स्थापित करने का माध्यम भी थी। राजभाषा का अपना विशेष महत्व होता है इसलिए महात्मा गांधी जी ने उसके लिए कुछ दिशा निर्देश बताए हैं। आपके अनुसार राजभाषा या राष्ट्रीय भाषा वह होना चाहिए जिसे आजाद भारत के बहुत से लोग बोलते हों। राष्ट्र की जनता के लिए वह भाषा आसान होनी चाहिए। जिनके लिए उसका प्रयोग किया जाना हो अर्थात् अमलदारों के लिए वह भाषा सरल होनी चाहिए। राजाभाषा एक ऐसी भाषा होनी चाहिए जिसमें देश का परस्पर धार्मिक, आर्थिक व राजनीतिक व्यवहार आसानी से होता रहे।

समय बड़ा बलवान होता है। पलभर में ही कोई धनकुबेर बन जाता है तो कुछ ही पलों में जिंदगी भर की कमाई भी खाक हो जाती है। भाषा के संबंध में भी यह बात सटीक ही बैठती है। जब देश में कंप्यूटरीकरण की बात चली तो चहुं ओर विरोध की लहर चल उठी थी। सभी की यह मान्यता थी कि अब देश में बेरोजगारी की समस्या और बढ़ जाएगी। परंतु मानव परिस्थितियों का दास होता है। आज की परिस्थितियों में भारत एक उभरता हुआ बाजार है। इन सबको देखते हुए बहुदेशीय कंपनियां अपनी मार्केटिंग और विज्ञापन अभियान हिंदी तथा अन्य भाषाओं में चला रही हैं। ये कंपनियां अपने उत्पादों के प्रचार प्रसार में करोड़ों रुपए खर्च कर रही हैं। एक अध्ययन के अनुसार भारत 35 करोड़ आबादी का मध्यमवर्गीय उपभोक्ता बाजार मौजूद है जो कि दुनिया के बहुत सारे देशों की आबादी से बहुत अधिक बड़ा है। यह भी अनुमान है कि भारत में केवल दस पंद्रह करोड़ लोग ही ऐसे हैं जो कि अंग्रेजी ठीक ठाक ढंग से बोलते व समझते हैं। इससे यह स्पष्ट होता है कि आज भी भारत की आबादी का एक बड़ा हिस्सा अभी भी हिंदी का अन्य भारतीय भाषाओं में ही अपना दैनंदिन कार्य और व्यापार निपटाता है। वह अपनी स्वदेशी भाषा में संवाद करना पसंद करता है। वह अपने सुनहरे सपने भी मातृभाषा में ही देखता है। अपने सपनों को कारगर रूप प्रदान करने के लिए वह नित्य जो सफल या असफल प्रयोग करता है, वह भी अपनी मातृभाषा के माध्यम से ही उनकी मंजिल तक पहुंचना चाहता है। इसलिए इस बात से सभी एकमत हैं कि अंग्रेजी की तमाम विश्व व्यापी ग्लैमर, तड़क और भड़क के बावजूद भी भारत में हिंदी और और भारतीय भाषाओं की उपस्थिति मजबूती के साथ बनी हुई है। सूचना प्रौद्योगिकी के इस युग में हिंदी पिछड़ने की बजाए तीव्र गति से अपने क्षेत्रफल में निरंतर विस्तार करती जा रही है। डॉ. राजेन्द्र प्रसाद जी ने कहा था कि ''जिस देश को अपनी भाषा और साहित्य के गौरव का अनुभव नहीं है, वह देश कभी उन्नत नहीं हो सकता।'' इसलिए समय की नजाकत को पहचानते हुए हमें समय के साथ स्वयं में भी बदलाव लाकर भाषा के प्रति अपने आप को अपडेट करना होगा।

कभी कभार हमें एहसास होता है कि संविधान में राजभाषा हिंदी के लिए प्रेरणा और प्रोत्साहन की बात क्यों कही गई है। इसमें दंड का प्रावधान क्यों नहीं किया गया। जब सरकारी कार्यालयों में अन्य नियमों को शक्ति से लागू किया जाता है तो फिर हिंदी को राजभाषा के रूप में अपनाने पर भेदभाव क्यों किया गया। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी जी ने इसे बहुत पहले ही पहचान लिया था। तभी तो यंग इंडिया के 27 अप्रैल 1921 को प्रकाशित अंक में उन्होंने बिना किसी लाग लपेट के सीधे साधे लफ्जों में कह दिया कि ''अगर मेरे हाथ में तानाशाही सत्ता हो तो मैं आज से ही विदेशी माध्यम के जरिए अपने लड़कों और लड़कियों की

शिक्षा बंद कर दूं और उसके शिक्षकों और प्रोफेसरों से यह माध्यम तुरंत बदलवा दूं या उन्हें बरखास्त करवा दूं। मैं पाठ्य पुस्तकों की तैयारी का इंतजार नहीं करूंगा वे तो माध्यम के पीछे–पीछे चली आएंगी। यह एक ऐसी बुराई है जिसका तुरंत इलाज होना चाहिए।''

हिंदी का जलवा अंग्रेज और अन्य विदेशी भी मान चुके थे। 1918 में प्रकाशित हिंदी नवजीवन के अंक से प्राप्त सूचनानुसार सीसी मेटकॉफ ने अपने भाषा गुरू जॉन गिलक्राफ्ट को 29 अगस्त, 1806 को एक पत्र लिखते समय इस तथ्या को स्वीकार किया था कि भारत के जिस भाग में मुझे काम करना पड़ा है वहां मुझे हर जगह ऐसे लोग मिले हैं जो हिंदुस्तानी बोल सकते हैं। इंग्लैंड के विद्वान डॉ. मैग्रेसर का भी मानना था कि ''हिंदी दुनिया की महान भाषाओं में से एक है। भारत को समझने के लिए हिंदी का ज्ञान अनिवार्य है।''

सूचना प्रौद्योगिकी के इस युग में हिंदी ने अपनी एक विशेष पैठ बना ली है। आप कंप्यूटर के हर क्षेत्र में हिंदी भाषा का ही नहीं अपितु अनेकानेक देशों और विदेशी भाषाओं में एकसाथ काम करने में सक्षम हैं। जहां पहले हमें विभिन्न सॉफ्टवेयरों का प्रयोग रोजमर्रा के कार्यों में करना पड़ता है, उसका जमाना अब बदल चुका है। अब हम बिना किसी सॉफ्टवेयर के यूनिकोड के माध्यम से अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकते हैं। हम ऑनलाइन और ऑफलाइन में अनुवाद कर सकते हैं। इसी दौरान हम दूसरे अन्य कार्यों को भी निबटा सकते हैं। एक्सेल में डेटा कार्य हिंदी के साथ साथ अन्य क्षेत्रीय भाषाओं में भी कर सकते हैं तो पावर प्वाइंट की प्रस्तुतियों को विभिन्न रंगों से भी सजा सकते हैं। आज हिंदी कहाँ नहीं है। सूचना प्रौद्योगिकी के इस युग में वह अंग्रेजी के साथ कदमताल करती जा रही है। कमी कहीं नजर आती है तो वह केवल हमारी इच्छा शक्ति की है। हमें स्वयं को अपडेट करना होगा। नवीनतम जानकारियों को उपयोग में लाते हुए अपनी रोजमर्रा की जिंदगी और कार्यालय के कार्यों को हिंदी भाषा के साथ–साथ अपनी क्षेत्रीय भाषा में भी निपटान होगा। जिस तरह एक व्यापारी जिस क्षेत्र में भी व्यापार करता है वह वहां की भाषा को सबसे पहले सीखता है। हमें भी व्यापारी बनना होगा और अपने अपने कार्यालयों में हिंदी भाषा के प्रचार प्रसार के साथ साथ उसे व्यवहार में लाकर उपयोगी सिद्ध करना ही होगा।

अंत में हमें खुशी है कि जिस तरह वर्षा के आगमन से पूर्व किसान अपने हल बैल व अन्य आधुनिक उपकरणों को साफ सुथरा कर तैयार बैठ जाता है, ठीक उसी तरह हमें भी नवीन प्रौद्योगिकी को अपनाकर अपने कार्य सिद्ध करना होगा। क्योंकि यदि अब भी हमने अपने आप को अपडेट करते हुए नवीनतम प्रौद्योगिकी को नहीं अपनाया तो हम न केवल स्वयं ही धोखा खा जाएंगे अपितु दौड़ में इतने पिछड़ जाएंगे कि फिर स्वयं को संभालना न केवल मुश्किल ही हो जाएगा अपितु हम कहीं के भी नहीं रह जाएंगे। बारिश की आशा में आसपास की ओर टकटकी लगाए एक किसान की बेबसी को भांपकर कवि कह उठता है कि –

''जमीन जल चुकी है, आसमान बाकी है।

सूखे कुँए तुम्हारा इम्तहान बाकी है।

बरस जाना इस बार वक्त पर हे मेघा...

किसी का मकान गिरवी है, किसी का लगान बाकी है...।।''

अंत में हम कह सकते हैं कि राजभाषा हिंदी जरूरत आज की है। हमें इसके प्रचार व प्रसार में पूरी तत्परता से जुटे रहना ही होगा।

केन्द्रीय बारानी कृषि अनुसंधान संस्थान
संतोष नगर, हैदराबाद–500059 (तेलंगाना)

गोवा प्रदेश में प्रशंसनीय हिंदी कार्यान्वयन

डॉ. शंभू बा. प्रभुदेसाई

गोवा विमोचन याने 1961 से पहले भी गोवा प्रदेश में हिंदी का प्रचार–प्रसार गुप्त रूप से से चल रहा था। सन् 1940 में गोवा के कुछ आजादी के दीवानों ने गोवा के सीमांत भागों में जाकर हिंदी भाषा की जानकारी प्राप्त की, जिसके पीछे महात्मा गांधी जी की वह आवाज थी ''हिंदी या हिंदुस्तानी ही एक ऐसी भाषा है जो इस देश की राष्ट्रभाषा बन सकती है। ''गोवा मुक्ति (1961) के पश्चात् गोवा राज्यों में हिंदी पढ़ने–पढ़ाने की व्यवस्था स्कूल, महाविद्यालय, विश्वविद्यालय, स्वायत्त संस्थाएं खोलकर प्रारंभ की गई। इससे पूर्व एसएससी उत्तीर्ण करने के लिए नजदीक के प्रांत कोल्हापुर, या पूना जाना पड़ता था और जाने के लिए पासपोर्ट का होना आवश्यक था। पांचवीं कक्षा से एसएससी तक माध्यमिक शालाएं भी शुरू की गई। त्रिभाषा सूत्र के अनुसार द्वितीय भाषा के रूप में हिंदी भाषा का पढ़ना शुरू हुआ। हिंदी 'ऐच्छिक' भाषा बन गई। सन् 1975 में गोवा राज्य के लिए स्वतंत्र गोवा एसएससी बोर्ड की स्थापना हुई और गोवा बोर्ड ने ऐच्छिक हिंदी को अनिवार्य द्वितीय भाषा के रूप में स्थान दिया तब से हिंदी भाषा का असली प्रचार गोवा राज्य में प्रारंभ हुआ और भाषा की हिंदी प्रचार संस्थाओं का उद्‌गम हुआ।

गोमंतक राष्ट्रभाषा विद्यापीठः गोमंतक राष्ट्रभाषा विद्यापीठ 1939 में मडगाँव में राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा और महाराष्ट्र सभा, पुणे की कक्षाओं का संचालन कर रहा है। राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, बर्धा की ओर से हिंदी प्रचार का सूत्रपात गोवा में पराधीन रहने के समय से ही हुआ। सन् 1951–60 में पुर्तगाली शासन ने राष्ट्रभाषा के प्रचार पर प्रतिबंध लगा दिया। फिर दिसंबर, 1961 में गोवा के पुर्तगाली दासता से मुक्त होते ही हिंदी प्रेमियों ने हिंदी प्रचार का कार्य प्रारंभ किया और नाट्य संस्था के द्वारा उत्साहप्रद प्रगति की। पूरे गोवा में इसके 40 प्रचार परीक्षा केन्द्र हैं। हर वर्ष सितंबर एवं फरवरी माह में परीक्षाओं का संचालन किया जाता है। बड़ी तादाद में प्रशिक्षणार्थी बैठते हैं। शिक्षक–प्रशिक्षणार्थी प्रवीण, पंडित, साहित्य विशारद जैसी उपाधि प्राप्त कर रहे हैं। विद्यापीठ द्वारा गोमांचल नामक त्रैमासिक हिंदी पत्रिका का प्रकाशन केंद्रीय हिंदी निदेशालय, मानव संसाध विकास मंत्रालय भारत सरकार की आर्थिक सहायता से किया जा रहा है। मडगांव में विद्यापीठ का पुस्तकालय भी है पुस्तकालय में शैक्षिक पाठ्यपुस्तकें संदर्भ ग्रंथ उपलब्ध हैं। गोवा में अपने ढंग का शिविर, एकांकी स्पर्धा, कहानी लेखन स्पर्धा संगोष्ठी आदि कार्यक्रम किए जाते हैं। गंगाशरण सिंह पुरस्कार से सम्मानित श्री मोहनदास सुर्लकर, श्री माधव पंडित, श्री विनायक नार्वेकर एवं अन्य सक्रिय सदस्यों का विद्यापीठ की गतिविधियों का आजतक लगातार आयोजन करने में सराहनीय योगदान रहा है।

दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभाः राष्ट्रीय एकता तथा स्वतंत्र भावना के संदेश को देश की साधारण जनता तक पहुंचाना, जन–हृदय में देश भक्ति की चेतना उद्‌बद्ध करने के पवित्र संकल्प से राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने जिस राष्ट्र भाषा के आंदोलन को आरम्भ किया, उसके तहत रूपायित संस्था है दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा। गांधीजी ने दक्षिण के आंध्रप्रदेश, तमिलनाडु, कर्नाटक और केरल राज्य को एक इकाई मानकर यहां के लोगों को हिंदी सिखाने का कार्य आरंभ किया। ''यह छोटा–सा बीज मद्रास नगर तथा दक्षिण चारों प्रांतों के देशप्रेमी लोगों

के स्नेह–जल से सिंचित होकर क्रमशः अंकुरित, पल्लवित तथा परिवर्धित हुआ और शाखाओं तथा उप शाखाओं से युक्त एक महान वृक्ष बन गया। महात्मा गांधी कहते हैं कि यह आप पर निर्भर है कि मद्रास तथा अन्य स्थानों में हिंदी सीखने की जो सुविधाएं प्राप्त हैं, उनका लाभ उठाएं। जब तक आप हिंदी नहीं सीखेंगे, तब तक आप शेष भारत से अपने को बिल्कुल अलग रखेंगे।'' सन् 1964 में दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा भारत के संसद के द्वारा राष्ट्रीय महत्व की संस्था घोषित हुई, जिससे इसे विश्वविद्यालय स्तर के पाठ्यक्रमों की शिक्षा देने और डिग्रियाँ प्रदान करने का अधिकार मिला। सभा ने अब तक अपने जीवन काल में तीन जयंतियां बनायीं। रजत जयंती 1949, स्वर्ण जयंती 1971, सन् 1993 में सभा का अमृतोत्सव बड़े पैमाने पर मनाया गया। सभा विशारद व प्रवीण उपाधिकारियों का प्रमाणित प्रचारक नाम से पंजीकरण करती है, जो गाँवों व शहरों में शाम व सबेरे वर्ग संचालक करके सभा की ओर से हिंदी का प्रचार करते हैं।

सभा विगत 80 सालों से, पहले 'हिंदी प्रचारक' तथा बाद में 'हिंदी प्रचार समाचार' नाम से अपना एक मुख–पत्र प्रकाशित कर रही है, जिसमें सभा तथा दक्षिण के हिंदी प्रचार आंदोलन की गतिविधियों का परिचय मिलता है। इसके अलावा सभा 'दक्षिण भारत' नामक एक त्रैमासिक पत्रिका का प्रकाशन भी विगत 45 वर्षों से कर रही है। इसमें साहित्यिक रचनाएँ, विशेष रूप से दक्षिण के हिंदी लेखकों को दी जाती हैं।

दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा मद्रास की एक शाखा पणजी शहर में है। यह हिंदी प्रचार–प्रसार परीक्षाओं का आयोजन कर रही है। गोवा में डिग्री स्तर पर एक हिंदी प्रशिक्षण महाविद्यालय शुरू करने की योजना पर यह संस्था सोच–विचार कर रही है। हिंदी टंकण प्रशिक्षण तथा अनुवाद प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों का संचालन करने के बारे में भी संस्था विचार कर रही है।

मुंबई हिंदी विद्यापीठ : बंबई हिंदी विद्यापीठ की स्थापना 12 अक्टूबर, 1938 को मुंबई महानगर के कुछ उत्साही प्रचारकों द्वारा राष्ट्रीय एकता के कार्य में सहयोग देने हेतु हुई, 1963 में विद्यापीठ का रजत जयंती महोत्सव स्थानीय शिवाजी पार्क में बड़ी धूमधाम से संपन्न हुआ। हिंदी प्रचार कार्य में इन दिनों बहुत प्रगति हुई है। जिला, तालुका तथा नगरों में विद्यापीठ द्वारा प्रमुखों की नियुक्ति प्रतिवर्ष की जाती है तथा ये प्रमुख अपने–अपने विभाग में नए–नए केन्द्रों की स्थापना कर हिंदी प्रचार कार्य को आगे बढ़ा रहे हैं।

गाँव–गाँव में हिंदी प्रचार को लक्ष्य बनाकर विद्यार्थियों की संख्या प्रतिवर्ष बढ़ायी जा रही है। अभी कुछ वर्ष पहले विद्यापीठ की परीक्षार्थी संख्या प्रतिवर्ष दो लाख से भी अधिक हो गई है। रंगमंच द्वारा हिंदी की सेवा करने वाली विद्यापीठ इस महानगर की एकमात्र संस्था है, जो सदैव प्रादेशिक भाषाओं के साहित्य उपन्यास, नाटक आदि को हिंदी में रूपांतरित करके नाटक के रूप में प्रतिवर्ष मंचित करती है। सांस्कृतिक कार्यक्रमों के अंतर्गत प्रतिवर्ष केंद्रीय अनुदान से मुंबई और गोवा में एकांकी स्पर्धाओं का आयोजन किया जा रहा है।

मुंबई हिंदी विद्यापीठ का कार्य भी गोवा में 1970 से शुरू हुआ। यह अखिल भारतीय हिंदी प्रचार संस्था है। मुंबई हिंदी विद्यापीठ की गोवा राज्य शाखा पेडणे में है। साहित्य सुधारक और साहित्य रत्नाकर विद्यापीठ की बीए, एमए समकक्ष परीक्षा है। हर साल इन परीक्षाओं में गोवा के विद्यार्थी, शिक्षक बड़ी संख्या में बैठते हैं। प्रत्येक वर्ष विद्यापीठ द्वारा गोवा में छात्रों के लिए राज्यस्तरीय हिंदी निबंध प्रतियोगिता, वकृत्व प्रतियोगिता, हिंदी एकांकी स्पर्धा, राज्यस्तरीय सम्मेलन, अखिल भारतीय सम्मेलन आयोजित किए जाते हैं। विद्यापीठ के साठ से सत्तर केन्द्र गोवा में हैं।

गोवा राज्य शिक्षा संस्थान : सन् 1975–76 में शिक्षा के गुणात्मक विकास तथा शिक्षक प्रशिक्षण संशोधन हेतु गोवा सरकार ने भारत सरकार के निर्देशानुसार गोवा राज्य शिक्षा संस्थान की स्थापना की। यहां स्कूलों में पढ़ाई जाने वाली भारतीय भाषाओं के शिक्षकों को मार्गदर्शन एवं प्रशिक्षण संपन्न होता

है। अध्ययन के साथ–साथ साहित्य निर्माण का कार्य भी चलता है। केन्द्रीय हिंदी संस्थान, आगरा तथा हैदराबाद की तरफ से शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम यहां आयोजित किए जाते हैं। माध्यमिक स्तर पर लगभग 500 शिक्षकों और उच्च माध्यमिक स्तर पर 100 शिक्षकों ने इस प्रशिक्षण का लाभ उठाया है। उक्त संस्थान स्वयं स्कूलों का निरीक्षण करता है और विद्यार्थियों तथा हिंदी शिक्षकों का मार्गदर्शन करता है। साथ की हिंदी विकास के लिए कार्यक्रम बनाता है।

केंद्रीय हिंदी संस्थान : बिहार के एक हिंदी प्रेमी स्वर्गीय श्री देवदत्त विद्यार्थी ने काशी नागरी प्रचारिणी सभा के कार्यकर्ताओं के सक्रिय सहयोग से आगरा में एक हिंदी शिक्षण विद्यालय की स्थापना की। जिसे वर्ष 1961 में भारत सरकार ने अखिल भारतीय स्वरूप देकर विभिन्न भाषा क्षेत्रों में हिंदी अध्यापन का कार्य करने वाले अध्यापकों और प्रचारकों को हिंदी भाषा के वैज्ञानिक और कुशल प्रशिक्षण हेतु केंद्रीय हिंदी शिक्षण मंडल नाम रखा जिसे बाद में केंद्रीय हिंदी संस्थान के नाम से जाना जाने लगा। इसके प्रथम अध्यक्ष दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा के प्रमुख संस्थापक कार्यकर्ता और भारतीय संविधान सभा के सदस्य स्वर्गीय मोटूरि सत्यनारायण जी थे।

प्रारंभ में संस्थान का उद्देश्य केवल हिंदीतर क्षेत्रों में पढ़ाने वाले शिक्षकों को हिंदी शिक्षण का व्यवस्थित प्रशिक्षण देना ही था। अब इसका क्षेत्र बहुत बढ़ गया है। मुख्यालय आगरा के अतिरिक्त मैसूर, हैदराबाद, दिल्ली, गुवाहाटी, शिलांग, दीमापुर, भुवनेश्वर और अहमदाबाद में इसके केंद्र हैं। शीघ्र ही कोलकाता के संस्थान का नया केन्द्र खुलने वाला है। पूर्वांचल में हिंदी की तीन केंद्र गुवाहाटी, शिलांग, दीमापुर है। पूर्वांचल के राज्यों में हिंदी एक सशक्त संपर्क भाषा के रूप में प्रयुक्त होती है। गुवाहाटी हो या आइजोल, कोहिमा हो या इंफाल, शिलांग, तिनसुखिया या ईटानगर इन सारे क्षेत्रों में अगर कोई एक भाषा है जो समान रूप से समझी जाती है, तो वह है हिंदी।

गोवा विश्वविद्यालय : गोवा विश्वविद्यालय के अंतर्गत हिंदी भाषा के प्रचार–प्रचार हेतु स्वतंत्र हिंदी विभाग 1985 से कार्यरत हैं। जहां एम.ए., एम.फिल तथा पी–एच.डी. की कक्षाएं चलती हैं। तुलनात्मक साहित्य, काव्य उपन्यास, अनुवाद तथा अनुसंधान कार्य पर हिंदी विभाग जोर दे रहा है। यहां स्नातकोत्तर स्तर पर अनुवाद, प्रयोजनमूलक हिंदी, कार्यात्मक हिंदी आदि विषय वैकल्पिक तौर पर लेने का प्रावधान है। हर वर्ष इन उपाधियों से अनेक विद्यार्थी उत्तीर्ण होते हैं। गोवा विश्वविद्यालय से संबद्ध सभी गैर व्यावसायिक महाविद्यालयों तथा मान्यता प्राप्त संस्थाओं में बी.ए. स्तर तक हिंदी पढ़ाई जाती है जो अपने आप में सक्रिय योगदान है।

हिंदी प्रचारक संस्थाओं का बहुत बड़ा हाथ आज हिंदी को गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त कराने में तथा हिंदी के प्रचार–प्रसार में रहा है। राष्ट्रीय आंदोलन के प्रादुर्भाव के दिनों में राजभाषा हिंदी के प्रचार को लक्ष्य करके कई संस्थाओं ने जन्म लिया। देश के विभिन्न प्रांतों में हिंदी के अनुकूल वातावरण सृजित करने में तथा लोगों को हिंदी शिक्षण की सुविधाएँ देने में निःस्वार्थ भाव से संस्थान प्रयत्नशील रहा है। इनमें से अधिकतर आज भी निरंतर सेवा में संलग्न हैं। इन स्वैच्छिक संस्थाओं की सेवाओं का ज्ञान प्राप्त करना हर हिंदी प्रेमी का मौलिक धर्म है। ''कार्यालय हिंदी, प्रशासनिक हिंदी या राजभाषा हिंदी के उपरोक्त उदाहरण इस दृष्टि से लिए गए है जिससे राजभाषा हिंदी की विषय प्रकृति का स्पष्ट बोध हो सके।

गोवा राज्य में कुल 190 सरकारी कार्यालय, उपक्रम, निगम और बैंक आदि शामिल हैं। राजधानी पणजी में जहां एक ओर (एनआईओ) राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान है, जहां से अंटार्कटिका तक शोध–यात्री दल जाता है। समुद्री हवाओं और तापमान परिवर्तन का लेखा–जोखा होता है। वहीं वास्को शहर में अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पोत निर्माण का कार्य गोवा शिपयार्ड लिमिटेड में होता है। केंद्रीय सरकार और राज्य सरकार के कार्यालयों और

उपक्रमों के अतिरिक्त विभिन्न निगम व बैंक आदि संस्थान राजभाषा कार्य में सक्रिय है। विश्वविद्यालय स्तर पर हिंदी में शिक्षण और शोध संस्थान के कार्यक्रम जारी है। विभिन्न साहित्यिक, सांस्कृतिक उपक्रम व संस्थान, गोमंतक राष्ट्रभाषा विधायिका, इंस्टीट्यूट मिनेजिस, ब्रागांजा, बंबई हिंदी विद्यापीठ आदि भी सक्रिय रूप से हिंदी प्रचार–प्रसार और संगोष्ठी विमर्श के कार्यक्रम जारी रखते हैं।

गोवा क्षेत्र में दक्षिण गोवा नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, उत्तर गोवा और नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, मडगांव, उप निदेशक (कार्यान्वयन) गृह मंत्रालय राजभाषा विभाग के नियंत्रणाधीन कार्यरत है। गोवा शिपयार्ड लिमिटेड के संयोजन में वर्ष 1996 में गठित नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, दक्षिण गोवा, वर्ममान के अध्यक्ष रियर एडमिरल शेखर मित्तल, अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक, गोवा शिपयार्ड लिमिटेड की अध्यक्षता में अपनी दायित्वों का निर्वहन कर रही है। प्रस्तुत समिति में सरकारी उपक्रम/निगम, सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक और केंद्रीय सरकारी कार्यालय मिलाकर कुल 54 सदस्य कार्यालय हैं।

गोवा राज्य में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों, सरकारी उपक्रमों और भारतीय रिजर्व बैंक, ग्रामीण विकास बैंक, भारतीय औद्योगिक विकास बैंक सहित सभी राष्ट्रीयकृत बैंकों, कंपनियों और निगमों, उद्यमों में राजभाषा, हिंदी का कार्यान्वयन गंभीरता से किया जा रहा है। यदि सभी संबंधित मिल–जुलकर, ईमानदारी से प्रयास करेंगे तो राजभाषा हिंदी के प्रयोग में कुछ भी आड़े न आएगा।

गोवा जैसे छोटे सुनहरे प्रदेश में मराठी, कोंकणी और हिंदी भाषाओं का विकास एक दूसरे के सहयोग तथा सद्भावना से ही संभव है। हर वर्ष यहां हिंदी फिल्म गीत गायन, हिंदी एकांकी, हिंदी निबंध, हिंदी नाटक, हिंदी वकृत्व, हिंदी प्रश्न मंजूषा जैसे सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं। कुछ दिन पूर्व अंतर्राष्ट्रीय फिल्म महोत्सव भी संपन्न हुआ। गोवा के हर घर में चाहे वे झोपड़ी या फ्लैट या फिर बंगला, हर एक के जबान पर हिंदी होती है। यहां के बाजारों, दूकानों रेस्टोरेंटो तथा समुद्री तटपर भी अब हिंदी भाषा का उपयोग अंग्रेजी, मराठी या कोंकणी भाषा से अधिक हो रहा है। यह मानना होगा कि राष्ट्रभाषा, राजभाषा के रूप में गोवा में हिंदी स्वीकृत है। हिंदी का यह प्रचार–प्रसार निश्चित रूप से सराहनीय एवं आनंददायी है।

नराकास द. गोवा में अपनी स्थापना–काल से ही सदस्य कार्यालयों के सहयोग से राजाभाषा नीति की मूल भावना के अनुरूप, प्रेरणा एवं प्रोत्साहन के माध्यम से राजभाषा हिंदी के प्रति सौहार्दपूर्ण वातावरण सृजित करने तथा राजभाषा कार्यान्वयन में स्टाफ सदस्यों की जागरूकता को विकसित करने के लिए समय–समय पर प्रयोजनमूलक हिंदी कार्यशालाएं, पुनश्चर्या पाठ्यक्रम, अनुकूलन, राज्य स्तरीय प्रतियोगिताएं टंकण/आशुलिपि कक्षाएँ, राजभाषा सम्मेलन आदि आयोजित किए गए। कार्यक्रम नराकास, दक्षिण गोवा ने अपनी उपलब्धियों के लिए आरंभ से ही गृह मंत्रालय के क्षेत्रीय राजभाषा पुरस्कार प्राप्त कर पुरस्कारों की गौरवशाली परंपरा स्थापित की है। नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, दक्षिण गोवा स्थापना काल से ही डॉ. शंभू बाबय प्रभुदेसाई, उप प्रबंधक (राजभाषा) गोवा शिपयार्ड लिमिटेड समिति के सदस्य सचिव रहे हैं एवं उन्हें वर्ष 1996 से केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण संस्थान द्वारा दक्षिण गोवा के सर्वकार्यभारी अधिकारी (आशुलिपि/टंकक), हिंदी शिक्षण योजना के रूप में मनोनीत किया था।

दक्षिण गोवा में हिंदी शिक्षण योजना की ओर से हिंदी आशुलिपि प्रशिक्षण दिलाने के लिए कोई हिंदी आशुलिपि अनुदेशक नियुक्त नहीं है, तथापि हिंदी आशुलिपि प्रशिक्षण के लिए शेष कर्मचारियों को प्रशिक्षण दिलाने हेतु विभागीय तौर पर व्यवस्था की गई।

गोवा शिपयार्ड लिमिटेड जहां एक ओर राजभाषा हिंदी के प्रचार–प्रसार एवं प्रभावी कार्यान्वयन हेतु कार्य कर अपने संवैधानिक कर्तव्य का निर्वाह कर रहा है वहीं दूसरी ओर हिंदी भाषा तथा हिंदी

साहित्य के प्रति अपने अधिकारियों/कर्मचारियों की अभिरूचि में अभिवृद्धि के लिए लगातार प्रयासरत है। अपने कार्यालय में हिंदी का माहौल तैयार करने के लिए, अपने–अपने दायित्वों से संबंधित विषयों पर हिंदी में मौलिक पुस्तकें पढ़ने तथा अन्य विषयों से संबंधित शब्द भंडार को समृद्ध करने के लिए गोवा शिपयार्ड लिमिटिड का हिंदी पुस्तकालय समृद्ध है। इन पुस्तकों में सामाजिक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, साहित्यिक तथा चारित्रिक पुस्तकों का समावेश है जो कि जीवन के हर पहलुओं को छूती है।

राष्ट्रभाषा तथा राजभाषा हिंदी का गोवा शिपयार्ड लिमिटेड में प्रचार–प्रसार तथा इसके विकास हेतु चलाई जाने वाली गतिविधियां किसी अनुष्ठान से कम नहीं आंकी जा सकती क्योंकि इसमें हिंदी अनुभाग के अथक प्रयास, सक्रिय सहयोग तथा प्रोत्साहन देने वाले वरिष्ठतम अधिकारियों से लेकर कनिष्ठतम कर्मचारियों की हिंदी के प्रति निष्ठा और प्रतिबद्धता का अमूल्य योगदान रहा है। गोवा शिपयार्ड लिमिटेड परिवार की हिंदी के प्रति अगाध निष्ठा एवं प्रतिबद्धता का ही परिणाम है कि गृह मंत्रालय, भारत सरकार तथा अनेक हिंदी भाषा संगठनों ने गोवा शिपयार्ड लिमिटेड को समय–समय पर निम्न सर्वोच्च राजभाषा पुरस्कारों से नवाजा गया है। गोवा शिपयार्ड लिमिटेड ने केंद्रीय सरकार के सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम के तहत राजभाषा में श्रेष्ठ कार्य निष्पादन के लिए गोवा शिपयार्ड लिमिटेड ने वर्ष 2007–08 का प्रथम स्थान इंदिरा गांधी राजभाषा पुरस्कार प्राप्त किया अब तक गोवा शिपयार्ड लिमिटेड ने यह महत्वपूर्ण उपब्लधि सातवीं बार प्राप्त की है। वर्ष 1997–98, 1999–2000, 2004–05, 2007–08, 2008–09 2010–11, 2012–13, 2013–14, 2014–15, 2015–16 (राजभाषा कीर्ति पुरस्कार) में गृह मंत्रालय के इस गौरवशाली पुरस्कार गोवा शिपयार्ड लिमिटेड को प्रदान किया गया है। केन्द्रीय सचिवालय हिंदी परिषद नई दिल्ली की 44वीं हिंदी टंकण अखिल भारतीय प्रतियोगिता में प्रथम तीन पुरस्कार हमारे कर्मचारियों ने प्राप्त किया। गृह पत्रिका हिंदी विशेषांक के लिए इटली में राजभाषा गृह पत्रिका साथ ही राजभाषा शील्ड गोवा शिपयार्ड को प्रदान की गई है। गोवा शिपयार्ड लिमिटेड ने वर्ष 2006–07, 2007–08, 2008–09 और 2009–10 के लिए नराकास दक्षिण गोवा द्वारा प्रदत्त केन्द्र सरकार के उपक्रमों के अंतर्गत प्रथम स्थान स्वरूप 'राजभाषा रोलिंग शील्ड' प्राप्त की है। गोवा शिपयार्ड लिमिटेड नराकास दक्षिण गोवा के संयोजक के रूप में जिम्मेदारी को सफलतापूर्वक निर्वाह करते हुए नराकास, दक्षिण गोवा को राष्ट्रीय स्तर पर पहचान दिलाई है, नराकास, दक्षिण गोवा को क्षेत्रीय स्तर पर राजभाषा नीति के उत्कृष्ठ कार्य हेतु वर्ष 1993–94, 1994–95, 1995–96, 1997–98, 1998–99, 2000–01, 2001–02, 2002–03,2003–04, 2010–11, 2011–12 एवं 2013–14, 2014–15 के दौरान 'ग' क्षेत्र में राजभाषा हिंदी के प्रगामी प्रयोग की दिशा में सर्वोत्कृष्ठ कार्य करने वाली समिति के रूप में भारत सरकार, गृह मंत्रालय राजभाषा विभाग द्वारा क्रमशः तृतीय एवं द्वितीय पुरस्कार प्रदान किए गए।

उत्तर गोवा नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति का गठन वर्ष 1986 में हुआ एवं अध्यक्षता का दायित्व सीमा शुल्क एवं उत्पाद आयुक्त कार्यालय पणजी को सोपा गया तत्पश्चात् यह कार्यभार राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान ने संभाला। गोवा राजभाषा कार्यान्वयन समिति के वर्तमान अध्यक्ष के रूप में मुख्य आयकर आयुक्त पणजी ने गृह मंत्रालय राजाभाषा विभाग के दिनांक 22.8.2006 अ.शा. पत्र संख्या 12024/6/2005–रा.भा. (का–2) द्वारा राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान से 27/3/2007 को कार्यभार संभाला। गोवा में दुबारा, वर्तमान में यह कार्यभार आयकर आयुक्त निदेशालय के पास है। समिति को कई बार क्षेत्रीय पुरस्कारों से पुरस्कृत किया गया है। विगत वर्ष से पणजी में ''बैंक नराकास' सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया तथा भारतीय खान ब्यूरो में मडगांव में एक और नराकस प्रारंभ की गई है।

देवनागरी लिपि केवल हिंदी की ही लिपि नहीं

है। यह लिपि भारत के संविधान की आठवीं अनुसूची में सम्मिलित संस्कृत, मराठी, डोगरी, मैथिली, बोडो तथा नेपाली की भी अधिकृत लिपि है। कोंकणी और सिंधि तथा संथाली भाषाएं भी इसे अपना रही हैं। उर्दू के लिए भी इसका प्रयोग बढ़ रहा है। प्राचीनकाल में प्रचलित ध्वनि मूलक लिपि के दो भेद किए गए हैं, अक्षरात्मक लिपि जिसे देवनागरी लिपि कहा गया है और वर्णात्मक लिपि जिसे रोमन लिपि कहा गया है।

किसी भी शब्द या अक्षर या सही उच्चारण जानने पर देवनागरी लिखने के नियमों से परिचित कोई भी व्यक्ति उसको शुद्ध/सही रूप में लिख सकता है। सरल शब्दों में कहें तो देवनागरी लिपि में वही लिखा जाता है जो बोला जाता है और जो बोला जाता है वही लिखा जाता है। नागरी लिपि में एक ध्वनि के लिए एक ही लिपि चिन्ह हैं यह विशेषता विश्व की अनेक लिपियों, जैसे रोमन तथा फारसी आदि में नहीं है। देवनागरी लिपि भारत के एक विशाल भाषा क्षेत्र की लिपि है। देवनागरी लिपि को संसार की एकमात्र वैज्ञानिक लिपि या पूर्णतः वैज्ञानिक लिपि कहा जाता है। देवनागरी लिपि से ही राजस्थानी, गुजराती, मराठी, उड़ीया, बंगला, मैथिलि और असमिया विकसित हुई है।

देवनागरी लिपि का महत्व अपने ध्वनात्मक और वैज्ञानिक गुणों के आधार पर है तथा नागरी लिपि विश्व की एक सर्वोत्तम लिपि है जो कुछ परिवर्तनों, परिवर्धनों के साथ एक विश्व लिपि बनने की क्षमता रखती है।

आज हिंदी भाषा और साहित्य ही नहीं अपितु विज्ञान, शिक्षा, चिकित्सा, अभियांत्रिकी, विधि, कृषि, उद्योग, प्रौद्योगिकी क्षेत्रों में हिंदी का प्रयोग हो रहा है। सभी भारतीयों के एकात्मकता निर्माण करने में हिंदी की भूमिका महत्वपूर्ण है। सभी मनिषियों द्वारा पारस्परिक व्यवहार की आपस में मिलने–जुलने की भाषा के रूप में विकसित होकर एक महान राष्ट्र भारत की सभी प्रकार से सुभाषा कही जाने की अधिकारिणि हैं अतः हिंदी का भविष्य उज्जवल ही नहीं स्वर्णिम भी है। हिंदी भारतीय अस्मिता की द्योतक है। विश्व में हमारी पहचान है, हमारी समृद्ध संस्कृति की भाषा देश की राजभाषा, मातृभाषा, संपर्क भाषा से आगे बढ़कर विश्व भाषा बनने की ओर अग्रसर है। हिंदी संयुक्त राष्ट्र संघ की अधिकारिक भाषा बने तो भारत देश के लिए यह बड़े गर्व की बात होगी। दैनंदिन का सरकारी कामकाज करने के लिए अनुकूल और अनुकरणीय वातावरण बनाने में हिंदी के प्रति हमारे अधिकारियों की हीन भावना को बदलना पड़ेगा। विदेशों में अपने दूतावासों तक यह संदेश पहुँच जाएगा तभी हिंदी को संयुक्त राष्ट्र संघ की अधिकारिक भाषा बनाने का सही गौरव मिलेगा तथा देवनागरी लिपि राष्ट्रलिपि होने के सर्वथा उपयुक्त है, कंप्यूटर क्षेत्र में हिंदी का प्रयोग सहज होने के प्रयोग में निरंतर वृद्धि हो रही है। आज हिंदी इंटरनेट की भाषा बनकर विश्व प्रतिस्पर्धा हेतु तैयार खड़ी है। कंप्यूटर के माध्यम से हिंदी को विश्व स्तर की भाषा बना सकते हैं।

सूचना प्रौद्योगिकी के अभूतपूर्ण विकास के परिणामस्वरूप संसार में विभिन्न प्रगतिशील राष्ट्रों की आपसी दूरी कम होती जा रही है। संसार के सभी विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों में हिंदी भाषा और साहित्य का अध्ययन अध्यापन जोर पकड़ता जा रहा है। इस क्रम में वह दिन दूर नहीं जब विश्व भाषा के रूप में हिंदी विकसित हो जाएगी। इसी दृष्टि से पहले से ही विश्व हिंदी दिवस मनाया जा रहा है। आनेवाले दिनों में भूमंडलीकरण, निजीकरण और औद्योगिकीकरण के प्रभाव में आकर विश्व बाजार की सबसे बड़ी भारत की भाषा हिंदी सागरों की सीमा को लांघ कर देश–विदेश में अपना स्थान बना लेगी। यह कहना यथार्थ होगा ''झंडा ऊंचा रहे हमारा तिरंगा, ठीक ऐसे की भाषा ऊंची रहे हमारी हिंदी, क्योंकि वह सिंध भूमि की बिंदी है और संसार की बिंदी बनने वाली है।''

उप महाप्रबंधक (राजभाषा)
गोवा शिपयार्ड लिमिटेड एवं सदस्य सचिव
नराकास, दक्षिण गोवा, वास्को–द–गामा गोवा

हिंदी उत्थान के प्रमुख सेतु

श्रीनिवास राव

हिंदी दशकों से हमारी संपर्क भाषा बनी हुई है और हमारे संविधान में इसे राजभाषा का दर्जा दिया गया है। इसके प्रचार–प्रसार के लिए केंद्र सरकार द्वारा विधिवत् कार्यप्रणाली भी तैयार की गई है। इसमें कोई शक नहीं है कि हमारे देश में देश से बाहर भी हिंदी खूब बोली जाती है। संपर्क भाषा के रूप में तो हिंदी की रफ्तार अच्छी है लेकिन लिखने और पढ़ने की बात करें तो यह रफ्तार कुछ धीमी है। इसके कई कारण हैं। आइए, हम हिंदी के उत्थान के कुछ ऐसे सेतुओं की विवेचना करें जो हिंदी को राजभाषा से कहीं आगे ले जा सकते है और इसे राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर स्थापित कर सकते हैं।

रोजगार प्रदाता–एक समय था जब लोग हिंदी को आजीविका से बमुश्किल जोड़ पाते थे। स्कूल में हिंदी शिक्षक या कॉलेज में हिंदी व्याख्याता अथवा केंद्र सरकार के दफ्तर में हिंदी अधिकारी या हिंदी अनुवादक बनने तक ही सोचा जा सकता था। हिंदी के माध्यम से रोजगार पाने का क्षेत्र बहुत सीमित था, लेकिन आज समय बदल चुका है। यूनिकोड के आने से सूचना प्रौद्योगिकी में हिंदी के मानों पंख लग गए हैं। आज सभी सरकारी बैंकों, उपक्रमों, कार्यालयों, गैर–सरकारी संगठनों, स्वायत्तशासी संस्थानों में हिंदी का बोलबाला बढ़ रहा है। इतना ही नहीं, अच्छे अनुवादको की मांग इतनी बढ़ गई है कि वे यदि चाहें तो निजी अनुवाद एजेंसियों के लिए घर बैठे काम कर सकते हैं और अच्छी कमाई कर सकते हैं। आज अनुवाद करोड़ों का उद्योग बन चुका है। राजधानी दिल्ली, गुड़गांव, नोएडा, पुणे, बैंगलूरु, चैन्ने, हैदराबाद जैसे बड़े शहरों में ऐसी अनेक प्राइवेट अनुवाद एजेंसियां सक्रिय रूप से अपना कारोबार कर रही हैं। केंद्र सरकार के दफ्तरों में राजभाषा पदों के मानदंड मौजूदा हैं जिनकी समय–समय पर निरीक्षण एजेंसियों द्वारा समीक्षा भी की जाती है। सरकारी बैंकों ने इस दिशा में एक बड़ी अच्छी पहल की है, वे यूनिवर्सिटी में हिंदी पढ़ रहे छात्रों को कैम्पस सेलेक्शन द्वारा राजभाषा अधिकारियों की भर्ती भी कर रहे हैं। लोग आजीविका के लिए हिंदी भाषी राज्यों से हिंदीतर भाषी राज्यों में जाते रहे हैं। ऐसी स्थिति में हिंदी का ज्ञान फायदेमंद साबित हो रहा है। हम सभी जानते हैं कि पूरे हिंदुस्तान में हिंदी को संपर्क भाषा का दर्जा मिला हुआ है। इस दर्जे का महत्व दिन–ब–दिन बढ़ रहा है। नौकरियों में हिंदी जानने वाले को प्राथमिकता दी जा रही है।

स्कूल और कॉलेज–बच्चों में हिंदी के प्रति रुझान पैदा करना बहुत जरूरी है। इसकी शुरूआत घर से ही की जानी चाहिए। पहले तो हमें अंग्रेजी कान्वेंट स्कूलों में अपने बच्चों को पढ़ाने का मोह छोड़ना होगा। ऐसा नहीं है कि स्कूल पाठ्य पुस्तकें हिंदी में उपलब्ध नहीं हैं। आज लगभग सभी विषयों की पुस्तकें हिंदी में भी उपलब्ध हैं ओर जो उच्चतर स्तर की पाठ्य सामग्री केवल अंग्रेजी में हैं, उन्हें भी सरकार द्वारा सरल हिंदी में तैयार करने का काम किया जा रहा है। अगर हम हिंदी में सोचते हैं तो

पढ़ाई का माध्यम हिंदी में होने और हिंदी पाठ्य पुस्तकें पढ़ने से बच्चे बेहतर ज्ञानार्जन कर सकेंगे और बेहतर अंक भी प्राप्त कर सकेंगे। इसके बाद हिंदी को अपना बनाने की पहल करना शिक्षकों की जिम्मेदारी बनती है। उन्हें हिंदी माध्यम और हिंदी विषय लेने वाले विद्यार्थियों को प्रोत्साहित करना चाहिए। स्कूल के सूचना पट्ट में, पुस्तकालय में, बातचीत और कामकाज में हिंदी का महत्व रेखांकित करना होगा। हिंदी शिक्षकों/प्राध्यापकों को पर्याप्त आदर और मान्यता दी जानी चाहिए। प्राथमिक स्तर के बच्चों की अच्छी पत्र–पत्रिकाएं इतनी मात्रा में उपलब्ध कराई जाएँ कि लगभग सभी बच्चों के पास उनकी पसंदीदा कहानियां, कविताएँ और अन्य पठन सामग्री हिंदी में उपलब्ध हो। शिक्षा पद्धति को कोसने के बजाए अभिभावकों को अपनी सोच बदलनी होगी और यह समझना होगा कि हिंदी माध्यम द्वारा भी उनके बच्चे काबिल बन सकते हैं और सम्मानजनक नौकरी पा सकते हैं।

फिल्में, टी.वी. धारावाहिक और विज्ञापन–इसमें कोई शक नहीं कि आज हमारे देश में हिंदी जहाँ खड़ी है, उसके पीछे संचार माध्यमों की महती भूमिका रही है। आजादी के बाद हिंदी फिल्म उद्योग की शुरूआत और उसके स्थापित होने से हिंदी जन–जन तक पहुँचने लगी। मूक फिल्मों से लेकर टेक्नीकलर और डिजिटलीकरण तक हिंदी फिल्म उद्योग ने बड़ी तरक्की की है। इसमें निर्माता–निर्देशकों, पटकथा लेखकों, गीतकारों, संगीतकारों और अभिनेता–अभिनेत्रियों (खलनायक भी) का यादगार योगदान रहा है। कपूर खानदान, राजेश खन्ना, अमिताभ बच्चन को हमारी पिछली पीढ़ियाँ, वर्तमान पीढ़ी और आने वाली पीढ़ियाँ सदा याद रखेंगी। खूबसूरती की बात करें तो मधुबाला, हेमा मालिनी से लेकर माधुरी दीक्षित और ऐश्वर्या राय तक को लोग दिल से याद करते हैं। फिल्मी खलनायक भी हिंदी के संवर्धन में पीछे नहीं हैं, उनके दुष्टतापूर्ण संवाद भी लोगों के दिलोदिमाग पर चिपके हुए हैं। इन सभी के हिंदी संवाद लोग आज भी याद करते हैं। दरअसल ये सभी हिंदी के प्रचार–प्रसार करने के सेतु रहे हैं। फिल्म शोले ने तो न सिर्फ हिंदी भाषी क्षेत्रों बल्कि पूरे देश में प्रसिद्धि का वह कीर्तिमान स्थापित किया है कि हम शोले से पहले और शोले बाद का फिल्मी युग कह सकते हैं। टी.वी. धारावाहिकों की बात करें तो 'हम लोग', 'रामायण' 'महाभारत' और सास–बहू वाले धारावाहिक सभी भारतीयों की जिंदगी का हिस्सा बन चुके थे। हिंदी विज्ञापनों की क्या कहें, विज्ञापनों के जुमले लोगो की जुबान पर चढ़े रहते हैं। खास बात यह है कि फिल्मों, टी.वी. धारावाहिकों और विज्ञापनों में जिस हिंदी का इस्तेमाल किया जाता रहा है, वह शुद्ध या बोझिल हिंदी नहीं है, बल्कि आम लोगों की हिंदी है, जिसमें अरबी, फारसी, अंग्रेजी जैसी विदेशी भाषाओं के शब्द बेझिझक इस्तेमाल किए जाते हैं। यही कारण है कि लोगो ने इसे खुले दिल से अपनाया। हिंदी भाषा का यह बड़प्पन है कि वह दूसरी भाषाओं के शब्दों को बड़े दोस्ताना अंदाज में अपनाती रही हैं। सरकारी क्षेत्र में हिंदीं के सामने क्लिष्टता और दुरूहता सबसे बड़ी बाधा है। अब समय आ गया है कि सरकारी हिंदी अधिकारियों और अनुवादकों को क्लिष्ट हिंदी का इस्तेमाल छोड़कर आम लोगों की हिंदी अपनानी चाहिए। एक ने कही, दूजे ने मानी, नानक कहे दोनों ज्ञानी। संप्रेषण तभी पूरा होता है जब कहीं या लिखी गई बात सुनने या पढ़ने वाले को आसानी से समझ आए।

पत्र–पत्रिकाएं–सोशल मीडिया, ई–मेल, फेसबुक, व्हाट्सऐप आदि से सूचनाएं बिजली की तेजी से मिल रही हैं। भौगोलिक दूरी अब बीते दिनों की बात है। इनमें हिंदी का प्रयोग भी दिख रहा है। हिंदी वेबसाइटों की संख्या बढ़ रही है। लेकिन

इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों के जोर के कारण पठन–पाठन की आदत लगभग खत्म हो रही है। पुस्तकालयों में किताबें बैठी एक दूसरे को ताकती रहती हैं। उनका चहेता पाठक अब यदा–कदा ही इस जगह तक आता है। ठीक भी है, जब सभी सूचनाएँ, सामग्रियाँ इंटरनेट पर मिल जाती हैं तो बैठकर किताबें पढ़ने का समय किसके पास है भला। बावजूद इसके, एक वर्ग ऐसा भी है जो अब भी किताबों से दोस्ती बनाए रखे हुए है हालांकि यह वर्ग साहित्य जगत का सदस्य है। सुबह सवेरे चाय के साथ अखबार पढ़ने का चाव रखने वो लोग अब भी हैं, इसके लिए अखबार और अखबार छापने वाले धन्यवाद के पात्र हैं। आज प्रिंट मीडिया में जान फूंकने की जरूरत है। प्रिंट मीडिया, यानी अखबार, पत्र–पत्रिकाओं का प्रकाशन और उसमें हिंदी के प्रयोग को बढ़ाना होगा।

हिंदी लेखन–जब हम हिंदी में लेखन की बात करते हैं तो हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि हिंदी में लिखने वाले लोग केवल हिंदी भाषी राज्यों में ही नहीं हैं। हिंदीतर भाषी राज्यों, दक्षिण, पश्चिम और उत्तर पूर्वी राज्यों में भी हिंदी में लिखने वालों की कमी नहीं है। भारत सरकार और कई गैर–सरकारी संगठन ऐसे लेखकों को प्रोत्साहित भी कर रहे हैं। वैसे हिंदी में लिखने वाले लेखकों पर यह जिम्मेदारी भी बनती है कि वे ऐसा लिखें जो पढ़ने और समझने में आसान हो और लोगों की अभिरुचि और संस्कृति के अनुकूल हो, सम–सामयिक हो। लेखन की विभिन्न विधाओं जैसे कहानी, उपन्यास, संस्मरण, कविता, पत्रकारिता में सरल और सहज हिंदी लिखना आज बहुत जरूरी है। इससे पाठकों का अभाव झेल रहे इस उद्योग को सहारा मिलेगा। हिंदी पुस्तकों, पत्र–पत्रिकाओं, हिंदी प्रकाशन गृहों, हिंदी प्रकाशकों और हिंदी लेखकों को पर्याप्त अवसर और प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। मौलिक लेखन और अच्छे अनुवाद दोनों का समर्थन देने से हिंदी को प्रचारित करने में बहुत मदद मिलेगी।

हिंदी अधिकारी और अनुवादक–राजभाषा अधिनियम और राजभाषा नियमों के लागू होने के बाद केन्द्र सरकार के दफ्तरों में पिछले चार–पांच दशकों में अनगिनत दस्तावेजों का अनुवाद कार्य किया गया। हम जानते हैं कि सरकारी दफ्तरों में मूल रूप से अंग्रेजी में काम किया जाता है। इसे धीरे–धीरे कम करने और मूल रूप से हिंदी में काम बढ़ाने के प्रयास भी किए जा रहे हैं। लेकिन हमें इस बात को समझना होगा कि सरकारी दफ्तरों में इतने दशकों में बड़े पैमाने पर जो भी अनुवाद कार्य किया गया उसमें सरल और सहज हिंदी देखने को नहीं मिलती है यह एक प्रमुख कारण है कि हिंदी को आज भी वह जगह हासिल नहीं हो पाई है जिसकी वह अधिकारिणी है। हिंदी अधिकारियों और अनुवादकों को पांडित्य प्रदर्शन से बचना होगा और ऐसा हिंदी का प्रयोग करना होगा जो आम लोगों की समझ में जाए। हिंदी भाषा की अपनी मर्यादा और संस्कृति है, इसे बरकरार रखते हुए अनुवाद करना होगा। हां पर हिंदी अधिकारी और अनुवादकों को समझदारी और दूरदर्शिता के साथ काम करना होगा।

सरकारी और गैर–सरकारी संगठन–हिंदी का प्रचार–प्रसार करने, शासककीय कामकाज में हिंदी का प्रयोग बढ़ाने के लिए भारत सरकार दृढ़ संकल्पित है और इस दिशा में अनेक सराहनीय प्रयास भी किए जा रहे हैं। सांविधिक प्रावधान मौजूद हैं और भारत सरकार के गृहमंत्रालय के अधीन राजभाषा विभाग प्रत्येक वर्ष एक वार्षिक कार्यक्रम जारी करता है जिसमें केन्द्र सरकार के कार्यालयों, उपक्रमों आदि में राजभाषा कार्यान्वयन के संबंध में विभिन्न लक्ष्य निर्धारित किए जाते हैं और केंद्र सरकारी

कार्यालयों के लिए ये लक्ष्य प्राप्त करना आवश्यक बनाया गया है। भारत सरकार की राजभाषा नीति प्रेरणा, प्रोत्साहन और सद्भाव की रही है और द्वीभाषी और त्रिभाषी सूत्र को अपनाते हुए हिंदी का प्रचार प्रसार करने पर जोर दिया जाता है। प्रशिक्षण और प्रोत्साहन के माध्यम से हिंदी कार्य को बढ़ाने पर ध्यान दिया जा रहा है। संसदीय राजभाषा समिति द्वारा देश के केन्द्र सरकार के कार्यालयों, संस्थानों और संगठनों में राजभाषा नीति के अनुपालन की नियमित रूप से समीक्षा भी की जाती है और की गई सिफारिशों पर महामहिम राष्ट्रपति आदेश जारी करते हैं। इस दृष्टि से हिंदी का प्रयोग बढ़ाने में केंद्र सरकार की भूमिका सबसे महत्वपूर्ण है। इसी तरह गैर सरकारी सगठन भी अपने कार्यकलापों में अंग्रेजी के स्थान पर हिंदी अपनाकर अपने देश और जनता के संबंधों को मजबूत कर सकते हैं और अपने समाजोपयोगी काम अधिक सहजता से कर सकते हैं।

न्यायालय–सच्चाई यह है कि हिंदी भाषी राज्यों के कोर्ट–कचहरियों में हिंदी आज भी पैदल चल रही है। न्यायालयों में अंग्रेजी अब भी शान से विराजमान है। कानूनविदों का कहना है कि अच्छी विधि शब्दावली न होने के कारण हिंदी में फैसले देना मुश्किल होता है। असल बात तो यह है कि ज्यादातर अधिवक्ता अंग्रेजी में सहज महसूस नहीं करते लेकिन आजीविका और तरक्की के खातिर वे अंग्रेजी में काम करते हैं। सरकार ने बड़े मेहनत से विधि शब्दावली तैयार की है जिसमें अंग्रेजी और विदेशी भाषाओं के कानूनी शब्दों का हिंदी में रूपांतरण उपलब्ध कराया गया है। यदि न्यायाधीश और अधिवक्ता हिंदी में काम करने की ठान लें और इसका पूरा मनोयोग से इस्तेमाल करें तो न्यायालयों में भी हिंदी को स्थापित किया जा सकता है। कचहरियों के ज्यादातर मामले आम आदमी के होते हैं, मध्यम वर्गीय या उच्च–मध्यम वर्गीय लोगों के होते हैं जो हिंदी अच्छी तरह जानते हैं। यदि कानूनी कार्यवाही हिंदी में की जाती है तो उन्हें पूरी प्रक्रिया को समझने में आसानी होगी। इसलिए, जजों, वकीलों और कोर्ट में काम करने वाले कर्मचारियों को अपनी मानसिकता बदलने की बड़ी जरूरत है। यदि वे ऐसा कर सकें, तो हिंदी के विकास में उल्लेखनीय प्रगति आएगी।

हिंदीतर भाषियों का हिंदी प्रेम–हमारी इसी हिंदी ने देश को आजाद करने में भारतवासियों को एकजुट किया था वर्ना विविध संस्कृति और भाषा–भाषी होने के कारण देश को एकजुट करना मुश्किल था। इसी बात का फायदा उठाकर विदेशियों ने हमें गुलाम बनाया और हमारे देश में सैकड़ों साल राज किया। इस एकीकरण की प्रक्रिया में कई हिंदीतर भाषी नेताओं द्वारा दिए गए योगदान को हम कभी नहीं भूल सकते। तब से लेकर आज तक हिंदी के उत्थान में हजारों हिंदीतर भाषियों के हिंदी प्रेम ने इसे आम लोगों की भाषा बनाने में बड़ी भूमिका निभाई है। गौर करने लायक बात तो यह है कि जिन हिंदीतर भाषियों ने हिंदी सीखी, उन्होंने इतनी तल्लीनता और प्यार से हिंदी सीखी कि उनका उच्चारण, व्याकरण और लेखन आश्चर्य होता है। सी राजगोपालाचारी से लेकर पी.वी. नरसिम्हा राव तक, रवीन्द्रनाथ टैगोर से लेकर गिरीश कार्नाड तक हमारे पास ऐसी अनेक हस्तियां हैं जिन्होंने अपना हिंदी प्रेम सार्वजनिक रूप से और खुले दिल से स्वीकार किया। हिंदीतर भाषी हिंदी प्रेमी भी हमारे देश में हिंदी को आगे बढ़ाने के प्रमुख सेतु हैं।

वरिष्ठ सहायक अधिकारी (राजभाषा)
भारत इलेक्ट्रॉनिक्स लिमिटेड, बैंगलूरु कॉम्पलेक्स,
बैंगलूरू (कर्नाटक)

पारिभाषिक शब्दावली और हिंदी माध्यम शिक्षण

डॉ. जितेन्द्र कुमार

हिंदी की पारिभाषिक शब्दावली प्रयोजनमूलक हिंदी का महत्त्वपूर्ण अंग है। इस शब्दावली ने हिंदी को ज्ञान, विज्ञान प्रशासन, वाणिज्य और जनसंसार की भाषा बनने का गौरव प्रदान किया है। हिंदी भाषा का इतिहास अत्यंत प्राचीन है। सामान्य व्यवहार की भाषा से साहित्यिक भाषा तक हिंदी ने अनेक उतार–चढ़ाव देखे हैं। ग्रामीण हों या शहरी, पढ़े लिखे हों या अनपढ़, व्यवसायी, अध्यापक, डॉक्टर या वकील हों, हिंदी भाषा के बिना किसी का काम नहीं चलता। दरअसल किसी भाषा में विद्यमान पारिभाषिक शब्दावली का सीधा संबंध उस भाषा–भाषी जनसमूह के सांस्कृतिक और वैचारिक विकास से होता है। जैसे–जैसे किसी जन–समुदाय का जीवन अपेक्षाकृत अधिक जटिल, संश्लिष्ट और वैविध्यपूर्ण होता जाता है, उसकी भाषा में मूर्त–अमूर्त संकल्पनाओं का विकास होता जाता है और उन संकल्पनाओं के लिए समानान्तर रूप से पारिभाषिक शब्दावली विकसित होती जाती है। इस प्रकार कला, विज्ञान, वाणिज्य, प्रशासन, विधि आदि विभिन्न ज्ञान के क्षेत्रों में चिंतन और व्यवहार के माध्यम से विभिन्न प्रकार की संकल्पनाएं निरंतर विकसित होती रहती हैं और उनकी अभिव्यक्ति उसी क्षेत्र विशेष की पारिभाषिक शब्दावली द्वारा होती है।

जहाँ तक मानविकी विषयों के शिक्षण की बात है तो इसमें 'प्राचीन और आधुनिक भाषाएँ', 'साहित्य', 'विधि', 'इतिहास', 'दर्शन', 'दृश्य एवं अभिनय कला' (संगीत सहित) और 'धर्म' आदि विषय शामिल हैं। साथ ही कभी–कभी प्रौद्योगिकी (टेक्नोलॉजी), मानव–शास्त्र (एन्थ्रोपोलॉजी), क्षेत्र अध्ययन (एरिया स्टडीज), संचार अध्ययन (कम्युनिकेशन स्टडीज), सांस्कृतिक अध्ययन (कल्चरल स्टडीज) और भाषा विज्ञान (लिंग्विस्टिक्स) विषयों को भी मानविकी में शामिल किया जाता है लेकिन ये अक्सर सामाजिक विज्ञान के अंतर्गत आते हैं। इन विषयों के अध्ययन में हिंदी की तकनीकी शब्दावली का अत्यधिक महत्त्व है इसके अभाव में इन विषयों का हिंदी माध्यम में शिक्षण संभव नहीं है। प्रस्तुत शोध आलेख में पारिभाषिक (तकनीकि) शब्दावली का हिंदी माध्यम शिक्षण में महत्ता पर प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है।

भाषा की सबसे छोटी सार्थक इकाई को शब्द कहते हैं और प्रयोग की दृष्टि से शब्द तीन प्रकार के होते हैं–सामान्य शब्द, अर्ध–पारिभाषिक शब्द और पारिभाषिक शब्द। जिन शब्दों का इस्तेमाल हम रोजमर्रा की जिन्दगी में धड़ल्ले से करते हैं वे सामान्य शब्द कहलाते हैं, जैसे–किताब, कलम, घर, बचपन आदि। अर्द्ध–पारिभाषिक उन शब्दों को कहते हैं, जो सामान्य अर्थ और पारिभाषिक अर्थ दोनों रुपों में प्रयुक्त होते हैं, अर्थात कई बार सामान्य जीवन में प्रयुक्त होने वाला शब्द किसी विशेष क्षेत्र के लिए पारिभाषिक शब्द भी बन जाता है, जैसे–रस, आदेश, धारा, सहायक आदि। पारिभाषिक शब्द वे शब्द होते हैं, जिनकी कोई एक निश्चित परिभाषा की जा सके। एक प्रकार से उन्हें किसी अर्थ की सीमा में सीमित कर दिया जाता है और उस क्षेत्र विशेष में उन्हें उसी अर्थ में प्रयुक्त किया जाता है, जैसे आयकर, विधि, संविधान आदि। यहाँ 'आयकर' शब्द का प्रयोग किसी व्यक्ति अथवा संस्था की 'आय' पर सरकार के राजस्व विभाग द्वारा वसूल

किए जाने वाले 'कर' के लिए किया जाता है। सरकार से भिन्न किसी संस्था द्वारा वसूल की जाने वाली राशि 'आयकर' नहीं कहलाएगी।

पारिभाषिक शब्दावली शब्द से आशय वर्गों के सार्थक समूह से है। ''मनुष्य जगत के व्यवहार, चिन्तन–मनन और भावना की सभी स्थूल–सूक्ष्म अभिव्यक्तियाँ शब्द के अर्थाभाव से चरितार्थ होती हैं। तत्त्वतः शब्द और अर्थ अभिन्न हैं। इसलिए महाकवि तुलसीदास कहते हैं–'गिरा अरथ जल बीचि सम कहियत भिन्न न भिन्न।'[1] परम्परा, परिस्थिति और प्रयोग से शब्द और उनका अर्थ जीवित रहता है। शास्त्र, विशिष्ट विषय अथवा सिद्धान्त के सम्प्रेषण के लिए सामान्य शब्दों के स्थान पर विशिष्ट शब्दावली की आवश्यकता होती है। यही शब्दावली पारिभाषिक शब्दावली कहलाती है। कुछ विद्वान इसे 'तकनीकी शब्दावली' कहते हैं।

सामान्य मान्यता यह है कि पारिभाषिक शब्द अंग्रेजी के 'Technical' शब्द का हिंदी अनुवाद है और भारत में विदेशी शासन के अन्तर्गत इस प्रकार के शब्दों को संगृहीत करने का कार्य शुरू किया गया, लेकिन वास्तव में भारत में पारिभाषिक शब्दावली की परंपरा बहुत प्राचीन है, दर्शन, गणित, आयुर्वेद, ज्योतिष, अर्थशास्त्र, न्याय, मीमांसा, व्याकरण, नाट्यशास्त्र, संगीत, काव्य, शिल्प आदि विषयों का चिंतन यहाँ प्राचीन काल से होता चला आ रहा है। इन क्षेत्रों में ज्ञान के पर्याप्त विकास के कारण संस्कृत भाषा में इनकी प्रयुक्तियों की पारिभाषिक शब्दावली विकसित हो चुकी थी। समयानुसार भाषा में परिवर्तन के समानान्तर पालि, प्राकृत आदि भाषाओं में भी पारिभाषिक शब्दों की अबाध परंपरा जारी रही। मध्यकाल में फारसी राजभाषा बन जाने पर प्रशासन एवं न्याय व्यवस्था के क्षेत्र में अरबी–फारसी भाषा की पारिभाषिक शब्दावली का प्रसार हुआ, किन्तु उनके साथ पहले से स्थापित और बहुप्रचलित भारतीय भाषाओं की शब्दावली भी (अनौपचारिक रूप से ही सही) बनी रही। अंग्रेजी शासन की स्थापना के साथ ही प्रशासन, शिक्षा एवं अन्य महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों में अंग्रेजी भाषा का प्रयोग होने लगा।

यद्यपि भारत में आधुनिक शिक्षा की स्थापना के आरंभिक काल से ही यहाँ के लोगों ने भारतीय भाषाओं को शिक्षा का माध्यम–भाषा बनाये जाने की माँग रखी थी और इसी का परिणाम था कि सन् 1856 ई. के 'वुड्स एजूकेशन डिस्पैच' में माध्यमिक स्तर तक मातृभाषा में शिक्षा दिए जाने का प्रावधान रखा गया था। किन्तु इस सिफारिश को दरकिनार करते हुए अंग्रेजों ने भारत को लंबे समय तक गुलाम बनाये रखने की अपनी रणनीति के तहत अंग्रेजी भाषा को वरीयता दी और आगे चलकर मैकाले की शिक्षानीति में निहित विचारों से अंग्रेजों की नीयत पूरी तरह स्पष्ट हो गई। अंग्रेज प्रशासकों ने भारतीय भाषाओं की तुलना में अंग्रेजी भाषा को ही स्थापित करने का प्रयास किया और उनके प्रभाव में आकर अंग्रेजी में शिक्षित भारतीयों ने भी लोगों के मन में भारतीय भाषाओं के प्रति हीन भावना भरने की साजिश रची। वे अपनी योजना में पूरी तरह सफल भी रहे और उसी का परिणाम है कि आज एक बड़ा शिक्षित वर्ग अंग्रेजी को श्रेष्ठ भाषा समझता है। इसके दो कारण थे–पहला तो यह कि तत्कालीन शिक्षा का ढाँचा अंग्रेजी शासन द्वारा निर्मित था। जिसके अन्तर्गत वैज्ञानिक, मानविकी, वाणिज्य एवं बैंकिंग आदि के लिए अधिकतर अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग किया जाता था, क्योंकि लेखाकरण, पंजीकरण आदि के लिए पुरानी पद्धति को नहीं अपनाया गया था। दूसरा, आधुनिक विज्ञान का विकास पश्चिम में हुआ था और उससे हमारा परिचय मुख्यतः अंग्रेजी भाषा के माध्यम से हुआ। ऐसी स्थिति में ज्ञान–विज्ञान की पारिभाषिक शब्दावली अंग्रेजी में ही उपलब्ध थी।

हिंदी की पारिभाषिक शब्दावली हिंदी शब्दों का संकलन नहीं है। यह अंग्रेजी शब्दों के पर्याय के रूप में निर्मित की गई है क्योंकि जब कोई

भाषा–समाज स्वयं ज्ञान विकसित करने के बजाय किसी भाषा–समाज से तकनीकी ज्ञान ग्रहण करता है तो उसे उस भाषा–समाज की शब्दावली भी ग्रहण करनी पड़ती है। इस शब्दावली के आधार पर फिर वह अपनी भाषा में पर्यायों का निर्माण करता है। इस प्रकार पर्याय निर्माण की संकल्पना में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में अनुवाद प्रक्रिया निहित है क्योंकि मौलिक विशेषज्ञ, ज्ञान और अनुवाद पर्याय के बीच एक मध्यस्थ शब्दावली की स्थिति रहती है, जैसे भारत के संदर्भ में अंग्रेजी शब्दावली मध्यस्थ शब्दावली की भूमिका निभा रही है।''[2] इस प्रकार शब्दावली का निर्माण सरल–प्रक्रिया नहीं है। अनेक मत, सिद्धान्त, प्रयोग और उपयोगिता का आधार लेकर पारिभाषिक शब्दावली निर्मित की जाती है। दो अलग–अलग संस्कृति में शब्दों के पर्याय निश्चित करना अत्यंत कठिन कार्य रहा है किन्तु आधुनिक ज्ञान और विज्ञान के संप्रेषण के लिए सांस्कृतिक परम्परा का त्याग भी करना पड़ता है।

आजादी के बाद हिंदी संघ की राजभाषा बन जाने के बाद प्रशासन एवं सामाजिक व्यवहार में उसके व्यापक प्रयोग किए जाने का प्रश्न उठा और अंग्रेजी के स्थान पर हिंदी के प्रयोग की बात आते ही यह महसूस किया जाने लगा कि हिंदी में पर्याप्त और समुचित शब्दावली का विकास हो। राष्ट्रपति के अप्रैल 1960 ई. के आदेश का अनुपालन करते हुए भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय ने अक्टूबर, 1961 ई. में वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग तथा केंद्रीय अनुवाद ब्यूरो की स्थापना की। उस समय से लगातार ये संस्थाएँ प्रशासन के अतिरिक्त ज्ञान–विज्ञान के नये क्षेत्रों एवं नई तकनीकी–उद्योगों से जुड़कर पारिभाषिक शब्दावली निर्माण का कार्य कर रही हैं। अब तक लगभग छः सौ ज्ञान शाखाओं से जुड़े करीब सात लाख शब्दों तथा चौदह लाख व्युत्पादित शब्दों (मूल शब्द से व्युत्पन्न शब्द) का निर्माण हो चुका है। विद्वानों के काफी वर्षों तक लगातार मेहनत के कारण इस दिशा में अब बहुत प्रगति हो चुकी है। आज हम ये नहीं कह सकते कि अमुक विदेशी शब्द के लिए हमारी भाषा में शब्द नहीं है।

भारत में पारिभाषिक शब्दों के लिए पर्याय सुनिश्चित करने एवं मानक भाषा विकसित करने का वास्तविक कार्य नागरी प्रचारिणी सभा (काशी), साहित्य सम्मेलन (प्रयाग), बंगाल साहित्य–परिषद, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय (हरिद्वार), उस्मानिया विश्वविद्यालय, हिंदुस्तानी कल्चर सोसाइटी आदि के माध्यम से संभव हो सका। सन् 1898 ई. में नागरी प्रचारिणी सभा ने 'हिंदी साइंटिफिक ग्लासरी' नामक पारिभाषिक कोश को तैयार करना प्रारंभ कर दिया था, जो सन् 1901 ई. में सम्पन्न हो गया था। उसके बाद लगभग चार दशक बाद सन् 1940 ई. में सुखसंपतिराय भंडारी (अजमेर) का 'ट्वेंटिएथ सेंच्युरी इंग्लिश–हिंदी डिक्शनरी' छपकर लोगों के सामने आया और आजादी के बाद सन् 1951 ई. में डॉ. रघुवीर का 'अ कोम्प्रिहेंसिव इंग्लिश–हिंदी डिक्शनरी' प्रकाशित हुआ।

वैज्ञानिक और तकनीकी शब्दावली आयोग का प्रमुख उद्देश्य हिंदी और सभी भारतीय भाषाओं में वैज्ञानिक और तकनीकी शब्दों का विकास करना और परिभाषित करना, शब्दावलियों को प्रकाशित करना, पारिभाषिक शब्दकोश एवं विश्वकोश तैयार करना, यह देखना कि विकसित किए गए शब्द और उनकी परिभाषाएँ छात्रों, शिक्षकों, विद्वानों, वैज्ञानिकों, अधिकारियों आदि को पहुँचती हैं। (कार्यशालाओं/संगोष्ठियों/प्रबोधन कार्यक्रमों के जरिए) किए गए कार्य के संबंध में उपयोगी प्रतिपुष्टि (फीडबैक) प्राप्त करके उचित उपयोग/आवश्यक अद्यतन/संशोधन/सुधार सुनिश्चित करना, हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं में शब्दावली की एकरूपता सुनिश्चित करने हेतु सभी राज्यों के साथ समन्वय करना है।

रैण्डम–हॉउस शब्दकोश में 'विशिष्ट विषय, जैसे विज्ञान, कला आदि की तकनीकी अभिव्यक्ति के लिए निश्वित अथवा विशिष्ट अर्थ में प्रयुक्त

होने वाले शब्दों को' पारिभाषिक शब्द कहा गया है। सूरजभान सिंह के अनुसार–पारिभाषिक शब्द सिर्फ अभिधार्थ में ही ग्रहण किए जाते हैं, लक्ष्यार्थ या व्यंग्यार्थ के रूप में नहीं।' डॉ. माधव सोनटक्के इसे 'ज्ञान विज्ञान की असीम परिधि को व्यक्त करने वाली शब्दावली' कहते हैं।[3] वहीं डॉ. सत्यव्रत दैनिक जीवन में नए विचार और वस्तुओं के लिए नए शब्दों के आगमन को पारिभाषिक शब्द मानते हैं। इस प्रकार पारिभाषिक शब्द का अर्थ है–जिसकी परिभाषा दी जा सके। परिभाषा किसी विषय, वस्तु या विचार को एक निश्चित स्वरूप में बाँधती है। सामान्य शब्द दैनिक व्यवहार में, बोलचाल में प्रयुक्त होते है। जैसे चाय, पानी, घर, यात्रा, नदी, पहाड़ आदि। पारिभाषिक शब्द विषय विशेष में प्रयुक्त होते हैं। जैसे–खाता, लेखाकर्म, वाणिज्य, प्रबन्ध, लिपिक, वेतन, सचिव, गोपनीय आदि। ये शब्द वाणिज्य और प्रशासन के पारिभाषिक शब्द हैं। प्रशासन शब्दकोश में लिखा है–''पारिभाषिक शब्द का एक सुनिश्चित और स्पष्ट अर्थ होता है। किसी विशेष संकल्पना या वस्तु के लिए एक ही शब्द होता है, विषय विशेष या संदर्भ में उससे हटकर उसका कोई भिन्न अर्थ नहीं होता।''[4]

पारिभाषिक शब्दों के बारे में डॉ. भोलानाथ तिवारी ने लिखा है–''पारिभाषिक शब्द ऐसे शब्दों को कहते हैं जो रसायन, भौतिक, दर्शन, राजनीति आदि विभिन्न विज्ञानों या शास्त्रों के शब्द होते हैं तथा जो अपने अपने क्षेत्र में विशिष्ट अर्थ में सुनिश्चित रूप से परिभाषित होते हैं। अर्थ और प्रयोग की दृष्टि से निश्चित रूप से पारिभाषित होने के कारण ही ये शब्द पारिभाषिक कहे जाते है।''[5] कमल कुमार बोस ने लिखा है कि–''पारिभाषिक शब्द से तात्पर्य उन सारी शब्दाभिव्यक्तियों से है जो नव्य शास्त्र, प्रशासन, विज्ञान और व्यवहार में विशिष्ट अर्थ के लिए प्रयुक्त होती हैं।''[6] अतः विषय विशेष में प्रयुक्त होने वाला विशिष्ट शब्द पारिभाषिक शब्द कहलाता है।

पारिभाषिक शब्दों का निर्माण सृजन, ग्रहण, संचयन एवं अनुकूलन जैसी चार प्रक्रियाओं से गुजर कर हुआ है। डॉ. रघुवीर ने प्रत्येक अंग्रेजी शब्द के लिए संस्कृत व्याकरण के अनुसार शब्द गढ़े। उन्होंने अरबी, फारसी, देशज शब्दों के स्थान पर संस्कृत का आधार लेकर नए शब्दों का निर्माण किया। उन्होंने समनुमोदन, वज्रचूर्ण, कठोराकिनी, समरूपण, जैसे शब्द बनाए।[7] अफीम के लिए अहिफेन और सीमेंट के लिए 'वज्रधातु' जैसे शब्द प्रचलन में नहीं आ पाए। पारिभाषिक शब्द बनाते समय यह भी स्मरण रखा गया कि यदि तत्सम, तद्भव, देशज, विदेशी शब्द पहले से किसी धारणा को व्यक्त करने में सक्षम हों तो नया शब्द गढ़ने के स्थान पर उस शब्द को ही स्वीकार कर लिया जाए। अंग्रेजी के मोटर, स्टेशन, टिकट, सल्फर, पोटेशियम, नाइट्रोजन, मीटर, ग्राम, टेलीफोन, इंजेक्शन, ब्यूरो, कमीशन, ट्रेक्टर, प्रोटीन, रेफरी, हॉकी, कैरम, क्रिकेट, आउट, फॉलोआन, कम्प्यूटर, माउस, कीबोर्ड, सॉफ्टवेयर, हार्डवेयर जैसे अनेक शब्दों को स्वीकार कर लिया गया।

अरबी, फारसी शब्दों को भी प्रचलन, संप्रेषण और प्रयोग की सुविधा के आधार पर स्वीकार किया गया। फरार, गालीगलौज, हिसाब, हवाई–सर्वेक्षण करारनामा, हमलावर, मकान–किराया, वकालत, गैर जमानती वारंट जैसे शब्द प्रशासनिक शब्दावली में स्वीकृत हुए। पारिभाषिक शब्दावली में निर्माण के साथ–साथ 'ग्रहण' की प्रक्रिया को भी पूरा महत्त्व दिया गया। 'ग्रहण' करते समय अंग्रेजी का प्रत्येक शब्द स्वीकार नहीं किया गया। कम्प्यूटर शब्द यथावत ले लिया गया। किन्तु कम्प्यूटराइजेशन नहीं। इसके लिए कम्प्यूटरीकरण शब्द गढ़ा गया। इस तरह हिंदी और भारतीय भाषाओं की पारिभाषिक शब्दावली को दो स्रोतों से शब्द ग्रहण करने पड़े हैं। विज्ञान–तकनीकी क्षेत्र में अंग्रेजी से लेकिन कानून, प्रशासन, राजनीति से संबंधित कई शब्द अब हिंदी के ही बन गए हैं।[8]

संचयन से आशय उस प्रक्रिया से है जिसके अन्तर्गत भारतीय भाषाओं उपभाषाओं तथा बोलियों

के उपयुक्त शब्दों का संचय पारिभाषिक शब्द के रूप में किया जाता है। इसमें चयन, निश्चयन तथा प्रयोग द्वारा संकलन की प्रक्रिया अपेक्षित है। अपनी भाषा की बोली, उपभाषा तथा प्रान्तीय भाषाओं में प्रचलित शब्दों में से आवश्यकतानुरूप शब्दों का चयन किया जा सकता है। ..."विद्वानों ने संचयन के माध्यम से अनेक शब्दों में से एक सही शब्द चुनकर पारिभाषिक शब्दावली को समृद्ध किया है। डॉ. रघुवीर के बाद शब्दावली आयोग, केन्द्रीय हिंदी निदेशालय, राजभाषा आयोग और राज्यों के हिंदी मंडल ने पारिभाषिक शब्द निर्माण में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। इन्होंने समन्वयवादी दृष्टिकोण अपनाया और हिंदी भाषा को गति प्रदान की। इन सबने माना कि ''हमारी पूरी शब्दावली अन्तर्मुखी होनी चाहिए न कि वह हिंदी के नाम से हो या विदशी शब्दावली हो। भाषा–विज्ञान की दृष्टि से भी यह आवश्यक है कि भारत की प्राचीन, मध्यकालीन आधुनिक भाषाओं और विदेशी भाषाओं के शब्द आवश्यकतानुसार अपनाती हुई हिंदी अपनी ही भीतर से विकसित हो। हिंदी की वही वृद्धि और उन्नति स्थायी प्राकृतिक और स्वाभाविक होगी दूसरी सभी प्रकार की वृद्धि और उन्नति अप्राकृतिक और बनावटी होगी।[9] संचयन की प्रक्रिया समाज–विज्ञान की पारिभाषिक शब्दावली के लिए अधिक महत्त्वपूर्ण मानी गई है।

पारिभाषिक शब्द निर्माण में ग्रहण, संचयन के साथ–साथ अनुकूलन भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। अनुकूलन से आशय है पूर्व प्रचलित शब्दों को पारिभाषिक शब्द के रूप में अनुकूलन। नए, क्लिष्ट, संस्कृतनिष्ठ शब्दों के स्थान पर पूर्व प्रचलित शब्द को पारिभाषिक शब्द के रूप में शब्दानुकूलन भी एक महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया है। जैसे एंजिन, लैन्टर्न, एकेडमी, ट्रेजेडी क्रमशः इंजन, लालटैन, अकादमी, त्रासदी में बदल गए। दो भाषाओं के मध्य संधि अथवा समासीकरण भी अनुकूलन ही है। कम्प्यूटरीकरण, अपीलीय, कलैंडर वर्ष आदि शब्द इसी अनुकूलन की प्रक्रिया के अर्न्तगत बने है। हिंदी और अंग्रेजी में संस्कृति और जीवन में साम्य नहीं है किन्तु हिंदी ने अनेक अंग्रेजी शब्दों को समाहित कर लिया है उन्हें परिवर्तन, संशोधन के पश्चात् स्वीकार करना व्यावहारिक होगा। कॉलेज, पुलिस, सुनामी शब्द का स्वीकार्य इसी अनुकूलन प्रक्रिया का परिणाम है।

हिंदी भाषा जनभाषा है। साहित्यिक भाषा के पूर्व ही यह दैनिक व्यवहार और बोलचाल की भाषा बन चुकी थी। पारिभाषिक शब्द निर्माण में शब्द–संग्रह भी महत्त्वपूर्ण हैं। नए शब्द बनाने में अनावश्यक धन, श्रम और समय नष्ट करने के स्थान पर जन–सामान्य के बीच में प्रचलित शब्दों का संग्रह किया जाना भी महत्त्वपूर्ण है। हमारी शब्दावली न तो लोह–जाकट के समान कस देने वाली होनी चाहिए और न उसमें इतनी स्थिरता होनी चाहिए कि वह भविष्य में ठहरे हुए पानी के समान सड़ जाए या सूखकर मर जाए। किसी एक दृष्टिकोण के आधार पर बनी शब्दावली अधूरी और लंगड़ी होगी।[10] इस दिशा में भी बहुत महत्त्वपूर्ण कार्य हुआ है। भरपाई, भुगतान, भूलचूक जोड़ना, वसूली, पतालेखी, दाखिला, लाभ, फायदा, हवाई अड्डा, जोत, भत्ता, छूट, कहासुनी, शौकिया, गोला–बारूद, चिढ़, खीज, अनाम, गुमनाम, अर्जी, मनमाना, बकाया, आमद, तोपखाना, पारखी, बट्टे पर, कुर्की, नीलामी, पिछड़ा वर्ग, बिल्ला, सौदा, तहखाना, धमाका, झाँसा, छाप, ठप, टूटफूट ब्यौरा, पताका, हथकड़ी, पक्के नियम, बटोरन जैसे अनेक शब्द जनभाषा से संग्रह कर पारिभाषिक बनाए हैं। ''इस जन–भाषा में उत्तर भारत में पुराने काल से चले आनेवाले सभी उद्योगों और व्यवसायों के पारिभाषिक शब्द न केवल भरे पड़े हैं, वरन् उनमें समय–समय पर नयी–नयी परिस्थितियों और प्रभावों के कारण नए–नए शब्द भी बनते रहे हैं। ... भाषा विज्ञान की दृष्टि से उनमें कोई दोष नहीं है। इन शब्दों का स्थान न तो अन्तर्राष्ट्रीय शब्द ले सकते हैं और न संस्कृतनिष्ठ शब्द। ये शब्द देश की अनमोल सम्पत्ति हैं और किसी भी कारण से इनकी उपेक्षा करना अपनी भाषा को हानि पहुँचाना है।'[11]

निष्कर्ष–

निष्कर्षतः देखा जाए तो हिंदी तकनीकी शब्दावली के अभाव में मानविकी विषयों का हिंदी माध्यम में अध्यापन असंभव है। नए शब्दों के प्रयोग से हिंदी के व्यावहारिक, कामकाजी और प्रशासनिक क्षेत्रों में प्रगति हुई है। हिंदी को प्रतिष्ठा दिलाने में पारिभाषिक शब्दावली का महत्वपूर्ण योगदान है। इसी शब्दावली की सहायता से जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में हिंदी में कार्य करना संभव बन पाया है। ये शब्द एकार्थी सुनिश्चित, सरल और प्रभावी होते हैं। फिर भी पारिभाषिक शब्दों के प्रसार की सबसे बड़ी समस्या है आज तक हिंदी का उच्च शिक्षा के क्षेत्र में माध्यम–भाषा न बन पाना। विद्वान एवं शिक्षार्थी निरंतर अंग्रेजी भाषा को ही वरीयता दे रहे हैं और अंग्रेजी भाषा सीख–सिखा रहे हैं। यह और बात है कि आजादी के बाद प्रशासनिक तथा शैक्षणिक जरूरतों के लिए अधिक व्यवस्थित एवं योजनाबद्ध तरीके से तीन स्तरों पर–व्यक्तिगत, शैक्षिक एवं साहित्यिक संस्थाएँ तथा सरकार, सकारात्मक कार्य कर रहे हैं। अब शब्दावली निर्माण की दिशा में काफी तरक्की हो चुकी है, फिर भी जरूरत इस बात की है कि उन्हें अधिक से अधिक व्यवहार का माध्यम बनाया जाए। इस क्षेत्र में महात्मा गाँधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय वर्धा, अटल बिहारी हिंदी विश्वविद्यालय, भोपाल जहाँ हिंदी माध्यम में मानविकी विषयों का अध्यापन हो रहा है जिसमें हिंदी की तकनीकी शब्दावली महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रही है।

इस प्रकार कृत्रिम निर्माण, अनुकूलन, एकरूपता स्पष्ट अर्थवत्ता तथा स्वीकरण के द्वारा ज्ञान–विज्ञान की शाखाओं के लिए लगभग 08 लाख शब्द गढ़े गए हैं। विधि शब्दावली, मीडिया शब्दावली, प्रशासनिक शब्दावली, अन्तरिक्ष शब्दावली, मानविकी एवं समाज विज्ञान की पारिभाषिक शब्दावली प्रकाशित एवं प्रचलित हो चुकी हैं। वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग द्वारा कृषि, पशु–चिकित्सा कम्प्यूटर–विज्ञान, धातु–कर्म, नृ–विज्ञान, ऊर्जा, खनन, इंजीनियरी, मुद्रण–इंजीनियरी, रसायन इंजीनियरी, इलेक्ट्रानिकी, वानिकी, लोक–प्रशासन, अर्थशास्त्र, डाक–तार, रेलवे, गृह–विज्ञान आदि विषयों के शब्द भी निर्मित किये गये हैं। निरन्तर प्रयोग से इनकी अर्थवत्ता सिद्ध हो चुकी है। पारिभाषिक शब्दावली हिंदी के प्रयोजनीय पक्ष एवं हिंदी माध्यम शिक्षण की आधारशिला है।

संदर्भ–

1. बोस, कमल कुमार, प्रयोजनमूलक हिंदी, हिंदी बुक सेंटर, दिल्ली, 2000,पृ. 5
2. वृहत् प्रशासन शब्दावली 2001 पृ. VI
3. सोनटके, माधव, प्रयोजन मूलक हिंदी, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2008,पृ. 1
4. प्रशासन शब्दकोश, म.प्र. का प्रकाशन,1986, पृ. भूमिका से उद्धृत
5. सोनटके, माधव, प्रयोजन मूलक हिंदी, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2008,पृ. 2
6. वही पृ. 2
7. प्रशासनिक शब्दावली 2002 भूमिका से उद्धृत
8. वाणिज्य शब्दकोश, उद्धृत हिंदी शब्द रचना पृ. 221
9. सोनटके, माधव, प्रयोजन मूलक हिंदी, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2008,पृ. 12
10. जैन, माईदयाल, हिंदी शब्द रचना, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नई दिल्ली, 1966,पृ. 244
11. प्रयोजन मूलक हिंदी, डॉ. देवेन्द्र नाथ शर्मा के विचार पृ. 13

सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग, राजस्थान केन्द्रीय विश्वविद्यालय, NH–8, बांदरसिंदरी, किशनगढ़, अजमेर–305817

कार्यालयीन हिंदी में सरलता – डायग्लोसिया (भाषा–द्वैत) के परिप्रेक्ष्य में

डॉ. रामवृक्ष सिंह

एक ही भाषिक समुदाय में विभिन्न परिस्थितियों में एक ही भाषा के दो अथवा उससे अधिक रूप निरन्तर व्यवहार में बने रहते हैं। इनमें से एक को मानक भाषा और दूसरे को प्रायः स्थानीय बोली का नाम दिया जाता है। यह मंतव्य प्रतिपादित किया पाश्चात्य विद्वान सी.ए. फर्गुसन ने सन 1958–59 में। हालांकि इस प्रकार की अवधारणा बहुत से दूसरे भाषा वैज्ञानिकों की भी रही है। फर्गुसन ने इसे 'डायग्लोसिया' नाम दिया और बताया कि यह शब्द फ्रेंच डायग्लोसी से बनाना पडा, क्योंकि अंग्रेजी में इसके लिए कोई उपयुक्त शब्द है ही नहीं। साथ ही, उन्होंने यह भी कहा कि आम तौर पर यूरोप और दुनिया के बाकी हिस्सों में इसे बाइलिंगुअलिज्म भी कहा जाता है। अपने अध्ययन के लिए फर्गुसन ने चार भाषाओं को लिया। अरबी, आधुनिक ग्रीक, स्विस जर्मन और हाइतियन क्रियोल। डॉ. रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव प्रभृति भारतीय भाषा–शास्त्रियों ने डायग्लोसिया को भाषा–द्वैत नाम दिया है, जो द्विभाषिकता की अपेक्षा बहुत उपयुक्त प्रतीत होता है। वस्तुतः भाषा–द्वैत में जहाँ किसी भाषिक समुदाय में एक ही भाषा के दो रूपों की उपस्थिति की बात है, वहीं द्विभाषिकता से बिलकुल अलग–अलग दो भाषाओं का बोध होता है।

जरूरी नहीं कि डायग्लोसिया की स्थिति किसी काल विशेष में अथवा हमेशा ही बने। डायग्लोसिया का विकास विभिन्न राजनीतिक, सामाजिक, ऐतिहासिक स्थितियों में और विभिन्न भाषिक परिस्थितियों में हो सकता है। जैसाकि पहले कहा गया डायग्लोसिया में भाषा के दो रूप माने जाते हैं, जिनमें से मानक समझे जाने वाले रूप को फर्गुसन ने हाई यानी उच्च और क्षेत्रीय बोली को लो यानी निम्न किस्म कहा। बाद के विद्वानों ने प्रायः सभी भाषिक समुदायों में इस प्रवृत्ति की उपस्थिति मानते हुए इन दो भाषा.रूपों को उच्च कोड और निम्न कोड कहा। इनके व्यवहर्ता समुदायों की भावना को आहत होने से बचाने के लिए कतिपय विद्वानों ने उच्च और निम्न से भी परहेज किया और औपचारिक व अनौपचारिक कोड कहकर इन्हें अभिहित किया। जिन चार भाषाओं को फर्गुसन ने अपने अध्ययन के लिए चुना उन सभी में उच्च और निम्न दोनों भाषा–रूपों के लिए अलग–अलग नाम प्रचलित थे।

इस अवधारणा, यानी एक ही भाषिक समुदाय में विभिन्न स्थितियों में एक मानक भाषा और एक अथवा अधिक बोलियों की उपस्थिति की दृष्टि से भारत का उदाहरण बहुत ही उपयुक्त है। भारतीय भाषाओं और विशेषतः हिंदी में बिलकुल स्पष्ट रूप में यह स्थिति दृष्टिगोचर होती है। सभी हिंदी प्रांतों में अंतर–प्रांतीय स्तर पर, हिंदी का एक मानक, परिनिष्ठित रूप विद्यमान है, जबकि राजस्थान से लेकर झारखंड तक और हिमाचल से लेकर नागपुर तक 19 से अधिक बोलियों का भी व्यापक प्रचलन है। लोग अपने–अपने घर–परिवार, गाँव–जिलों में बिलकुल निजी व अनौपचारिक प्रयोजनों के लिए बोलियों का इस्तेमाल करते हैं, जबकि शिक्षा, शासन, औपचारिक पत्राचार, शासकीय प्रयोजन की बोलचाल आदि के लिए मानक हिंदी का। शुरुआती कुछ जनगणनाओं में हमारे देश में 1652 बोलियों, भाषाओं, विभाषाओं आदि का अस्तित्व स्वीकार किया जाता रहा, जिनकी संख्या इधर कुछ कम हुई है। इसके कई कारण हैं, जैसे– शिक्षा के व्यापक प्रचार–प्रसार, परिवहन के साधनों की बढ़ती उपलब्धता के चलते आवागमन का व्यापक प्रचलन और शहर–गाँव के

बीच घटती–पटती दूरी, संचार माध्यमों–विशेषकर टेलीविजन–अख़बार की देश–देशान्तर में गहरी पैठ। इससे कुछ प्रमुख भाषाओं का व्यवहार–क्षेत्र बढ़ा और कुछ अल्प–प्रचलित भाषाओं का सिकुड़ा। कुछ का प्रचलन इतना कम हुआ कि उनके व्यवहर्ता गिने.चुने ही रह गए और उनको गणना में लेने का कोई औचित्य नहीं रह गया।

फर्गुसन ने डायग्लोसिया की सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता बताई उच्च और निम्न भाषा–रूपों के प्रकार्यों (कार्यों) की विशिष्टताए यानी दोनों का अलग–अलग प्रयोजनों के लिए इस्तेमाल किया जाना। एक ही भाषिक समुदाय में उच्च भाषा–रूप का इस्तेमाल किन्हीं विशेष प्रयोजनों के लिए होता है, जबकि निम्न भाषा.रूप का किन्हीं अन्य विशेष प्रयोजनों के लिए। इस प्रवृत्ति को दर्शाने के लिए फर्गुसन ने विभिन्न प्रयोजनों और उनके लिए प्रयुक्त भाषा–रूपों की एक तालिका बनाई, जिसे किंचित परिवर्तन के साथ नीचे प्रस्तुत किया जा रहा है.

प्रयोजन	**प्रयुक्त भाषा–रूप**	
चर्च, मस्जिद में उपदेश, धर्म–चर्चा	उच्च भाषा–रूप	
नौकर, बैरों, मजदूरों, लिपिकों आदि को निर्देश		निम्न भाषा–रूप
संसद में चर्चा राजनीतिक भाषण	उच्च भाषा–रूप	
कॉलेजों, विश्वविद्यालयी भाषणों में	उच्च भाषा–रूप	
परिवार के सदस्यों, मित्रों, सहकर्मियों से बातचीत		निम्न भाषा–रूप
खबरों का प्रसारण, अख़बार संपादकीय, समाचार, तस्वीरों के शीर्षक, न्यूज स्टोरी, कविता	उच्च भाषा–रूप	
सोप ऑपेरा, लोक. साहित्य		निम्न भाषा–रूप

हालांकि यह अध्ययन भारतीय भाषाओं से इतर भाषिक समुदायों में किया गया और इसे प्रस्तुत किए साठ वर्ष से अधिक समय बीत चुका है, फिर भी यह आज भी और दुनिया के प्रायः सभी उन्नत भाषिक समुदायों के परिप्रेक्ष्य में प्रासंगिक है। शिक्षित व्यक्तियों की लगातार बढ़ती संख्या के कारण अपने शैक्षणिक स्तर से कम पर नौकरी पकड़ लेने या लिपिकों के उच्च शिक्षा प्राप्त होने की प्रवृत्ति के चलते भारत में लिपिक संवर्ग के कर्मचारी शासकीय कार्यों में मानक भाषा का प्रयोग करते हैं। इसलिए फर्गुसन के उक्त अध्ययन के अंतर्गत क्लर्कों को निम्न भाषा–रूप से जोड़ के देखा जाना, भारत के परिप्रेक्ष्य में लागू नहीं होता। दूसरे, साहित्य के क्षेत्र में जनवादी आंदोलनों के चलते, उस विचारधारा से जुड़े लेखकों और आंचलिकता–प्रधान कृतियों में भी भाषा के निम्न रूप का ही प्रयोग देखने को मिलता है। इन दो अपवादों को छोड़ दें तो फर्गुसन के उपर्युक्त निष्कर्ष हमारे लिए आज भी पूरी तरह प्रासंगिक हैं।

सही भाषा रूप को सही समय पर इस्तेमाल करना बहुत आवश्यक है। इसे फर्गुसन ने उदाहरण देकर समझाया। जैसे कोई बाहरी व्यक्ति जब निम्न भाषा–रूप को अच्छी तरह सीख लेता है और फिर उसी में सार्वजनिक रूप से औपचारिक भाषण देता है तो वह आम लोगों के बीच मजाक का विषय बन जाता है। बिहार के एक मशहूर राष्ट्रीय नेता को हम इसके उदाहरण के रूप में ले सकते हैं। इसी प्रकार अनौपचारिक बोलचाल में जैसे बाजार–हाट करते समय जब कोई व्यक्ति उच्च रूप का इस्तेमाल करता है तो वह भी हास्य का पात्र बनता है। अध्ययन के लिए चयनित चारों भाषा–समुदायों में पाया गया कि कोई व्यक्ति मानक (उच्च) भाषा में छपा अख़बार पढ़कर लोगों को सुनाता है और फिर उसकी मीमांसा स्थानीय (निम्न) भाषा में की जाती है। यह प्रवृत्ति हम रोज–मर्रा के लोक–जीवन में अक्सर ही देखते हैं।

शिक्षा के क्षेत्र में भी यह प्रवृत्ति दिखाई देती है, जहाँ क्लास रूम में औपचारिक भाषण तो उच्च भाषा–रूप में होता है, किन्तु खेल के मैदान, ड्रिल, पीटी आदि में निम्न रूप इस्तेमाल होता है। यह भाषा–व्यवहार की सहज पद्धति है। पिछले कुछ दशकों में अंग्रेजी माध्यम के भारतीय स्कूलों में इस पर जबरन रोक लगाई गई है और छात्रों को निर्देश दिया गया है कि वे क्लास रूम के बाहर भी औपचारिक भाषा का ही इस्तेमाल करें। ध्यातव्य है कि अंग्रेजी माध्यम के स्कूलों के लिए औपचारिक भाषा अंग्रेजी ही है। इन स्कूलों में हिंदी अथवा किसी भी प्रांतीय भाषा का इस्तेमाल केवल उस भाषा की क्लास के दौरान होता है, क्लास के बाहर नहीं।

उक्त उदाहरणों से स्पष्ट होता है कि एक ही व्यक्ति, आवश्यकतानुसार कुछ–कुछ मिनटों के अंतराल पर उच्च से निम्न और निम्न से उच्च भाषा रूप का प्रयोग अदल–बदलकर करता है। परवर्ती विद्वानों ने दो भाषा–रूपों को उच्च कोड अथवा औपचारिक (फॉर्मल) कोड तथा निम्न कोड अथवा अनौपचारिक (इनफॉर्मल) कोड कहकर अभिहित किया और एक से दूसरे कोड में जाने की प्रक्रिया को कोड–स्विचिंग नाम दिया।

चारों संदर्भ–भाषाओं में फर्गुसन ने पाया कि कविगण उच्च और निम्न, दोनों भाषा–रूपों में कविता करते हैं, किन्तु कतिपय भाषा–समाजों में उच्च भाषा की कविता को ही वास्तविक कविता माना जाता है। भारत में ऐसा नहीं रहा और बहुत–सा भारतीय साहित्य, विशेषकर भक्ति–साहित्य निम्न भाषा–रूप में रचा गया। इसका कारण है भारत का भक्ति आंदोलन, जिसकी आध्यात्मिक ही नहीं बल्कि भाषिक–सामाजिक चेतना भी सर्वग्रासी थी। उस काल में अथवा उसके प्रभाव में रचा गया अधिकांश साहित्य आम आदमी के लिए और स्वभावतः उसकी भाषा में ही रचा गया। उस काल में आम भारतवासी अशिक्षित थे और सच कहें तो रचनाएं करने वाले बहुत से भक्त कवि भी निरक्षर ही थे। अलबत्ता निरंतर घूमते रहने और संत–समागम के कारण उनके शब्द–भांडार में पर्याप्त विविधता अवश्य आ गई थी। लोक–निष्ठता तो थी ही। ऐसी ही भाषा को आचार्य शुक्ल प्रभृति विद्वानों ने सधुक्कड़ी नाम दिया, जिसमें उनके अनुसार खिचड़ी की–सी सोंधी–सोंधी सुगंध आती है। हालांकि भक्ति–काल में ही सुशिक्षित विद्वानों का एक ऐसा समुदाय भी था जो आम–फहम की भाषा में कविता और विशेषकर ईश्वर का गुणगान करने को गर्हित कर्म मानता था। तुलसीदासजी ने जब रामकथा को जन–जन की भाषा अवधी में लिखकर रामचरितमानस की रचना की, तब संस्कृतज्ञ विद्वानों ने उनकी बहुत लानत–मलानत की।

जैसाकि फर्गुसन ने अपनी चार संदर्भ भाषाओं में पाया, भारत में भी निम्न भाषा–रूप का इस्तेमाल करने वालों के मध्य कतिपय मुहावरे, शिष्टाचार के जुमले आदि उच्च भाषा–रूप में प्रचलित रहे हैं। हम पाते हैं कि अनपढ़ और गंवार लोग भी किसी का स्वागत करने के लिए आइए, पधारिए, फर्माइए, तशरीफ रखिए, अर्ज है, प्रार्थना है, कृपा होगी, आदि जुमले बोलते हैं, जो निश्चय ही उच्च भाषा–रूप से लिए गए हैं।

सभी भाषा–समुदायों में उच्च भाषा–रूप को निम्न भाषा–रूप की अपेक्षा उत्तम माना जाता है। कभी–कभी तो उच्च को ही अस्तित्वमान मान लिया जाता है और निम्न भाषा–रूप को सिरे से ही खारिज कर दिया जाता है। यदि कोई निम्न भाषा–रूप में बोलता है तो लोग कहते हैं कि उसे तो भाषा आती ही नहीं। पिछले कुछ बरसों में शासन और सत्ता में आए बहुत से लोगों के बारे में इस तरह की टिप्पणियाँ सुनने को मिलती हैं, जिसका आशय यही लेना चाहिए कि उक्त व्यक्ति को उच्च भाषा–रूप नहीं आता या फिर वह सार्वजनिक जीवन में भी निम्न भाषा–रूप का ही इस्तेमाल करता है।

उच्च भाषा–रूप का इस्तेमाल प्रतिष्ठा का

विषयः सभी भाषिक समाजों के लिए यह सच है कि उच्च भाषा रूप का इस्तेमाल करना प्रतिष्ठा की बात है, जबकि निम्न भाषा–रूप के इस्तेमाल को गर्हित माना जाता है, बल्कि उसके अस्तित्व को ही नकारा जाता है। इतर भाषा–भाषियों को जब विधिवत पढ़ाकर कोई नई भाषा सिखाई जाती है तो अकसर वह उच्च भाषा–रूप वाली भाषा ही होती है।

उच्च भाषा–रूप को अधिक सशक्त, प्रभावशाली, प्रांजल, परिनिष्ठित और खूबसूरत समझा जाता है। ऐसा माना जाता है कि उसमें महत्त्वपूर्ण विचारों, सिद्धान्तों आदि का प्रतिपादन असरदार तरीके से किया जा सकता है। उस भाषा के अच्छे जानकार ही नहीं, बल्कि कम जानने वाले भी यही धारणा रखते हैं। आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि भाषा–द्वैत युक्त भाषा–समाजों में अधिकतर व्यक्ति राजनीतिक भाषण अथवा कविता–पाठ आदि उच्च भाषा–रूप में ही सुनना पसन्द करते हैं, चाहे वह ठीक से उनके पल्ले न भी पड़े। अपने देश में मिर्जा गालिब को उर्दू का बड़ा शायर कहा गया। हिंदी में मुक्तिबोध, अज्ञेय आदि की भी वही स्थिति रही है, जबकि सच्चाई यह है कि न गालिब किसी को ठीक से समझ आते हैं न मुक्तिबोध। राजनेताओं में श्री अटल बिहारी वाजपेई को अच्छा वक्ता माना जाता रहा है, क्योंकि वे उच्च कोड की भाषा बोलते हैं।

अपने देश में हिन्दुओं के बीच संस्कृत को इतना ऊँचा मुकाम हासिल है कि लगभग सारे धार्मिक कार्य और अनुष्ठान संस्कृत मंत्रोच्चार के बीच संपन्न होते हैं। सभी जानते हैं कि देश में संस्कृत कितने कम लोग समझते हैं। सन् 2011 की जनगणना के अनुसार केवल 14135 व्यक्ति संस्कृत को मातृभाषा मानते हैं। यदि संस्कृत ग्रंथों के कुछ भाष्य भी रचे गए तो वे भी लक्ष्य भाषा के उच्च कोड में ही हैं। इसका कारण है धर्म से उच्च भाषा–रूप की अनिवार्य संपृक्ति। पूरी दुनिया के सबसे अधिक पूज्य धर्म–ग्रंथ ऐसी ही भाषाओं में उपलब्ध हैं जो उच्च कोड में होने के कारण पूरी तरह अर्थ–गम्य न होकर भी व्यवहार में हैं।

साहित्यिक विरासत उच्च भाषा–रूप में होती है

जब हम बोलते हैं तो भाषा का अधिक विचार नहीं करते, किन्तु लिखते समय मानक भाषा लिखते हैं। प्रायः जिस व्यक्ति से बोलचाल में हम बहुत चलताऊ शब्दों और शैली का इस्तेमाल करते हैं, उसी को चिट्ठी लिखते समय हमारी भाषा बहुत संयत और मानक होती है। अपने यहाँ मान्यता है कि लिखे हुए शब्द में बड़ी ताकत है। इसलिए एक बार जो बात लिखी जाए, खूब सोच–समझकर अच्छी भाषा में लिखी जाए। यह दूसरी बात है कि कथा साहित्य में अथवा नाटकों में भाषा को सायास पात्रानुकूल बनाया जाता रहा है, यानी संषंत, कुलीन और पढ़े–लिखे पात्र परिनिष्ठित भाषा तथा नौकर–चाकर, अनपढ़ ग्राम्य जन प्राकृत, बोली आदि का इस्तेमाल करते हैं। अपने देश में दर्शन, गणित, खगोल विद्या, न्याय–शास्त्र, नीति–शास्त्र आदि के जो भी ग्रंथ लिखे गए वे उस समय के उच्च भाषा–रूप यानी संस्कृत में हैं। बाद में उनका अनुवाद भी आम–फहम की भाषा में नहीं, बल्कि विभिन्न भारतीय भाषाओं के परिनिष्ठित रूपों में ही हुआ है।

हालांकि लोक–गीतों, लोक–कथाओं की एक समानांतर धारा समाज में निरंतर बहती रहती है। बहुत–सा अधोमानक साहित्य भी अस्तित्व में रहता है। किन्तु भाषा, शैली और कथ्य के स्तर पर मानकता के लिए आग्रही विद्वत्समाज कभी भी लोक–प्रचलित (तथा कथित) निम्न–कोटीय साहित्य को कालजयी नहीं होने देता। न उस पर चर्चा होती है, न ही उसे गंभीरता से लिया जाता है।

नैसर्गिक रूप से बच्चा पहली भाषा निम्न कोड में ही सीखता है, जबकि उच्च कोड अभिगम (सीखने) की विषयवस्तु हैः बच्चे का भाषा–अभिगम हमेशा निम्न कोड में होता है। उसके परिवेश के सब लोग, माता–पिता, दादा–दादी, चाचा–ताऊ, सब चाहे खुद कितने ही बड़े ज्ञानी–ध्यानी हों, किन्तु बच्चे से बात करते हैं तो निम्न कोड में। इसलिए

बच्चा कई बार बड़ों से संबंधानुकूल आदर–सूचक संबोधन नहीं कर पाता और न ही वैसी भाषा बोल पाता है। नैसर्गिक रूप से सीखी गई तू–तड़ाक शैली में बोली गई बच्चे की बात का कोई बुरा भी नहीं मानता। यही स्थिति गाँव के अनपढ़ लोगों की होती है, हालांकि अपनी कुशल व्यवहार–बुद्धि के चलते वे बच्चे की अपेक्षा बेहतर तरीके से बोल लेते हैं और यह जानते हैं कि बड़ों से इज्जत से कैसे बात करनी चाहिए। किन्तु बहुत सभ्यता–पूर्वक बात करने के लिए उनको भी उच्च कोड में प्रचलित शब्दों का सहारा लेना पड़ता है। फर्क इतना है कि नैसर्गिक रूप से बच्चा तू 'बोलेगा तो गाँव का आदमी तूँ' (भोजपुरी) या तुम'। आप' बोलने के लिए उसे उच्च कोड की भाषा का अभिगम करना होगा, उसे प्रयासपूर्वक सीखना होगा। बच्चे के लिए अभिगम (सीखने) की औपचारिक प्रक्रिया स्कूल में शुरू होती है। यह दूसरी बात है कि उच्च कोड के जानकार जब घर में हों तो वे इसकी शुरुआत घर में ही कर देते हैं। प्रायः माँ यह काम करती है, इसीलिए उसे प्रथम गुरु कहा गया है। अनपढ़ माँओं के बच्चे (जो स्कूल नहीं जा पाए या शिष्ट समाज से उच्च कोड के जुमले नहीं सीख पाए) पूरी जिन्दगी निम्न कोड से ही काम चलाते रहते हैं।

निम्न कोड के व्यवहार में आसानी रहती है। ऐसी सरलता उच्च कोड में कभी नहीं आ सकती। निम्न कोड की व्याकरणिक संरचना व्यवहारकर्ता को अपने–आप हृदयंगम हो जाती है, जबकि उच्च कोड को सायास सीखना पड़ता है। चूंकि उच्च कोड से प्रतिष्ठा जुड़ी है, इसलिए पढ़े–लिखे परिवारों में लोग कोशिश करते हैं कि उनकी अगली पीढ़ी निम्न कोड सीखे ही नहीं। पुरानी पीढ़ी के शहरी परिवारों में लोग अपने छोटे बच्चों से बड़े सलीके से उच्च कोड में बात करते थे, मकसद यही रहता था कि बच्चे निम्न कोड कतई न सीखें। आज पढ़े–लिखे भारतीय भाषा–समुदायों में उच्च कोड की जगह अंग्रेजी ने ले ली है। यही कारण है लोग अब कोशिश करते हैं कि उनके बच्चे अंग्रेजी में ही बोलें–चालें। पहले के माँ–बाप परिनिष्ठित हिंदी या उर्दू में अपने छोटे बच्चों से बात करते थे, अब के मम्मी–पापा अपने दुधमुँहे बच्चों से अंग्रेजी में बात करते हैं। माई पहले माँ बनी, फिर मम्मी और अब बन गई ममा। बाबूजी पहले डैडी, डैड व पापा बने और अब बन गए हैं पा। बच्चों को यही सिखाया जा रहा है, और अपनी निम्न कोडीय मातृ–भाषा से उनको सायास दूर रखा जा रहा है।

मानकीकरण सभी उच्च कोडीय भाषा रूपों की अभिन्न विशेषता हैः और मानकीकरण के लिए इस भाषा–रूप में होते हैं कई उपकरण, जैसे. व्याकरण, शब्द–कोश, थिसारस, उच्चारण के सिद्धान्त, लेखन की विभिन्न शैलियाँ आदि। शब्द–रूपों, पदबंधों आदि में जो भी परिवर्तन, विकार आदि आते हैं, वे किसी न किसी नियम अथवा परिपाटी के अनुरूप होते हैं। इसके विपरीत निम्न कोडीय भाषा–रूप में भाषा को मानकता देने वाले इस प्रकार के उपादान प्रायः नगण्य होते हैं। यदि अत्यल्प मात्रा में वे होते भी हैं तो अकसर मूल भाषा–भाषी समुदाय से बाहर के होते हैं। बताते चलें कि उच्च कोडीय भाषा होने के कारण संस्कृत के व्याकरण, कोशों आदि की सदियों पुरानी परंपरा वहाँ मौजूद रही है, किन्तु हिंदी अथवा संस्कृतेतर अन्य भाषाओं में ऐसा कोई प्रयास शुरुआत में कई सदियों तक नहीं हुआ। नागरी प्रचारिणी सभा, काशी ने सबसे पहले पं. कामताप्रसाद गुरु से व्याकरण लिखवाकर इस अभाव की पूर्ति की। अलबत्ता जेशुआ केटलर और तत्पश्चात् दर्जनों विदेशी विद्वानों ने जरूर हिंदी या हिन्दुस्तानी के कई व्याकरण अंग्रेजी व दीगर विदेशी भाषाओं में काफी पहले ही लिख दिए थे। अब हिंदी का एक मानक रूप स्थिर हो चुका है, उसके कई व्याकरण–ग्रंथ भी विद्यमान हैं और अन्य भाषा–शास्त्रीय एवं व्याकरणिक उपादान भी। अरविन्दजी का हिंदी थिसारस बमुश्किल डेढ़ दशक पुराना है।

निम्न–कोडीय भाषा में उच्चारण, व्याकरण और शब्दावली की बहुत भिन्नता होती है। इन अंतरों के बावजूद निम्न कोड और उच्च कोड के बीच की दीवारें बहुत ऊँची नहीं होतीं। उनके भाषा तत्व आपस में परिवर्तनीय और संक्रमणशील होते हैं। कई बार किसी स्थान–विशेष पर प्रचलित निम्न कोडीय भाषा राजनीतिक प्रश्रय पाकर अथवा अन्य कारणों से भौगोलिक विस्तार पाती जाती है और धीरे–धीरे उसका प्रसार–क्षेत्र काफी बढ़ जाता है, जैसे– शौरसेनी प्राकृत और बाद में खड़ी बोली का विस्तार इतने बड़े भू–भाग पर हो गया कि वही मानक हिंदी कहलाने लगी, जबकि शेष निम्न कोडीय भाषाएं गौण रह गईं।

डायग्लोसिया की स्थिति स्थिर होती है और वह सदियों बल्कि सहस्राब्दियों तक बनी रह सकती हैः भारत इस प्रवृत्ति का बहुत अच्छा उदाहरण प्रस्तुत करता है। यहाँ पठन–पाठन, ग्रंथ लेखन, वाद अथवा सिद्धान्त प्रतिपादन, विद्वानों के वाद–विवाद, शास्त्रार्थ आदि की भाषा बनी रही उच्च कोडीय संस्कृत, जबकि आम बोल.चाल में इस्तेमाल होती रहीं, अपभ्रंश, प्राकृतें और क्षेत्रीय बोलियाँ। कम से कम ढाई हजार वर्ष से यह चला आ रहा था। केवल पिछले आठ.नौ सौ वर्षों में वह भी प्रधानतया भक्ति आंदोलन के कारण, निम्न कोडीय भाषाओं को प्रतिष्ठा मिली। लेकिन धीरे–धीरे उन भाषाओं, विभाषाओं में भी उच्च कोडीय और निम्न कोडीय रूप बन गए। स्वतंत्रता के बाद, भाषा–वार राज्य बन जाने पर इनमें से कुछ भाषाओं को राजभाषा यानी शासकीय प्रयोजनों के लिए दफ्तरी भाषा बनाया गया। इस कारण इनमें मानकता, कोडीकरण, रूढ़िबद्धता और इन सबके चलते एक तरह की प्रांजलता का आ जाना स्वाभाविक था, जो कई बार सहज न होकर कृत्रिम लगने लगती है और अपरिचय के कारण प्रायः कठिन प्रतीत होती है। अपने इस नव्यतर रूप–विन्यास के कारण है अब क्षेत्रीय भाषाओं में भी उच्च कोड और निम्न कोड दिखाई देने लगे हैं। आम लोक–व्यवहार की भाषा भी राज्य–प्रश्रय पाकर कैसे उच्च कोडीय भाषा बन जाती है, इसका एक ज्वलंत उदाहरण है उर्दू जो मुगल–काल में सिपाहियों, व्यापारियों और आम लोगों की आपसी बोल–चाल के क्रम में पैदा हुई और धीरे.धीरे दरबारों में, नफासत पसंद अहलकों में कला, संस्कृति, गजल गोई, शेरो–शायरी और मुजरों–मुशायरों की भाषा बन गई। धीरे–धीरे बात यहाँ तक पहुँची कि बहुत तमीज से कोई बात कहनी हो तो उर्दू के बिना काम ही न चले।

निम्नकोडीय भाषाओं को सजाने–सँवारने के लिए अकसर दूसरी उच्चकोडीय भाषाओं से शब्द ले लिए जाते हैं, जैसे हिंदी में संस्कृत के तत्सम शब्द अथवा उर्दू में अरबी–फारसी के शब्द। कई बार इन शब्दों के तद्भव यानी बिगड़े हुए रूप भी भाषा में प्रचलित होते हैं, किन्तु उच्च कोड में तत्सम रूप का प्रयोग होता है, जबकि निम्न कोडीय भाषा रूप में तद्भव का। हिंदी अथवा अन्य भारतीय भाषाएँ बोलने वाले जब बात–बेबात अंग्रेजी के शब्द अपनी भाषा में घुसेड़ रहे होते हैं, तब अनायास ही वे अपनी निम्न कोडीय भाषा को उच्च कोडीय बनाने की कोशिश ही कर रहे होते हैं।

व्याकरण के स्तर पर उच्च कोडीय और निम्न कोडीय भाषा में कुछ बारीक अंतर होते हैं– उच्च कोडीय भाषा रूप की व्याकरणिक संरचना जटिलता लिए हुए होती है, जबकि निम्न कोडीय भाषा में बहुत कम व्याकरणिक जटिलता होती है। उदाहरण के लिए मानक हिंदी और कुछ बोलियों की वाक्य–संरचना यहाँ द्रष्टव्य है.

उच्च कोडीय (हिंदी)

निम्न कोडीय (सूर की ब्रज)

यशोदा हरि को पालने में झुलाती है

जसोदा हरि पालनें झुलावे (सूरदास)

हे गोपाल, अब मैं बहुत नाच लिया
अब मैं नाच्यौ बहुत गोपाल (सूरदास)

फर्गुसन के अनुसार क्लासिकल अरबी की संज्ञा में तीन वाच्य होते हैं, जबकि उसकी बोली में एक भी नहीं। हिंदी (उच्च कोड) और उसकी बोलियों (निम्न कोड) में भी यह स्थिति देखने को मिलती है, जैसे उपर्युक्त उदाहरण में– हरि को के स्थान पर केवल हरि और पालने में के स्थान पर केवल पालने। क्रिया–पद नाच लिया के स्थान पर नाच्यौ। संस्कृत (जो सभी भारतीय भाषाओं की अपेक्षा उच्च कोडीय भाषा रही है) में संज्ञाओं के तीन लिंग हैं। पुल्लिग, स्त्रीलिंग और उभयलिंग अथवा नपुंसक लिंग। क्रिया रूपों के लिए संस्कृत में लट् लकार, लोट लकार, लङ् लकार, लृट् लकार आदि कई भेद हैं, किन्तु हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं में लकारों की ऐसी जटिलता नहीं है। इसीलिए फर्गुसन का मानना है कि केवल चार संदर्भाधीन भाषाओं ही नहीं, बल्कि अध्ययन के लिए ली गई सभी डायग्लोसिया–युक्त भाषाओं में कमोबेश यही स्थिति है। उन सबमें उच्च कोड में व्याकरण की जटिलता निम्न कोडीय भाषा की तुलना में कहीं अधिक है। भाषा–वैज्ञानिक शब्दावली में कहें तो उच्च कोडीय भाषा–रूप में शब्दों के रूपिमों की संख्या अधिक होती है, जबकि निम्न कोडीय भाषा–रूप में कम।

उच्च कोडीय भाषा में शब्दों का उच्चारण शास्त्र–सम्मत और शुद्ध होता है, जबकि निम्न कोडीय में किंचित अशुद्धता लिए हुए। पाठकों को सुनील दत्त और नूतन पर फिल्माया वह गीत याद होगा, जिसमें गँवार सुनील दत्त एक गीत नूतन को सिखाते हैं. सावन का महीना, पवन करे सोर। नूतन सोर को शोर बोलती हैं (जो कि शुद्ध उच्चारण है)। इसे सुनील दत्त (जो अनपढ़ मल्लाह की भूमिका में हैं) अपने तईं ठीक (यानी निम्न कोड में) करते हैं–अरे शोर नहीं बाबा सोर.. सोर। उच्चकोडीय संस्कृत में निबद्ध मंत्रों के उच्चार में शुद्ध उच्चारण का महत्त्व इसी धारणा से समझा जा सकता है कि यदि मंत्रोच्चार ठीक न हो तो असर उलटा और बहुत नुकसानदायक भी हो सकता है। निम्न कोडीय भाषा–रूपों में ऐसी कोई बंदिश नहीं है, इसीलिए वहाँ स्टेशन का टेसन और टीसन बन जाता है तो डॉक्टर का डाकडर और डगडर।

शब्दावली– उच्च भाषा–रूप और निम्न भाषा–रूप, दोनों की शब्दावली में आम तौर पर बहुत समानता होती है। अलबत्ता शब्दों के रूपए प्रयुक्ति और अर्थ में कहीं–कहीं अंतर हो जाता है। किन्तु समस्त तकनीकी शब्दावली और ज्ञान–विज्ञान की शब्दावली उच्च भाषा–रूप में ही होती है और उसके कोई नियमित पर्याय निम्न भाषा–रूप में नहीं होते। कारण यह है कि तकनीकी विषयों, ज्ञान–विज्ञान आदि की चर्चा निम्न भाषा–रूप में प्रायः कभी नहीं होती।

इसके विपरीत निम्न भाषा–रूप में बोल–चाल के लोक–प्रचलित शब्दों, घरेलू वस्तुओं अथवा स्थानीय रूप से प्रचलित वस्तुओं के नामवाचक शब्दों की भरमार होती है, जिनके लिए उच्च भाषा–रूप में नियमित पर्याय नहीं होते। इसका कारण भी यही है कि इन विषयों पर उच्च भाषा–रूप में प्रायः कभी भी चर्चा नहीं होती। उदाहरण के लिए हिंदी प्रांतों की रसोई में प्रयुक्त– चकला, बेलन, चिमटा, परात, थाली, लोटा, सिल–बट्टा, खरल, चटनी, छौंक, बघार, पचफोरन, लोई, मोयन आदि शब्दों को लिया जा सकता है, जिनके लिए परिनिष्ठित भाषा के शब्द खोजने में बहुत व्यायाम करना पड़ेगा।

डायग्लोसिया–युक्त भाषा–समुदायों की यह खासियत है कि वहाँ काफी बड़ी संख्या में ऐसी अवधारणाएं होती हैं, जिनके लिए उच्च और निम्न, दोनों भाषा–रूपों में शब्द–युग्म उपलब्ध होते हैं। कार्यालयीन हिंदी में प्रयुक्त पत्र, प्रेषण, कार्यालय, अधिकारी, लिपिक आदि ऐसे बहुत–से शब्द हैं जो उच्च भाषा–रूप में हैं, जबकि उनके निम्न कोडीय भाषा–रूप जैसे–चिठ्ठी, भेजना, दफ्तर, अफसर, बाबू आदि आम–फहम में प्रचलित हैं। किन्तु बोलचाल में चाहे निम्न भाषा–रूप का इस्तेमाल होता हो, लिखते समय उच्च भाषा–रूप में प्रचलित शब्द ही

लिखे जाते हैं। सामाजिक–राजनीतिक कारणों से कभी ऐसा भी हो सकता है कि निम्न भाषा–रूप के शब्द उच्च भाषा–रूप में अधिक प्रचलन में आ जाएँ, जैसाकि दफ्तरी हिंदी को सरल बनाने के क्रम में आजकल हो रहा है।

स्वन–व्यवस्था (ध्वनि–व्यवस्था), उच्च और निम्न, दोनों भाषा–रूपों में से निम्न भाषा–रूप की स्वन–व्यवस्था प्रायः उच्च भाषा–रूप का आधार होती है। साथ ही, निम्न कोड में प्रचलित स्वनों में ही परिष्कार लाकर, उच्च कोड की रचना की जाती है। याद करें, बचपन के दिन जब हम शरारत, शरबत आदि को सरारत और सरबत बोलते थे। बाद में घर के बड़ों ने अथवा शिक्षकों ने हमारा यह उच्चारणगत भाषा–दोष दूर किया।

निम्न भाषा–रूप में सामाजिक शिष्टाचार का प्रायः अभाव होता है (खासकर जब हम उसे नागर–समाज के चश्मे से देखते हैं। भदेस कहावतें अकसर इसी भाषा–रूप में कही जाती हैं। ग्राम्य जीवन में लोग भद्दी से भद्दी बात भी निम्न भाषा–रूप में बड़ी सहजता से कह जाते हैं। ग्राम्य जनों के नाम भी कई बार ऐसे ही होते हैं। जैसे भगेलू, दगड़ू, झुमनी, छुटकी, ननकी, नाने ननकू ननकइया, लल्ली, कल्लू आदि। निम्न भाषा–रूप की फितरत ही ऐसी है। किन्तु उच्च भाषा–रूप में बहुत–से विधि–निषेध हैं। उपर्युक्त भदेस शब्दों और अभिव्यक्तियों का वहाँ कोई काम नहीं। बुरी बात भी करनी हो तो लोग बड़े आडंबर से कहते हैं। केवल निम्न कोड का जानकार, गाँव का बच्चा लघुशंका के लिए माँ से कहता है, अम्मा, मोय पेसाब लगी है। वहीं शहर का सुसभ्य बच्चा उच्च कोड में कहता है. मम्मा टायलेट लगी है। स्कूलों में यही बात बताने के लिए हमारी पीढ़ी को एक नंबर, दो नंबर कहना सिखाया गया था।

अब जरा कार्यालयीन हिंदी की बात। पिछले लगभग साठ–पैंसठ वर्ष से हिंदी संघ की राजभाषा है। आज हिंदी का जो भी कार्यालयीन साहित्य हमारे समक्ष है, वह प्रायः सब का सब अंग्रेजी से अनूदित है। अनुवाद का प्रशिक्षण लेते समय हमें सिखाया गया था। फिटजेराल्ड की परिभाषा में कहा गया कि भुस्स भरे बाज से तो बेहतर है जीवित गौरैया। मूल कथ्य के प्रति निष्ठावान रहने और उसकी शैली को भी अनूदित पाठ में ले जाने की सीख हमें दी गई। मूल पाठ में जितने शब्द थे, उतने ही अनूदित में हों। इन सब संस्कारों को लेकर हमने अनुवाद करना शुरू किया। राजभाषा और अनुवाद के क्षेत्र से जुड़ने वाले बहुत कम लोग ऐसे थे जो मूल लेखन में सिद्ध हस्त थे। जो थे उनका अनुवाद अंग्रेजी की प्रेतछाया से ग्रस्त नहीं है। जो नहीं थे उन्होंने ऐसी अनूदित हिंदी तैयार की, जिससे हिंदी का आम पाठक बिदक गया। इस दोष से हिंदी को बचाना था, तो लोग पहल करके हिंदी में मूल रूप से मसविदे तैयार करते। इतना कष्ट बहुत कम लोगों ने उठाया।

दफ्तरों में वैसे भी पीछे देख–आगे चल की परिपाटी चलती है। फाइल खोलो, पढ़ो, उसी से सामग्री लेकर नया मसविदा तैयार करो। यहाँ रचनात्मकता के लिए कोई जगह नहीं। अनुवाद के रास्ते दफ्तर में आई हिंदी लोगों के पल्ले नहीं पड़ी तो बाबू लोगों ने उसी अंग्रेजी को जारी रखना उचित समझा जो फाइलों में सहजता से मिल रही थी और जिसके लिखने में उनको कोई खतरा नहीं दिखता था। हिंदी के प्रति कोई अपनत्व की भावना उनमें नहीं जगी। यदि जगती तो वे उसे अपना बनाकर लिखते। अपनत्व न होने से दूरी कायम हुई और दूरी ने दुरूहता का भ्रम और भी पक्का कर दिया।

हिंदी की नियोजित विकास प्रक्रिया में अंग्रेजी शब्दों के लिए जो नए हिंदी शब्द बने, वे नये थे, अप्रचलित थे और इस कारण शासन–व्यवस्था में लोग उन शब्दों से अपरिचित थे। साथ ही, अंग्रेजी के प्रभाव से आक्रांत बाबुओं को इन नए शब्दों में कोई रुचि भी नहीं थी। उन्हें तो अंग्रेजी ही जमती थी और आज भी जम रही है। हिंदी को यदि वे अपने काम की मौलिक भाषा बनाते तो उसकी

दुरूहता खुद खत्म हो जाती। लेकिन उसे तो उन्होंने अनुवादकों और हिंदी अधिकारियों के जिम्मे छोड़ दिया और खुद मूल काम अंग्रेजी में करते रहे। हिंदी अधिकारियों और अनुवादकों को तो अपना काम शब्द–कोश देखकर ही करना था, क्योंकि उनमें से अधिकतर हिंदी–अंग्रेजी के तो जानकार थे, किन्तु अनूद्य विषय की जानकारी उन्हें कम थी। अनुवाद के लिए उनके पास समय भी इतना कम रहता कि विषय की जानकारी लेने के बजाय वे मक्षिका स्थाने मक्षिका बैठा देते। नुकसान हुआ हिंदी का।

यह सच है कि कार्यालयीन हिंदी को सरल बनाया जा सकता है। किन्तु उसकी भी एक सीमा है। और यह काम केवल हिंदी संवर्ग वाले करेंगे, यह सोचना उचित नहीं है। हिंदी संवर्ग किसी भी संस्था में अनुषंगी ही होता है। कुछ ऊँची सोच वाले लोग उसकी तुलना घर की मेहरी से करते हैं। केवल उदाहरण की सरलता के लिए यह मान लें कि हिंदी अनुवादक या हिंदी अधिकारी घर की मेहरी है। सुबह–शाम उसे जो बरतन जूठे मिलते हैं, उन्हें वह माँज देती है। लेकिन यदि उसके माँजे बरतनों में जूठन रह जाती है तो घर के लोग बरतन दुबारा धोते हैं या नहीं, कि गंदे बरतन में ही भोजन कर लेते हैं? इसी प्रकार दिन में जो छोटे–छोटे बरतन, चाय के कप–प्लेट आदि निकलते हैं उनको खुद भी तो धो लेते हैं। शायद खाना पकाने वाली मेहरी के उदाहरण से यह बात और स्पष्ट होगी। यदि हमें अपनी रुचि का और सबसे शुद्ध, स्वास्थ्यकर भोजन करना है तो खुद ही भोजन पकाना श्रेयस्कर है। अकसर गृहणियाँ यही करती हैं। इसलिए यदि आपको हिंदी, वह भी सरल, सुष्ठु, सबको (और प्रायः खुद को) समझ आने वाली हिंदी चाहिए तो क्या यह उचित नहीं होगा कि हम खुद वैसी हिंदी लिखने की शुरुआत करें?

यदि डायग्लोसिया के संदर्भ में हिंदी और अंग्रेजी को देखें तो हम पाते हैं कि आज हिंदी–प्रांतों में अंग्रेजी उच्च कोड की भाषा बनती जा रही है और हिंदी निम्न कोड की। लोग अमूमन अंग्रेजी इस्तेमाल करने में गौरव अनुभव करते हैं। यदि उन्हें अंग्रेजी नहीं भी आती है तो हिंदी अथवा अपनी–अपनी प्रांतीय भाषाओं में अंग्रेजी के शब्द घुसेड़कर ही यह काम चला लेते हैं। चाहे वह गलत अंग्रेजी ही हो, उसमें उन्हें हेठी नहीं लगती जैसे परपज सॉल्व (नब्बे प्रतिशत लोग इस संदर्भ में सर्व को सॉल्व ही बोलते हैं) नहीं होगा, बड़ी प्रॉब्लम है, बहुत डिफिकल्ट सिचुएशन है। हिंदी में बदस्तूर उच्च कोड है लेकिन उसके लिए सरकारी तंत्र में एक प्रकार का गहन अस्वीकार भाव है। तंत्र चाहता है कि निम्न कोड की भाषा (जिसे वह सरल भाषा कहता है) में ही सरकारी काम हो। तिसपर तुर्रा यह कि सरकारी कर्मचारी खुद वह भाषा नहीं लिखेंगे। वे चाहते हैं कि अनुवादक, हिंदी अधिकारी आदि राजभाषा संवर्ग के स्टाफ ऐसी भाषा उनको लाकर दें। यह स्थिति बड़ी शोचनीय है।

जैसाकि हम ऊपर देख आए, अति सरलता अकसर ऊब और अरुचि को जन्म देती है। अपने बच्चों, मकानों आदि के नाम हम शब्द–कोशों में से ढूंढ़–ढूंढ़कर खालिस संस्कृत में रखते हैं, ताकि उनमें विशिष्टता रहे। हर औपचारिक संदर्भ में शिष्टाचार, वैशिष्ट्य और पर्दादारी का अपना महत्त्व है। किन्तु दफ्तर का काम हम बिलकुल सरल भाषा में चाहते हैं, जो गटागट बुद्धि में उतरती जाए। वहाँ हमें कोई भाषिक परिष्कार नहीं चाहिए। पढ़ा–लिखा और परिष्कृत अभिरुचि का सरकारी तंत्र यह कैसी माँग कर रहा है, समझना कठिन है। इसे आम बोलचाल की भाषा और सरल हिंदी में हुज्जत कहते हैं।

उप महाप्रबंधक (हिंदी)
भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक
15– अशोक मार्ग, लखनऊ 226001

बाल विकास में सहायक विज्ञान की भाषा

आइवर यूशिएल

बड़ों की हमेशा यही इच्छा रहती है कि उनकी अगली पीढ़ी उनसे आगे निकले तथा जीवन मे धन व यश अर्जित करने के साथ खूब सफलता पाये। पर यह एक सर्वविदित तथ्य है कि जीवन में सफलता पाने की पहली शर्त है, कठिन मेहनत करते हुए समय के साथ चलना क्योंकि जो समय के साथ नहीं चल पाता, समय उसकी बाट नहीं जोहता, उसे तो प्रतिपल आगे बढ़ना ही होता है। नतीजा यह होता है कि ऐसा व्यक्ति जिन्दगी की दौड़ में पिछड़कर असफलता के अंधेरों में कही गुम हो जाता है। इसलिए यह जरूरी है कि हमेशा अपनी बुद्धि का सदुपयोग करते हुए चुस्त व चौकस रहा जाये ताकि भविष्य में आने वाली किसी भी परिस्थिति का आसानी से सामना करते हुए उससे पार पाया जा सके।

यह बात तो हम सब ही जानते हैं कि आज का युग विज्ञान का युग है। एक दिन तो क्या एक पल के लिए भी हम विज्ञान के बिना आज अपने जीवन की कल्पना भी नहीं कर सकते है। इस जीवन का कोई भी पक्ष हो या दिन का कोई भी पल, हम किसी न किसी रूप में विज्ञान से अपने को हमेशा जुड़ा हुआ ही पाते हैं। पानी–बिजली जैसी प्राथमिक जरूरतें जिस तरह हमारे पास तक पहुंचती है वह विज्ञान की ही देन है। रहने के लिये घर बनाने हों या पहनने के लिए कपड़े ये विज्ञान के बिना भला कहां संभव है?

तीव्र से तीव्रतर होती सुविधा सम्पन्न यात्राएं विज्ञान की बदौलत ही तो संपन्न हो पाती हैं। चिकित्सा जगत की बात तो दूर, कृषि जैसे क्षेत्र में अब तक उपयोग में लाये जाने वाले परम्परागत तरीके भी यद्यपि विज्ञानाधारित थे परन्तु इनमें आधुनिकतम साधनों के प्रवेश से फसलों की पैदावार में जो अद्भुत क्रांति आयी है उसका श्रेय भी तो विज्ञान को ही है। संचार माध्यमों के तेजी से फैलते जाल ने तो दुनिया के देशों के बीच वाली लम्बी दूरियों की खाईयां ही जैसे पाट दी हैं और ये दूरियां अब मात्र एक फोन कॉल तक सिमटकर रह गई हैं। वीडियो कान्फ्रेंसिंग, इंटरनैट व कम्प्यूटर जैसे शब्द विज्ञान की भारी भरकम पुस्तकों से बाहर निकलकर आम आदमी के बीच अपनी बैठ बनाने पर तुले हुए हैं।

भोर होने के साथ ही हवा में छलाँग मारते हुए घर में उछलकर पहुंचने वाले अखबार के साथ हम जिस चाय की चुस्की की आनन्द लेने बैठ जाते हैं, ये दोनों भी तो विज्ञान के पहियों पर होते हुए ही हमारे पास तक पहुंचते हैं। पूर्व में गाय भैंसों वाली साधारण डेयरी से सीधे मिलने वाला दूध भी अब ढक्कनबंद बोतल या सीलबंद पॉलीपैक में हम तक पहुंचने लगा है और इस तरह दिन की शुरूआत के साथ ही हमारा जुड़ाव विज्ञान के साथ प्रारम्भ हो जाता है। यदि विज्ञान के द्वारा दी गई सुविधाओं की बात छोड़ भी दें तो हमारा अपना शरीर ही इसकी विभिन्न क्रियाओं, सिद्धान्तों और उपकरणों का एक ऐसा जीता–जागता उदाहरण है जिसका कोई सानी नहीं।

हमारे मस्तिष्क के अंदर प्रति सेकेण्ड हजारों की संख्या में ऐसी रासायनिक क्रियाएँ चलती रहती हैं जिनके आगे बड़ी–बड़ी रसायन शालाएँ फेल है। पूरी जिन्दगी लगातार, तीसों दिन, चौबीसों घंटे टनों रक्त उलीचते रहने वाले दिल के सामने शायद बेहद शक्तिशाली पम्प भी पानी माँगने लगे और

इसी तरह पृथ्वी को कई बार लपेटने लायक लम्बाई वाली, शरीर में मौजूद नाड़ियाँ बिना किसी रिसाव व साफ–सफाई के अपने अंदर रक्त का बहाव यदि लगातार बनाये रख पाती है तो इन सब क्रियाओं के पीछे कहीं न कहीं विज्ञान ही तो छिपा है और इन सभी बातों की हमें जानकारी देने वाला भी तो विज्ञान ही है। इसी जानकारी के आधार पर ही हम शरीर में होने वाले क्रियाकलापों में आयी गड़बड़ियों को ठीक करने के प्रयास के बारे में सोच पाये हैं और इसी सोच के आधार पर खोजी गई है ऐसी औषधियाँ जिनकी सहायता से हम अपने शरीर को स्वस्थ एवं निरोगी रख सके हैं।

आज यह बात समझ लेना बहुत जरूरी है कि विज्ञान सिर्फ एक विषय भर नही हैं, यह जीवन का एक बेहद महत्वपूर्ण भाग है। परन्तु इसे विषय के रूप में समेटकर जिस तरह कक्षाओं और पुस्तकों के दायरे में कैद कर दिया गया है, उससे इसका कम तथा हमारा अहित ज्यादा हुआ है। विद्यालयों में पढ़ाये जाने वाले विज्ञान व गणित ये दो ऐसे विषय हैं जिनसें बहुत से बच्चे बेहद घबराते हैं। उनकी यही घबराहट आगे चल कर इतनी बलवती हो जाती है कि वे इसे किसी भी रूप में स्वीकारने की बात तक नहीं सोच पाते। दुर्भाग्यवश अपने अंदर जन्मी इसी सोच के कारण वे अपने दो ऐसे मजेदार और उपयोगी दोस्त खो बैठते हैं जिनसे बिछुड़कर जीवन में वे सफलता की शायद उस पायदान तक नहीं पहुँच पाते जिसके वास्तव में वे हकदार थे।

नई पीढ़ी में इन विषयों के प्रति बैठे डर के लिए हमारी शिक्षा प्रणाली पूरी तरह जिम्मेदार है। भारी–भरकम पाठ्यक्रम में समाये रूखे–सूखे पाठों को किसी तरह रट–रटाकर, केवल अच्छे अंक हासिल कर लेने का दबाव बनाती यह प्रणाली यदि इन बाल छात्रों को स्वयं कुछ करके देखने व सीखने का रोचक तरीका अपनाने के लिए प्रोत्साहित करते हुए इनमें जिज्ञासा और उत्सुकता पैदा कर पाती तो निश्चित तौर पर हमारे यहाँ आज सिर्फ विश्वस्तर के डॉक्टर और इंजीनियर ही नहीं, बल्कि अच्छे अन्वेषक और आविष्कारक भी जन्में होते।

आश्चर्य की बात तो यह है कि विज्ञान के क्षेत्र में एक सबसे बड़ा जो सत्य है और जिससे हम पूरी तरह आंखे मूंदे बैठे हैं, वह है प्रयोग और परीक्षण जो विज्ञान का मुख्य आधार है। यह हमारे देश का दुर्भाग्य है कि इस मुख्य आधार के बिना ही आज विज्ञान को लोकप्रिय बनाने और इसका स्तर ऊँचा उठाने का प्रयास कर हम विश्व स्तरीय प्रगति की दौड़ में शामिल होने का स्वप्न देख रहे हैं। विज्ञान को प्रयोगात्मक रोचक पक्ष से रहित कर इसका बाकी बचा, रूखा–सूखा स्वरूप जिस तरह बच्चों के आगे परोसा जा रहा है वह उनके मन में इस विषय के प्रति कोई रूझान पैदा करे भी तो भला कैसे?

जरूरत तो इस बात की थी कि प्रारम्भ से ही न सिर्फ कक्षाओं में विज्ञान के मूलभूत सिद्धान्तों को समझाते हुए छात्रों को प्रयोग कराये जाते बल्कि उन्हें घरों पर भी अपने आस–पास मौजूद साधारण वस्तुओं से स्वयं प्रयोग कर परिणाम देखने और समझने के लिए भी प्रेरित किया जाता। इससे उनमें न केवल रचनात्मक प्रवृत्ति का विकास होता बल्कि इस तरह उनके अंदर एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण भी पनपता जो आगे चलकर उन्हें विज्ञान को सही ढंग से समझने में बहुत मदद करता।

आज के नन्हें मुन्ने विद्यार्थियों को भी इस बात का एहसास कराया जाना बेहद जरूरी है कि विज्ञान मात्र विषय नहीं है, यह खेल का साधन भी है और इस तरह खेल के माध्यम से शुरू में इसके आधारभूत और बाद में धीरे–धीरे भारी–भरकम सिद्धान्तों तक को समझने का लाभ उठाया जा सकता है। उदाहरण के लिए एक लम्बी–सी सुई को किसी मोमबत्ती के लम्बबत इसके बीचों बीच से आर–पार करते हुए सुई के दोनों सिरों को दो उल्टे रखे गिलासों पर जश टिकाकर रख दीजिए। पर हाँ, पहले मोमबत्ती को दोनों ओर से जलाने की व्यवस्था जरूर कर लीजिएगा। इस तरह रखने पर मोमबत्ती क्षैतिज अवस्था में टिकी रहेगी। बस, अब दोनों ओर माचिस की लौ दिखाइये। कुछ ही समय में आपके

सामने मोमबत्ती एक, मजेदार तमाशा करती झूलने लगेगी, ठीक किसी झूले की तरह। अब सोचने की बात यह है कि दोनों ओर कीलों के साथ ऊपर–नीचे झूलती मोमबत्ती किस आधार पर यह तमाशा करना शुरू कर देती है जो लम्बे समय तक लगातार चलता रहता है, यूँ ही बिना व्यवधान के। आप देखेंगे कि खेल–खेल में बच्चों की उत्सुकता उनको स्वयं इसका हल ढूंढने को प्रेरित करेगी और तब जो कुछ समझ में आयेगा वह पूर्णतया स्थायी व अमिट होगा।

ऐसे ही कहीं किसी बर्थडे पार्टी में एक ऐसा गिलास रखा गया हो जो सोडा वाटर से भरा हो और उसमें डाल दी जाएं चार–पाँच नैप्थलीन की गोलियाँ तो बस तमाशा देखने काबिल रहेगा। बिना किसी बाहरी सहायता के इन गोलियों का कभी ऊपर सतह तक उठ आना तो कभी तली में जा बैठना भला किसे आकर्षित नहीं करेगा और इसके कारण का एक बार पता लग जाने पर भला इसे जिन्दगी में क्या कभी फिर भूला जा सकेगा?

इसीलिए कहा गया है कि शब्दों से कही ज्यादा प्रभावकारी होता है दृश्य और दृश्य से भी कही अधिक प्रभाव छोड़ने में सक्षम होता है स्वयं किया गया प्रयोग। इसलिए विज्ञान के प्रायोगिक पक्ष की पूरी तरह अनदेखी करके हम आज शायद एक ऐसे भविष्य की रचना कर रहे हैं जहाँ पहुँच कर हमें निश्चित ही अपनी गलती का अहसास होगा और तब तक स्वाभाविक रूप से विश्व के दूसरे विकसित व जागरूक रूप से देश हमें पीछे छोड़कर बहुत आगे बढ़ चुके होंगे। अतः एक स्वतंत्र राष्ट्र के जिम्मेदार नागरिक की हैसियत से हम सबका यह कर्त्तव्य बनता है कि हम अपनी नई पीढ़ी के लिए एक ऐसे आधुनिक वातावरण का निर्माण करें जहाँ विज्ञान उनके साथ शुरू से एक मजेदार दोस्त की भूमिका अदा करे और इस दिशा में रोचक वैज्ञानिक बाल साहित्य आशातीत प्रभाव पैदा कर सकता है।

ज्ञान चाहे पुस्तक और पत्र–पत्रिकाओं के माध्यम से अर्जित किया जाए या रेडियो टी.वी. द्वारा प्रस्तुत कार्यक्रमों के प्रसारण के रूप में परलेखन का महत्व अपनी जगह पूरी तरह बना ही रहता है। इसी महत्व को स्वीकारते हुए कुछ इस तरह के साहित्य का लेखन आज की सबसे बड़ी जरूरत है जो शुगर कोटेड दवाई की तरह हमारे बाल पाठकों के लिए सुग्राह भी हो और लाभप्रद भी। इस तरह के विभिन्न स्तर पर किये जाने वाले प्रयासों से बच्चों में न सिर्फ पढ़ने के प्रति रूचि बढ़ेगी वरन उनके मस्तिष्क का बेहतर ढंग से विकास हो सकेगा। लेखन की भाषा का अपना विशेष महत्व है, भाषा इतनी स्पष्ट व सरल होनी चाहिये कि पढ़ने वाला आसानी से समझ सके। आज विज्ञान लेखन में भी अपनी भाषा की महत्ता बढ़ती जा रही है। हम सभी जानते हैं कि हिंदी भाषा हमारे देश की लोकप्रिय भाषा है अतः विज्ञान के विषयों का लेखन जब हिंदी भाषा में होगा तब विज्ञान केवल मात्र कक्षा से परीक्षा तक के बीच का विषय भर न रहकर जीवनभर के लिए बच्चों एक अभिन्न मित्र बन जाएगा। जिससे न सिर्फ उस पीढ़ी का बल्कि सम्पूर्ण राष्ट्र का भविष्य भी निश्चित रूप से सुधरेगा, इसमें तनिक भी संशय नहीं।

अतः यह तो स्पष्ट है कि यदि इस 21वीं सदी के प्रारम्भिक चरण में ही हमें अपने राष्ट्र को दुनिया के सामने एक महाशक्ति के रूप में उभारना है तो निश्चय ही अपने यहाँ की नई पीढ़ी के विकास पर हमें विशेषतौर पर ध्यान केंद्रित करते हुए एक ऐसे वातावरण की रचना करनी होगी जहाँ प्रारम्भ से ही स्व–भाषा में रचित विज्ञान इनके साथ एक दोस्त की भूमिका अदा करे ताकि दोस्ती के इसी आधार पर आगे चलते हुए यह पीढ़ी अपने देश को एक शक्तिशाली विकसित राष्ट्र के तौर पर स्थापित कर अपने को गौरवन्वित महसूस कर सके और यदि ऐसा हो सकता तब ही हमारे वर्तमान प्रयासों की सच्ची सार्थकता सिद्ध हो पायेगी।

1525/1, अवध कालोनी
सुभाव नगर, बरेली–243001

संवेदनाओं की अभिव्यक्ति का महत्वपूर्ण स्रोत है–हिंदी

–डॉ. मनोरमा शर्मा

किसी भी देश का साहित्य वहां की जनता की चित्तवृत्ति का प्रतिबिम्ब होता है। साहित्य के माध्यम से उस देश की संस्कृति, जन–जीवन, पर्व–त्योहार आदि विभिन्न पहलुओं का दिग्दर्शन होता है। साहित्य के लिए भाषा का माध्यम होना आवश्यक है। भाषा द्वारा ही सम्प्रेषण और आत्माभिव्यक्ति सम्भव है। भाषा के माध्यम से मानव–अभिव्यक्तियों एवं भावनाओं को दूसरे तक पहुंचाया जा सकता है। भारत बहुरंगी संस्कृति, बहुभाषायी तथा बहुआयामी देश है। अतः देश के विभिन्न क्षेत्रों में परस्पर सामन्जस्य स्थापित करना तथा सम्पर्क भाषा में एकरूपता होना आवश्यक है। अतः देश की विभिन्न भाषाओं के बीच हिंदी को सम्पर्क भाषा के रूप में मान्यता प्राप्त हुई है। इसे इसलिए मान्यता नहीं मिली कि यह सबसे अधिक विकसित भाषा है, वरन् इसलिए क्योंकि इसे अहिंदी भाषी लोगों ने अंगीकार किया है। इसी से सिद्ध होता है कि हिंदी राष्ट्रीय एकता का सशक्त माध्यम है।

समता, समन्वय और एकता भारतीय जीवन दर्शन के आधार स्तम्भ हैं। अनादि काल से हमारी यहीं आकांक्षा रही है कि सम्पूर्ण विश्व में रहने वाले लोग सुखी हों, निरोग हों। वैचारिक परिपुष्टता और सुख–दुख में एक रहने की अभिलाषा भारतीय संस्कृति का मूल मन्त्र है। हिमालय से लेकर कन्याकुमारी तक देश की मौलिक चेतना, चिन्तन, धार्मिक और आध्यात्मिक अनुराग, वंशानुगत सांस्कृतिक धारा, ऐतिहासिक और भौगोलिक सच्चाई सांस्कृतिक ज्ञान और परम्पराएं–ये सभी हमारी राष्ट्रीय एकता के परिचायक हैं तथा ये सभी मिल कर राष्ट्रीय एकता का सूत्र गढ़ते हैं। राष्ट्रीय एकता के लिए सबसे आवश्यक है वैचारिक परिपुष्टता और सुख–दुख में एक रहने की अभिलाषा। इस रूप में अनेक प्रकार की विविधता होते हुए भी भारत की एकता का प्रतिबिम्ब यहां की विभिन्न सांस्कृतिक गतिविधियों में दृष्टिगोचर होता है। भाषा सीमाओं और गतिरोधों को दूर कर एक सामान्य सम्पर्क स्थापित करती है और हिंदी इस कार्य में पूर्णतः सक्षम है। आज देश में हिंदी आधी सदी पहले की तुलना में कही अधिक प्रचलन में है। बोलचाल की सरल हिंदी आज घर–घर में पहुंची है। दक्षिण भारतीय और पूर्वोत्तर के निवासी समान रूप से हिंदी से परिचय बढ़ा रहे हैं, क्योंकि यही वह भाषा है जिससे उनका मनोरंजन होता है और इसी के माध्यम से अहिंदी भाषी और हिंदी भाषी क्षेत्रों से सम्पर्क बढ़ता है। ऐसा सिर्फ इसलिए होता है कि देशवासी स्वेच्छा से इसे स्वीकार करते हैं। भारत जैसे विविधतापूर्ण देश में अनेक अवरोधों के बावजूद यह तथ्य है कि इस बगिया में फैले भांति–भांति के फूलों से हमारी भाषायी समृद्धि बढ़ी है, क्योंकि हमने प्रारम्भ से ही इसे उदारतापूर्वक अपनाया है, तभी तो राष्ट्रीय चेतना के प्रादुर्भाव के साथ–साथ भारतीय सभ्यता और संस्कृति की वैचारिक एकता ने देश को सबल बनाया है।

अपनी राष्ट्रीय संस्कृति, सभ्यता, मान्यताओं एवं परम्पराओं को सुरक्षित रखते हुए, उसमें राष्ट्र की विभिन्न सभ्यताओं, संस्कृतियों और भाषाओं का समावेश करना ही राष्ट्रीय एकता की भावना को सुदृढ़ करता है।

मानव सभ्यता की विकास यात्रा के फलस्वरूप राष्ट्र की बहुमुखी सभ्यताएं पनपी और पल्लवित हुई हैं। वेद हमारे आदि ग्रंथ है और प्राचीन वाङ्मय हमारे पथ–प्रदर्शक रहे हैं। वेदों की ऋचाओं में राष्ट्रीय एकता व सद्भाव के स्वर अनेक प्रसंगों से स्पष्ट सुनाई देते हैं। इन मन्त्रों में इस बात पर विशेष

जोर दिया गया है कि बिना समता और समन्वय के कोई भी राष्ट्र सम्पन्नता की ओर अग्रसर नहीं हो सकता। ऋगवेद के 10,12,191 के 2,3 और 4 मन्त्रों में इन विचारों की पुष्टि होती है। ये मन्त्र जब सरल हिंदी में जन मानस के बीच पहुंचे तो समाज में यह आत्मसात हो गए।

(2) सं. गच्छछ्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवां भागं यथा पूर्वे संजानानाम् उपासते।।
(ऋ.10.191.2)

अर्थात्– प्रेम से मिल कर चलो, बोलो, सभी ज्ञानी बनो पूर्वजों की भांति तुम, कर्त्तव्य के मानी बनो

तुम सब साथ मिल कर चलो, एक साथ मिल कर बोलो, जैसे हमारे पूर्वज सत्कर्म करते हुए एक होकर जीते थे, उसी तरह तुम भी जीवन जियो।

(2) समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः चित्तमेषाम्।
समानं मन्त्रममि मन्त्रयेः वः समानेन वो हविषा जहोमि।। (ऋ.10.191.3)

अर्थात्–हों विचार समान सबके, चित्त मन सब एक हों।
ज्ञान देता हूँ बराबर, भोग्य पर सब नेक हों।।

समस्त प्राणियों के विचार, मन और चिन्तन एक जैसे हों, सबको एक जैसा ज्ञान मिले और उसका सभी उपयोग अच्छी दिशा में करें। ऋगवेद के (का.10. 191.4) के अनुसार–

(3) समानि व आकूति समाना हृदयानि च।
समानमस्तु वो मनो यथा वः समहासति।।

अर्थात्–हों सभी के दिल तथा संकल्प अवरोधी सदा।
मन भरे हो प्रेम से जिससे बढ़े सुख सम्पदा।।

राष्ट्र में जिसने भी जन्म लिया है, वह समान है। राष्ट्र की दृष्टि में न कोई छोटा है, न बड़ा। समानता की भावना के साथ, तथा सभी के साथ समान व्यवहार करते हुए राष्ट्र की उन्नति के प्रयास किए जाने चाहिए।

राष्ट्रीय एकता के संदर्भ में अथर्ववेद के बारहवें कांड का प्रथम सूक्त राष्ट्र सूक्त के नाम से जाना जाता है। इसमें राष्ट्र प्रेम से संबंधित तिरेसठ (63) मन्त्र हैं। इन मन्त्रों में मातृभूमि के महत्व, एक आदर्श राष्ट्र के निर्माण तथा नागरिकों के कर्त्तव्यों पर प्रकाश डाला गया है। राष्ट्र निर्माण के कार्य से सामूहिक उत्तरदायित्व के महत्व को अनेक उदाहरणों से समझाया गया है। इसी प्रकार ऋगवेद के 10,101,2 तथा कां. 1, 100, 18 मंत्रों में आम जनता के सहयोग के महत्व को प्रतिपादित किया गया है। राष्ट्रीय एकता स्थापित करने के अनेक उपायों पर तो प्रकाश डाला ही गया है, साथ ही एकता को खण्डित करने वाले तत्वों से सावधान रहने की बात भी कही गई है। भारत की राष्ट्रीय चेतना के विकास में वैदिक संस्कृति का अविस्मरणीय योगदान रहा है। इन उद्‌बोधक और प्रेरक सूक्तों ने जनता को राष्ट्रीय–एकता–आन्दोलनों से जूझने और बलिदान के लिए तैयार किया है। ये सूक्त केवल उस समय के परिवेश से परिचित नहीं करवाते, अपितु देश की प्रगति और समृद्धि के लिए नई संजीवनी शक्ति देकर प्रेरणा प्रदान करते रहे हैं। वैदिक काल की भाषा सरल और सुबोधन होने के कारण इन सूक्तियों को सरल हिंदी के माध्यम से जन–जन तक राष्ट्रीय एकता की भावना पहुंचाई जा सकती है।

भाषा सम्प्रेषण का एक सशक्त माध्यम है। यह एक ऐसी कला है जो वक्ता की हृदयगत भावनाओं को मधुर बना कर दूसरों के सामने प्रकट करती है। 'रस्किन' का कथन है कि अन्तरात्मा का उत्थान तथा उसे कलात्मक और आनन्दमय अभिव्यक्ति प्रदान करना भाषा का उद्देश्य होना चाहिए। सरल और सुबोध भाषा में अपने विचार प्रकट करना अपेक्षित होता है ताकि श्रोता उसे सरलता से समझ सके। इसके लिए यह आवश्यक है कि भाषा के प्रति लचीला दृष्टिकोण हो। अन्य भाषाओं की शब्दावली तथा रोजमर्रा में प्रयुक्त होने वाले शब्दों का समावेश उदार दृष्टिकोण से किया जाना चाहिए। आम बोल–चाल की भाषा को सरल हिंदी प्रयोग से हिंदी का अधिक प्रोत्साहन मिलेगा। इस दिशा में फिल्म जगत का महत्वपूर्ण योगदान है। मनोरंजन का एक सुलभ साधन होने से भारतीय फिल्में लोकप्रिय हैं। इनमें प्रयुक्त कथोपकथन, कहानी तथा संगीत तीनों ही आम बोलचाल की हिंदी में होते हैं। अहिंदी भाषी

क्षेत्रों में भी ये फिल्में अत्यन्त लोकप्रिय हैं। सरल हिंदी का प्रयोग होने के कारण भारत के हर घर में आज सरल हिंदी बोली और समझी जा रही है।

आज वैज्ञानिक और तकनीकी विकास के फलस्वरूप संचार माध्यमों से न केवल विश्व के एक भाग से दूसरे भाग तक सम्प्रेषण सम्भव है बल्कि रेडियो, टेलीविजन, कम्प्यूटर, इंटरनेट आदि की उपलब्धता के कारण सरल हिंदी प्रयोग तथा भाषायी आदान–प्रदान के क्षेत्र में तथा प्रचार–प्रसार में काफी सहायता मिली है। दूरदराज के आंचलिक तथा अन्य दुर्गम क्षेत्रों की संस्कृति की झलक सहज ही प्राप्त हो जाती है। इन प्रचार व संचार माध्यमों द्वारा सांस्कृतिक आदान–प्रदान की दिशा में महत्वपूर्ण उपलब्धि अर्जित की है। मानव अभिव्यक्तियों और भावनाओं को दूसरे तक पहुँचाने के लिए संचार माध्यमों की अहम भूमिका है जिसे सरल हिंदी के प्रयोग से प्रत्येक व्यक्ति के लिए सुगम और सुबोध बनाया जा सकता है। इस दिशा में आकाशवाणी, दूरदर्शन और विविध क्षेत्रीय सांस्कृतिक केंद्र तथा अन्य संचार प्रसार माध्यम महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहे हैं। विभिन्न सामाजिक एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम अलग–अलग स्थानों पर आयोजित किए जाते हैं जो जनता के आकर्षण का केंद्र बन जाते हैं। भारत के विभिन्न प्रदेशों में ऐसे आयोजन होते हैं। तमिलनाडु में त्यागराज सम्मेलन, कर्नाटक का दशहरा, मैसूर उत्सव, केरल का पोंगल, असम का बीहू, बंगाल का दुर्गापूजा महोत्सव, पंजाब का वैशाखी पर्व, उड़ीसा का रथ यात्रा, उत्तर प्रदेश का होली उत्सव, महाराष्ट्र का गणेश चतुर्थी, गुजरात का नवरात्र आदि आयोजन जहां अपनी सांस्कृतिक छटा बिखेरते हैं वहीं राष्ट्रीय एकता की भावना भी प्रसारित होती है।

राष्ट्रीय एकता और सरल हिंदी प्रयोग का एक सशक्त माध्यम संगीत है। सरल हिंदी में राष्ट्र प्रेम, देशभक्ति के गीतों द्वारा जनता में राष्ट्रीय एकता की भावना, सहयोग और सामुदायिक विकास का संदेश अत्यन्त सहजता से प्रचारित और प्रसारित होता है। सारे जहां से अच्छा हिन्दोस्तां हमारा, कदम कदम बढ़ाए जा, मेरा रंग दे बसंती चोला, भारत हमको जान से प्यारा है आदि गीत जहां देशभक्ति और राष्ट्रीय एकता की भावना को सुदृढ़ करते हैं, वहीं सरल हिंदी में लिखे जाने के कारण जन–जन की जुबान पर चढ़ जाते हैं। एक अनुसंधान में पाया गया है कि जो बच्चे भारतीय शास्त्रीय संगीत सीखते हैं, उनका भाषा ज्ञान अन्य बच्चों की अपेक्षा अधिक होता है। तर्क यह है कि सभी शास्त्रीय गीतों की रचना सरल हिंदी में होती है तथा संगीत शास्त्र संबंधी जानकारी भी हिंदी में ही सिखाई जाती है। स्वर, ताल और लय का ज्ञान भी हिंदी में ही करवाया जाता है। इस अनुसंधान की संस्तुतियों के आधार पर नर्सरी से ही बच्चों को संगीत द्वारा विभिन्न विषयों की पढ़ाई के निर्देश दिए गए। अन्त में पाया गया कि बच्चे गानों के माध्यम से कविताएं जल्दी कंठस्थ करते हैं तथा अन्य विषयों में भी अधिक रूचि लेते हैं। इन प्रयोगों के द्वारा हिंदी को एक सशक्त माध्यम माना गया जिसमें बच्चों के व्यक्तित्व विकास के लिए अद्‌भुत क्षमता को परिलक्षित किया गया। हिंदी भाषा की इस विलक्षण क्षमता को विश्व–भर में पहचान मिली है। विश्व के अनेक विश्वविद्यालयों में हिंदी के पाठ्यक्रम सम्मिलित किए गए हैं। कम्बोडिया, लाओस, इंडोनेशिया, थाईलैंड और वियतनाम आदि देश तो आरम्भिक काल से आज तक भारतीय दर्शन, आध्यात्म और संस्कृति को आत्मसात करते रहे हैं तथा अन्य देश रूस, यूरोप और अमेरिका जैसे विकसित देश भी हिंदी को अपना रहे हैं।

प्राचीन भारत में जहां अबुलफजल, मैगस्थनीज, अलबरूनी और चीनी यात्री हयूनसांग आदि विद्वानों ने भारत की संस्कृति का एक समृद्ध दृष्टिकोण विश्व के सम्मुख रखा, वहीं आधुनिक काल में मैक्समूलर, ऐलेन डेनेल्यू, कैप्टन विलियर्ड, फॉक्स स्ट्रेंगवेज आदि लेखकों ने भारतीय परम्पराओं, मान्यताओं और सांस्कृतिक गरिमा को उद्‌घाटित किया है। सूर, कबीर, तुलसी, मीरा, नानक, आदि भक्त कवियों की रचनाएं विश्व भर में प्रसिद्ध हुई है। निराला, पंत, महादेवी वर्मा, हरिवंशराय बच्चन, अज्ञेय, मुक्तिबोध, जैसे साहित्य के चिन्तक कवि अपनी रचनाओं के कारण हिंदी साहित्य के स्तम्भ सिद्ध हुए। आध्यात्मिकता का पुट लिए भारतीय संगीत की काव्यधारा हिंदी के कारण ही विश्व प्रसिद्ध हुई। सूफी गायिका आबिदा प्रवीन, गजल गायक मेंहदी

हसन आदि कलाकारों ने कबीर और गुरूनानक की वाणी को स्वर दिया। विदेशी कलाकार हिंदी में गीत गाकर दिल है हिन्दुस्तानी को चरितार्थ कर रहे हैं। विदेशों में फिल्मी कलाकार तथा फिल्म संगीत अत्यन्त लोकप्रिय है। रूस का प्रत्येक कलाकार मेरा जूता है जापानी, जैसे गीत गुनगुना सकता है। संगीत के साथ हिंदी भाषा का वर्चस्व तो स्वतः ही सिद्ध हो जाता है।

हिंदी की गरिमा को अनेक कवियों, लेखकों और साहित्यकारों ने अपने विशेष अंदाज में वर्णित किया है। हिंदी भाषा नवरसों से परिपूर्ण है। चाहे मराठी, बंगाली, पंजाबी या गुजराती हो, हमारी सम्पर्क भाषा हिंदी है। हिंदी भाषा ही ऐसा माध्यम है जो जीवन में सरलता ला सकता है। अब तो इंटरनेट का युग है अतः व्हाट्सएप, स्काइप, फेसबुक के साथ अब तो प्रणाम, सुप्रभात, चरणस्पर्श आदि का विस्तार हिंदी में सम्भव है और इसमें कोई आपत्ति नहीं कि यदि हम कहें ब्रिंग–लाना, गो–जाना और कोई अन्तर नहीं पतंग और काइट में, उड़ान और फ्लाइट में, बिल्ली और काइट में, बल्ले और बैट में, बहन बन जाए सिस्टर, मन्त्री हो जाए मिनिस्टर, अध्यापक हो टीचर, भविष्य हो जाए फ्यूचर, क्योंकि यही उदारवादिता है हिंदी को सरल हिंदी बनाने के लिए और राष्ट्रीय एकता सुदृढ़ करने के लिए।

मातृभाषा मां के कण्ठ का निनाद है। देश की संस्कृति की पहचान मातृभाषा से ही है। भाषा मात्र शब्द क्रीड़ा नहीं है अपितु यह तो अभिव्यक्ति का ऐसा सम्प्रेषण है जिसमें कथनी और करनी का कोई भेद नहीं होता। ऐसी अभिव्यक्ति जिसका सामाजिक सरोकार हो और जिसका रिश्ता आदमी के सुख दुख से हो। भाषा जीवन के सत्य की दिग्दर्शक होती है। जीवन में आ रहे बदलावों के संकेत भी भाषा से ही मिलते हैं। भाषा के माध्यम से सामाजिक, राजनैतिक और साहित्यिक विचार बेधड़क बोलते हैं। इसी के द्वारा मन की तल्खी, व्यंग्य, विडम्बना, विसंगति, विरोध, हताशा और पश्चाताप के स्वर मुखर होते हैं। क्या ऐसी अभिव्यक्ति के लिए दुरूह, कठिन, क्लिष्ट, संस्कृतनिष्ठ हिंदी की आवश्यकता है? सरल हिंदी तो स्वतः स्फूर्त है जो धारा प्रवाह विचारों का सम्प्रेषण करने में समर्थ है।

राष्ट्रीय एकता और चेतना की बात करें तो भाषा और धर्मगत अवरोधों से परे समग्र भारतीयों ने राष्ट्रीय स्वतन्त्रता आन्दोलन और स्वाधीनता का नारा हिंदी में ही गुंजायमान किया। झांसी की रानी, तात्यां टोपे, मंगल पांडे, भगतसिंह, राजगुरू, सुखदेव, महात्मा गांधी, रानाडे, मालवीय, सुभाषचंद्रबोस, जवाहरलाल नेहरू, लाल बहादुर शास्त्री सभी की स्वन्त्रता आन्दोलन की भाषा हिंदी ही रही है। कश्मीर से कन्याकुमारी तक जनमानस की भाषा हिंदी ही विकसित हुई। इसी प्रकार मॉरिशस, बाली, इन्डोनेशिया आदि देशों में सम्पर्क भाषा बन कर हिंदी ने व्यापक स्वरूप स्थापित किया। कविता, कहानी, उपन्यास, आत्मकथा, निबन्ध, नाटक, गीत–संगीत या आलेख–विचारों की परिपक्वता, प्रासंगिकता, मानवीय संवेदनाएं, नैसर्गिक सौन्दर्य, देश–भक्ति–भावना, कर्त्तव्य बोध सभी कुछ तो हिंदी में प्रतिबिम्बित होता है, जिसे हम राजभाषा, सम्पर्क भाषा अथवा मातृभाषा के रूप में प्रस्थापित करते हैं।

आज युग बदल रहा है परन्तु भाषा तो जीवित रहती है। समकालीन चुनौतियों का सामना करने में सक्षम, ऊर्जावान, सरल, सुबोध, कम्प्यूटर, इंटरनेट के लिए उपयुक्त है हिंदी! हिंदी सार्थक है समय के साथ भी और समय के पार भी। समाज को नई दिशा देती हुई इसे युगातीत होने की आकांक्षा नहीं। इसी के माध्यम से भारतीय संस्कृति, भाषा, खान–पान और गीत–संगीत विदेशों में पहुंचा है। हमारी राजभाषा, मातृभाषा, देवनागरी लिपि, संविधान, राष्ट्रध्वज हमारे स्वाभिमान के प्रतीक हैं। इन कंठहारों से ही प्रतिध्वनित होती है गीता की वाणी, वेदों की ऋचाएं, रामायण के दोहे, इसी में गूंजे मीरा, सूर, कबीर और तुलसी के पद, इसी में उद्घोषित हुआ शहीदों का त्याग, स्वतन्त्रता की हुंकार, विश्व–कल्याण और राष्ट्रीय एकता का गान। कला, संस्कृति, राजनीति, शिक्षा, आन्तरिक चिन्तन, आध्यात्म और योग का सशक्त माध्यम भाषायी सम्प्रेषण ही है।

बी एच II, 33
रायेल गार्डन एस्टेट
सेक्टर–61 नोएडा (यू.पी.)

मानव संसाधन प्रबंधन एवं सांगठनिक आत्मीयता में हिंदी की भूमिका

डॉ. साकेत कुमार

पृष्ठभूमि

यह सर्वविदित तथ्य है कि मानव संसाधन किसी भी संगठन की अत्यधिक महत्वपूर्ण संपत्ति होती है। संस्थान की मजबूती एवं प्रगति का सबसे महत्वपूर्ण स्तंभ मानव संसाधन होता है। अतः संगठन की क्षमता एवं मजबूती उसके प्रभावी उपयोग पर निर्भर करती है। अतः यह आवश्यक है कि संगठन की सशक्तता हेतु मानव संसाधन के विकास पर पर्याप्त ध्यान दिया जाए। मानव संसाधन विकास के सभी पहलुओं का सर्वप्रमुख केंद्र–बिंदु है – बेहतर कार्यबल विकसित करना ताकि संगठन एवं कर्मचारी अपने कार्यलक्ष्यों को बेहतर तरीके से निष्पादित कर सकें। क्योंकि यही वह तत्व है जो अपने विवेक, मेहनत, कल्पनाशीलता, नेतृत्व–कौशल तथा सही प्रबंधन द्वारा संगठन विकास के अनिवार्य तत्त्वों यथा, पूंजी, मशीन, कच्चा माल तीनों का सही समन्वय तथा उपयोग कर सांगठनिक लक्ष्यों को प्राप्त करने में महत्वपूर्ण योगदान देता है। इन तत्त्वों की असफलता पर ये तीनों तत्व निरर्थक सिद्ध हो जाते है। उपर्युक्त तथ्य से यह स्पष्ट है कि संगठन के समस्त संसाधनों में सर्वश्रेष्ठ संसाधन मानव संसाधन है और इसी के द्वारा सभी संसाधनों का उपयोग करते हुए संगठन को प्रगति के पथ पर ले जाया जाता है।

अब प्रश्न उठता है कि संगठन के विकास में मानव संसाधन की क्षमताओं का बेहतर उपयोग कैसे किया जाए ताकि संस्था प्रगति पथ पर गतिमान हो। क्योंकि कई बार एक संगठन पर्याप्त मानव संसाधन के रहते हुए भी असफल हो जाता है जबकि दूसरा उसी मानव संसाधन के बल पर उन्नति की ऊँचाईयां चढ़ता है। तो इसमें पहला उत्तर आता है कोई भी संगठन अपने मानव संसाधन के बेहतर प्रबंधन, प्रशिक्षण एवं सांगठनिक आत्मीयता के बल ही उन्नति की सीढ़ियाँ चढ़ सकता है और इस प्रबंधन एवं प्रशिक्षण में संपर्क भाषा हिंदी का जबरदस्त योगदान है। क्योंकि हिंदी हम सभी को आपस में जोड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। प्रस्तुत आलेख में हम मानव संसाधन प्रबंधन, आत्मीयता एवं इसमें हिंदी की भूमिका को समझने का प्रयास करेंगे।

मानव संसाधन प्रबंधन, आत्मीयता एवं हिंदी का संबंध

परिवर्तन प्रकृति का शाश्वत नियम है। जिस प्रकार सदैव एक समान ऋतु, एक समान अवसर, संभावनाएं एवं परिस्थितियाँ नहीं रहती, ठीक उसी प्रकार से, प्रत्येक व्यक्ति, संस्था, समाज और राष्ट्र के कार्यकाल या जीवनकाल में उतार–चढ़ाव, लाभ–हानि, हार–जीत आदि चलते रहते है। अनुकूल परिस्थिति में तो सफलता हासिल करना किसी भी व्यक्ति या संगठन के लिए सहज होता है परंतु विपरीत परिस्थिति में यह बेहद कठिन होता है। यही पर आत्मीयता का महत्व बढ़ जाता है। आत्मीयता एक व्यापक शब्द है। अगर हम स्वयं से प्रेम करेंगे तो सर्व से प्रेम करेंगे। संगठन की प्रगति में भी आत्मीयता एवं संवाद का महत्व बहुत अधिक है।

प्रसिद्ध प्रेरक, अरिंदम चौधरी ने अपनी पुस्तक 'काउंट योर चिकन्स बिफोर द हेच'' में लिखा है कि ''प्रत्येक व्यक्ति, चाहे वह एक बड़ी संस्था के साथ कार्य कर रहा है या एक छोटी संस्था के साथ, तीन प्रकार की लालसा रखता है–(1) प्रतिष्ठा (2) सरंचना और (3) प्रशंसा (थपथपाए जाने) की लालसा। लालसा के ये स्तर, उसकी मनोवैज्ञानिक–सामाजिक आवश्यकताओं

की पूर्ति करते हैं और उसे प्रयास बल्कि अतिरिक्त प्रयास करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं। प्रशंसा की लालसा, पहचान की आवश्यकता का परिणाम है।'' इन सभी में सांगठनिक आत्मीयता एवं भाषा का महत्वपूर्ण योगदान है क्योंकि प्रबंधन के लक्ष्य एवं उद्देश्य को समुचित प्रबंधन, आत्मीयता एवं बेहतर संवाद द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है।

प्रायः सभी संस्थाओं में कमोबेश मानवीय और भौतिक संसाधन होते हैं। भौतिक संसाधनों को संस्था के कर्मचारी अपने कौशल व ज्ञान के अनुसार प्रयुक्त करते हुए संस्था के लक्ष्यों और उद्देश्यों की प्रतिपूर्ति करते हैं। भौतिक संसाधनों यथा, मशीनों या उपकरणों की समय–समय पर सुचारु रूप से देखभाल व रख–रखाव करते रहने से उसकी उपयोगिता को बनाए रखा जा सकता है, उसी प्रकार मानव संसाधन का भी लगातार रख–रखाव आवश्यक है। निश्चित वेतन, पदोन्नति, अवकाश, भत्ते, रोजगार की गारंटी, कार्य के निर्धारित घंटे और अनुकूल स्थानांतरण एवं कर्मचारी के ज्ञान व कौशल में विकास हेतु समय–समय पर उचित प्रशिक्षण आदि मानव संसाधन को सतत प्रेरित करने और उसके विकास के परंपरागत उपाय हैं। तथापि यह देखा गया है कि विभिन्न संगठनों में उक्त उपायों की समरूपता होते हुए भी सभी की उपलब्धियां एक समान नहीं होती।

उपर्युक्त पंक्तियों से स्पष्ट है कि संगठन के विकास में मानव संसाधन प्रबंधन की भूमिका महत्वपूर्ण है। परंतु साथ ही यह भी उल्लेख किया गया है कि विभिन्न संगठनों में उपायों की समरूपता होते हुए भी उनकी उपलब्धियाँ एक समान नहीं होती। ऐसे में प्रायः संगठन में मानव संसाधन प्रबंधन में कमी, आपसी समन्वय या संवाद की कमी की चर्चा होती है। इसी संदर्भ में मानव संसाधन प्रबंधन में आपसी संवाद की उपयोगिता की चर्चा होती है। कोई भी संगठन परस्पर सार्थक संवाद के बल पर ही अपने कार्यबल को प्रगति पथ पर अग्रसर कर सकती है। ऐसे में भला सांगठनिक संवाद में हिंदी की महत्वपूर्ण भूमिका से कौन इंकार कर सकता है!

आज के बदलते दौर में प्रबंधन तंत्र को संगठन की प्रगति व समन्वित विकास हेतु मानव संसाधन की महती भूमिका को नए सिरे से समझने की जरुरत है। इसके लिए आवश्यकता है मानव संसाधन यानि संगठन के प्रत्येक कर्मचारी के गुणों को तराशने की। गुणों को तराशने से मतलब है उसे समुचित प्रशिक्षण एवं प्रोत्साहन की सुविधाएँ मुहैया कराना। हम सभी आज भी प्रशिक्षण में विकसित देशों से आयात किए हुए मानव संसाधन विकास प्रयोगों को बगैर भारतीय आयामों पर विचार किए हुए अपनाते है। प्रशिक्षण में भी हिंदी को अपनाने से प्रशिक्षण की सार्थकता ज्यादा बेहतर तरीके से स्थापित होगी।

समाज की सबसे छोटी इकाई परिवार है। मोहल्ला, गाँव, कस्बा, शहर एवं देश इस कड़ी के क्रमशः वृहत्तर रूप हैं। परिवार व विद्यालय से ही बच्चों को अनुशासन व संयमित आचरण करने की सीख मिलनी प्रारंभ हो जाती है। परिवार में माता–पिता, बड़े–बूढ़ों तथा विद्यालयों में गुरुजी का अनुशासन जहां बच्चों में आदर्श आचरण विकसित करता है, वहीं बच्चे भी बड़ों के प्रबंधन–कौशल की क्षमता को नजदीक से देखते और महसूस करते हैं। और यहीं से उनमें अच्छे नागरिक बनने की नींव डलती है। पर इस सीख, आचरण के लिए भी समुचित संवाद की महत्ता स्पष्ट है। समुचित संवाद से ही व्यक्तित्व एवं संस्कार का विकास होता है और इस संवाद में मातृभाषा की महत्ता जगजाहिर है।

जहां यह ध्रुव सत्य है कि नियमों पर आधारित संयमित आचरण किसी भी कार्यपरक इकाई के लिए परमावश्यक है, वहीं इससे भी इंकार नहीं किया जा सकता है कि दूसरे पक्ष का सहज व्यवहार व स्नेह ही इकाई को पर्याप्त शक्ति व क्षमता का पूर्ण उपयोग कर कार्य करने का उत्साह देता है। यदि संगठन के परिप्रेक्ष्य में बात करें तो संगठन का प्रत्येक कर्मचारी उसका आईना है क्योंकि कर्मचारी के माध्यम से ही वह संगठन से जुड़ता है। बाहरी व्यक्ति के लिए संगठन का कर्मचारी ही संगठन है। उदाहरण के मामले में देखें तो बहुधा ऐसा देखने में आता है कि किसी सेवापरक इकाई में ग्राहक

व कर्मचारी के आपसी व्यवहार में गर्मजोशी नहीं होती, केवल व्यावहारिक शिष्टता होती है। सेवा का आदान–प्रदान तो होता है, परन्तु आत्मीयता नहीं रहती। ऐसे में यह जरूरी है कर्मचारी ग्राहक से उसी भाषा में अपने उत्पाद प्रस्तुत करें जिसे वह बेहतर रूप से समझता हो। हमारे देश में अधिकांश संगठनों ने प्रारंभ से ही इस दिशा में गलत प्रयास किए एवं उत्पाद के गुणों को सदैव अंग्रेजी में प्रस्तुत किया, हाँ प्रचार में एक हद तक जरूर प्रयास किये गये। यह भी एक कारण है उत्पाद एवं ग्राहक के बीच आत्मीयता नहीं बढ़ पाने का। हालांकि कई और भी कारण हो सकते हैं। परंतु ग्राहक प्रसार में हिंदी का महत्व स्पष्ट है। कर्मचारियों के मामले में यहीं लागू होता है।

ऐसे में आत्मीयता का महत्व संगठन की प्रगति में स्वतः बढ़ जाता है। क्योंकि आत्मीयता किसी भी सांगठनिक कार्य–व्यवहार का आत्म–तत्व है और यह कर्मचारियों के कार्य व्यवहार में तब आती है जब उसका मन–मस्तिष्क और हृदय संस्था से जुड़े हों। यह जुड़ाव ही संगठन की प्रगति में कर्मचारियों को तन–बल से जुड़ने में सहयोग करता है। कर्मचारी के व्यवहार में यदि आह्लाद (Delight) दिखेगा, तो ग्राहक भी आह्लादित महसूस करेगा।

संगठन में समुचित वातावरण उपलब्ध कराना प्रबंधन का कर्त्तव्य है। यदि कर्मचारी प्रफुल्लता से कार्य करें तो उत्पादकता अपने–आप बढ़ जाती है। यहाँ यह कहना श्रेयस्कर होगा कि वर्तमान युग में ग्राहक–आह्लाद (कस्टमर डिलाइट) के साथ कर्मचारी–आह्लाद (स्टाफ डिलाइट) का होना भी आवश्यक है। किसी भी संस्था में कर्मचारी–आह्लाद इस बात पर निर्भर करता है कि प्रबंधन–वर्ग उनकी सुख–सुविधाओं और भावनाओं के प्रति कितना संवेदनशील है और यहाँ पर मानव संसाधन प्रबंधन–तंत्र की भूमिका सर्वाधिक महत्वपूर्ण हो जाता है।

बहुत–सी जगहों पर हम देखते हैं कि कर्मचारी मशीन की भांति कार्य करते हैं–यंत्रवत्। लगता ही नहीं कि उनमें मानवीय भावनाएं भी हैं। यहाँ तक कि परस्पर मिलने पर मुस्कराहट का आदान–प्रदान भी नहीं होता। ऐसी जगहों पर वस्तुओं व सेवाओं का उत्पादन तो होता है, परंतु आत्मीयता नहीं होती। संगठन के मामले में भी कर्मचारी एवं प्रबंधन के बीच आत्मीयता का होना आवश्यक है। वैसे भी आत्मीयता किसी भी व्यवहार/कार्य का आत्म–तत्त्व है। कर्मचारियों में सांगठनिक आत्मीयता तभी आ पाती है जब मन–मस्तिष्क और हृदय संगठन से जुड़े होते हैं। जुड़ाव या आत्मीयता का सबसे बड़ा तत्व है प्रबंधन द्वारा लिखित, मौखिक में ऐसी भाषा का इस्तेमाल जिसे सभी समझ सके। ऐसे में बेहतर संवाद के लिए हिंदी जरूरी है। हालांकि बड़े–बड़े संगठनों में अनौपचारिक संवाद की प्रमुख भाषा के रूप में अब हिंदी स्थापित हो चुकी है। पर अभी भी औपचारिक संवादों के लिए उसे मीलों दूरी तय करना है। जबकि यहाँ भी हिंदी का प्रयोग ज्यादा जरूरी है।

खोजपूर्ण और नवोन्मेषी विचार भी संगठन की प्रगति के लिए अत्यावश्यक है और यहाँ मानव संसाधन प्रबंधन की भूमिका बढ़ जाती है। अकबर के दरबार में नवरत्न थे और बीरबल को उसकी बुद्दिमता के कारण दरबार में विशेष सम्मान हासिल था। चाणक्य एक कुशाग्र प्रशासक थे एवं अपनी बुद्धि तथा चातुर्य के बल पर भारत में नंद वंश की सत्ता को उखाड़ कर मौर्य वंश की स्थापना में उन्होंने अहम् भूमिका अदा की। डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने अपने विचारों से भारत को एक परमाणु–शक्ति सम्पन्न राष्ट्र बनाया और विश्व में गौरव दिलवाया। इन सब महान व्यक्तियों को उचित सम्मान और स्थान मिला जिसके कारण वे अपने विचारों से राष्ट्र व समाज को नई दिशा दे सके। एक कहावत भी है कि 'संसार पर राज, विचार करते हैं, राजा या संस्थाएँ नहीं'। डिजिटल क्रांति को बढ़ावा देने हेतु भी प्रबंधन वर्ग को अपने मानव संसाधन को हिंदी में प्रशिक्षित करना चाहिए तथा डिजिटल उत्पादों को हिंदी में प्रस्तुत करना चाहिए। अन्यथा डिजिटल क्रांति की सार्थकता देश की बड़ी आबादी के लिए शून्य ही रहेगी।

खोजपूर्ण और नवोन्मेषी विचार, संस्था के लिए अत्यंत मूल्यवान होते हैं लेकिन यह भी सच है कि किसी संस्था में ऐसे विचार रखने वाले कर्मचारियों की संख्या बहुत अधिक नहीं होती। यदि उनको व उनके कार्य को पहचान कर संस्था के विकास व हित में प्रयुक्त किया जाए तो निश्चित रूप से वे संस्था के लिए बहुत बड़ी धरोहर सिद्ध हो सकते हैं। परंतु यदि उनके नवोन्मेषी विचारों और असाधारण योगदान को, यथोचित सम्मान नहीं मिलता तो ऐसे बुद्धिजीवी और विचारवान कर्मचारियों का कुछ नया करने का उत्साह ठंडा पड़ने लगता है। प्रोत्साहन के अभाव में उनके अंदर अप्रकट प्रतिभा धूमिल होने लगती है और संस्था उनके लाभ से वंचित रह जाती है। ऐसे कर्मचारी संस्था में एक छटपटाहट अनुभव करने लगते हैं और बहुधा उचित अवसर मिलते ही संस्था को छोड़ भी जाते हैं। ऐसे में कर्मचारी अभिप्रेरणा, समुचित संवाद एवं संवाद के लिए उपर्युक्त भाषा की भूमिका का महत्व बढ़ जाता है।

आज के दौर में प्रत्येक संगठन मानव संसाधन को विकासशील बनाने हेतु पर्याप्त प्रयास करता हैं। बदलते व्यावसायिक परिवेश में यथार्थ दृष्टिकोण तथा विभिन्न कार्यों को पूरा करने हेतु विभिन्न कौशलों को प्राप्त करने हेतु प्रशिक्षण भी दिया जा रहा है। साथ ही कर्मचारियों को प्रेरित करने हेतु उन्हें पुरस्कार एवं प्रशंसा पत्र भी प्रदान किए जाते है। इन सभी के बावजूद यदि संगठन में संवाद की कमी महसूस की जा रही है तो इसका सबसे बड़ा कारण है संवाद एवं पत्राचार में अंग्रेजी का ज्यादा प्रयोग। तथ्य यह भी है कि कई बार संस्थान द्वारा जारी किए गए या मूल रूप से अनूदित पत्र भी कर्मचारियों को समझ नहीं आते। ऐसे में पर्याप्त संवाद हेतु सरल एवं सहज हिंदी की भूमिका जगजाहिर है।

प्रायः ऐसा देखा जाता है कि संगठन के कर्मचारियों के पास पर्याप्त तकनीकी ज्ञान, कौशल, अनुभव और कार्य करने की भी उत्कट इच्छा रहती है, फिर भी वे समुचित प्रोत्साहन के अभाव में संस्था की प्रगति में अपेक्षित योगदान नही कर पाते। प्रसिद्ध अमेरिकी मनोवैज्ञानिक, 'अब्राहम हरोल्ड मासलो' ने अपने 'मानवीय जरूरतों के पदानुक्रम' के सिद्धान्त में धारणा प्रतिपादित की, कि एक व्यक्ति के विकास के 'पाँच आवश्यकताओं के स्तर' होते है। ये स्तर हैं (1) जैविक और शारीरिक आवश्यकताओं की जरूरत (2) सुरक्षा की जरूरत (3) संबंधितता और प्रेम की जरूरत (4) सम्मान की जरूरत और (5) आत्म–वास्तविकता की जरूरत। इस सिद्धान्त के अनुसार पहले स्तर की आवश्यकता की पूर्ति होने के बाद मानव क्रमागत दूसरे स्तर की ओर उन्मुख होता है। एक अन्य सकारात्मक दृष्टिकोण के अनुसार, कर्मचारी संस्था में अपना अधिकतम योगदान देना चाहते हैं लेकिन उनके प्रयासों में जो बाधा होती है वह है, कौशल और ज्ञान का अभाव, अपर्याप्त प्रशिक्षण और तंत्र और प्रक्रिया की विफलता। ऐसे में, प्रत्येक कर्मचारी को संगठन के प्रति निष्ठावान, समर्पित और अभिप्रेरित करने में संपर्क भाषा, राजभाषा हिंदी की भूमिका बढ़ जाती है।

अगर सेवापरक इकाई के स्तर पर ही देखें तो ग्राहकों को प्रेरित करने में संवाद की बहुत बड़ी भूमिका है। कर्मचारियों या ग्राहकों को लिखे जाने वाले पत्रों को यदि हम हिंदी में लिखें तो उसका मनोवैज्ञानिक प्रभाव अधिक होगा। जो कि संस्था की प्रगति हेतु बेहतर सिद्ध होगा।

कुशल नेतृत्व द्वारा न केवल कर्मचारी का विकास होता है बल्कि वह नए कार्यों के प्रति प्रेरित होने का जोखिम भी उठाता है। इस संबंध में महात्मा गांधी का उदाहरण भी दिया जा सकता है जिनके कुशल नेतृत्व से अधिक संख्या में लोग उनके साथ आजादी की लड़ाई में जुड़े और अपने प्राणों की आहूति देकर देश को आजादी दिलाई। इस आजादी की लड़ाई में परस्पर संवाद की बड़ी भूमिका रही। क्योंकि संवाद के माध्यम से ही लोग एक–दूसरे से जुड़े। आजादी की लड़ाई में संपर्क भाषा के रुप में हिंदी के इसी महत्व के कारण लोगों ने हिंदी का महत्व समझा। स्वयं राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने भी उतर से दक्षिण तथा पूर्व से पश्चिम तक हिंदी के सहारे ही देश के लोगों के साथ संवाद कायम

किया। उस समय के अधिकांश राजनेताओं ने हिंदी की भूमिका को समझा। जिसके बाद हिंदी देश की राष्ट्रभाषा के रूप में स्थापित हुई। इस उद्धरण द्वारा समझा जा सकता है कि नेतृत्वशीलता में हिंदी की कितनी महती भूमिका है।

सेवापरक इकाई के स्तर पर भी अगर देंखे तो हमें कई बार ऐसे उदाहरण देखने में आते हैं जब एक कुशल प्रबंधक के नेतृत्व में कोई संगठन बहुत अच्छा कारोबार करती है। वहाँ के सभी कर्मचारी प्रसन्न दिखाई देते हैं, जबकि उस विशेष प्रबंधक के स्थानांतरण के बाद सभी के चेहरे पर मायूसी छा जाती है। तो इस प्रबंधक की सफलता के पीछे सबसे बड़ा पक्ष रहा होगा – उसकी परस्पर संवाद कला।

संगठन के विकास हेतु अन्य महत्वपूर्ण तत्व सौहार्दपूर्ण कार्य वातावरण, टीम भावना, समूह भावना इत्यादि में भी परस्पर संवाद एवं भाषा की बड़ी भूमिका है। जिस संगठन में निष्पक्षता और पारदर्शिता अधिक होगी, उस संगठन के प्रति कर्मचारियों का भी विश्वास बढ़ता है। संगठन की नीतियाँ यदि पूरी तरह से पारदर्शी होंगी, स्टाफ सदस्यों की पूरी तरह से समझ में आएंगी तो वह ज्यादा बेहतर तरीके से कार्य निष्पादन करेगा। अगर संगठन द्वारा कर्मचारियों के बीच सकारात्मक दृष्टिकोण का विकास किया जाए तो इससे कर्मचारी गण अभिप्रेरित होते हैं। इसमें एक कुशल नेतृत्व महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। इन सभी में हिंदी की भूमिका जग–जाहिर है।

संक्षिप्ततः यह कहा जा सकता है कि मानव संसाधन प्रबंधन सांगठनिक विकास हेतु अनिवार्य तत्त्व है तथा इसमें आत्मीयता एवं हिंदी की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। संगठन की प्रगति में संवाद, प्रबंधन एवं आत्मीयता को इस प्रसंग से समझा जा सकता है– "तकनीक की दुनिया के महारथी, एपल के सह–संस्थापक स्टीव जॉब्स, जिन्होंने अल्पायु में ही दुनिया भर को अपने आई–प्रॉडक्ट का दिवाना बना दिया, का अपने साथी कर्मचारियों को प्रेरित करने का एक प्रसंग उल्लेखनीय है। स्टीव जॉब्स का जब महत्वाकांक्षी पहला 'मैक कम्प्युटर' तैयार हो गया तो उन्होंने अपने सहयोगी जे. ईलियट से कहा कि "कलाकार अपनी कृति पर हस्ताक्षर करते हैं।" और इस प्रोजेक्ट में शामिल सभी इंजीनियरों के कार्य को स्थायी पहचान देने के उद्देश्य से तय किया की उक्त 'मैक कम्प्युटर' के केस के अंदरूनी हिस्से में इंजीनियरों की मूल टीम के सदस्यों के हस्ताक्षर उत्कीर्ण किये जाएंगे। तदनुसार 10 फरवरी, 1982 को सभी टीम के सदस्यों के हस्ताक्षर किए गए। स्टीव ने भी अपने दुलार के नाम 'वोझ' से उस पर हस्ताक्षर किए। हालांकि मैक के खरीदार केस के अंदर इतने सूक्ष्म हस्ताक्षर कभी देखेंगे नहीं या हस्ताक्षर के बारे में कभी उन्हें पता भी नहीं चलेगा परंतु इस प्रोजेक्ट में शामिल इंजीनियरों को पता है और वे इसे हमेशा याद रखेंगे और इसे याद कर गौरवान्वित महसूस करेंगे।

इसी प्रकार हिंदी के प्रयोग से भी सांगठनिक प्रगति के साथ–साथ कर्मचारी आत्मीयता को बल मिलेगा जो कि संस्था की प्रगति में सहयोग का कारक बनेगा। राजभाषा हिंदी के समावेशी स्वरूप को देखते हुए यह जरूरी भी है कि इसे संगठन के प्रत्येक स्तर पर लागू किया जाए। मानव को संसाधन में बदलने की संकल्पना घर से ही साकार होना शुरू होती है। प्रायः यह देखा जाता है कि माता–पिता उनके बच्चों द्वारा हिंदी एवं मातृभाषा में लिखने और पढ़ने के दौरान की गई गलतियों की चर्चा बड़े गर्व से करते हैं कि उनके बच्चे हिंदी एवं मातृभाषा में उतने दक्ष नहीं हैं जितना कि अंग्रेजी में। निश्चित रूप से राष्ट्रहित में इस पर बार–बार चर्चा किया जाना जरूरी है। ऐसे में मानव संसाधन एवं सांगठनिक आत्मीयता के प्रसार में हिंदी के महत्व को देखते हुए यह जरूरी है कि प्रबंधनवर्ग संगठन के विकास में मानव संसाधन एवं हिंदी के परस्पर संबंधों को समझे। अंत में, "निज भाषा उन्नति अहै, बिन निज भाषा ज्ञान के मिटत न हिये के सूल।"

वरिष्ठ प्रबंधक (राजभाषा)
ओरियंटल बैंक ऑफ कॉमर्स, गुरुग्राम

माननीय मूल्यों को आत्मसात करता हिंदी साहित्य

केवल कृष्ण

भाषा – भावों की जननी एवं सम्प्रकाशिका है। ''भाव''–परस्पर अंतरगता के जनक होते हुए आनन्द को उत्पन्न कर समाज को एकसूत्रता में पिरोते है। एकसूत्रता ही राष्ट्र की एकता का मूल आधार है।

राजभाषा ''हिंदी''–अत्यन्त सरल, सहज, सर्वग्राहय एवं सर्वसमन्वयकारिणी भाषा है। इसका मूल उद्‌गम भारत वर्ष की गौरवमयी भाषा ''संस्कृत'' है। ''संस्कृत'' से ''पाली'' प्राकृत'' भाषा का उद्‌भव हुआ और इन्हीं के साथ मिश्रित होती हुई ''संस्कृत'' ''हिंदी'' भाषा के रूप में प्रस्फुटित हो त्रिवेणी संगम धारा के अदृश प्रवहमान होती हुई आज समाज के सभी वर्गों को भाव–तृप्ति एवं परितोष दे रही है।

संस्कृत की गरिमा से विश्व सुपरिचित है। विश्व के समग्र ज्ञान–विज्ञान का मूल–स्रोत देववाणी संस्कृत ही है। ''वेद'', ''पुराण'', ''रामायण'', ''महाभारत'' के साथ–साथ कालिदास आदि विभिन्न कवियों एवं शास्त्रकारों द्वारा संरचित रचनाएं ''भारतीय–संस्कृति'' के उदात्त मानवीय मूल्यों के साथ समग्र ''ज्ञान–विज्ञान'' को लोक कल्याण के लिए प्रकाशित करती हैं। अतः ''संस्कृत'' की ''पुत्री'' के रूप में अभिव्यक्त हिंदी–भाषा राष्ट्र के समग्र ज्ञान–विज्ञान एवं गौरव की संवाहिका है। यदि हिंदी के माध्यम से ही बालकों का अध्ययन एवं अध्यापन कराया जाय तो सहज ही बालक एक ऐसे उदात्त ज्ञान–विज्ञान के क्षेत्र में प्रविष्ट होने लगता है, जो मानवता के महान मूल्यों से जुड़ा हुआ है। मानवीय मूल्य ही समाज में सच्चरित्रता का गठन करते हुए उसे एक ऐसे सार्वभौमिक धरातल पर ला खड़ा करते हैं, जहाँ समाज समस्त दुर्भावनाओं से मुक्त होकर स्वभावतः परस्पर–प्रीति के सूत्र में बंध जाता है और विघटनकारी प्रवृत्तियों के विनाश के साथ ही लोक कल्याणकारिणी प्रवृत्तियाँ मुखरित होकर ''निर्माण–नीति'' को पुष्ट करती हुई चतुर्दिक सुख–समृद्धि एवं आनन्द का सेतु बनती है। जैसा कि कहा गया –

''अयं निजः परो बेति, गणना लघुचेतसाम्।
उदार चरितानां तु, वसुधैव कुटुम्बकम्।।''

अर्थात् ''यह मेरा है। यह दूसरे का है।'' इस प्रकार का चिन्तन क्षुद्र–हृदय वाले व्यक्ति ही करते हैं। वस्तुतः जो उदार चरित वाले महान पुरुष हैं, उनके लिए तो सारी पृथ्वी ही एक कुटुम्ब के समान है। और भी –

''सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, भा कश्चिद् दुःखभाग भवेत

अर्थात सभी प्राणी सुखी हों। सभी निरोग हो। सभी मिलकर श्रेष्ठ आनन्दयी घटनाओं का दर्शन करें। कोई भी दुःख का भागी न बने।

इस प्रकार की उदात्त भावनाएं भारतीय संस्कृति की गौरवमयी महान् चेतना को सम्प्रस्तुत करती हुई उसे विश्व–बन्धुत्व के मूलाधार के रूप में संस्थापित करती है। वर्तमान युग में भारतीयता को एक सूत्र में पिरोने वाली भाषा हिंदी ही हो सकती है, क्योंकि वह सरल है और जन–मानस में सहजतया स्थान बना लेती है।

''भूमि'' ''जनता'' ''सरकार'' एवं ''सम्प्रभुता''–ये सब मिलकर किसी राष्ट्र के स्वरूप को आकार प्रदान करते हैं। किंतु उसके स्वाभिमान एवं एकता को

बनाए रखने के लिए उसकी एक ''राष्ट्र–भाषा'' एवं ''राजभाषा'' अत्यन्त अपरिहार्य है। इससे राष्ट्रीयता की भावना भी बलवती होती है। एक भाषा–भाषी समाज में सहज रूप से आत्मीयता बढ़ने लगती है और वह परस्पर एक सूत्रता में उपनिबद्ध होकर परस्पर हितों का साधक होता हुआ आनन्दाभिमुखी होने लगता है।

भारत वर्ष कई शताब्दियों तक परतन्यता की बेड़ियों से जकड़ा रहा। विदेशी शासकों ने हमारे देश की धन–सम्पत्ति को तो लूटा ही, साथ ही हमारी ''भाषा'' व ''संस्कृति'' को तहस–नहस करने का भी कुचक्र रखा। किंतु हमारे उदारवादी दृष्टिकोण ने आत्मरक्षा करते हुए सबको आत्मसात करने का प्रयत्न किया। यहा कारण है कि सदियों तक लुटे–पिटे होने के बावजूद हमारी आत्मसत्ता आज भी अक्षुण्ण है। ''उर्दू'' एवं ''फारसी'' को ''हिंदी'' ने आत्मसात करते हुए अपने हृदय में स्थान दिया और हिंदी में उदारवादिता के साथ इन भाषाओं के शब्दों की बहुलता है एवं साहित्य–सृजन के क्षेत्र में एक समन्वयवादी दृष्टिकोण के साथ साहित्यकार प्रवृत्त हो रहे हैं।

''लार्ड मैकाले'' के निर्देश पर भारत में शिक्षा का ''अंग्रेजीकरण'' कर दिया गया। भारत वर्ष को स्वतंत्रता प्राप्त किए हुए 70 वर्ष से भी अधिक समय हो गया है, पर हम अभी तक मानसिक–पराधीनता से स्वयं को मुक्त नहीं कर पाए हैं। विदेशी भाषा के प्रति हमारा आकर्षण बढ़ता ही जा रहा है। आज के अर्थ–प्रधान युग में व्यापारीकृत शिक्षा के तहत आभिजात्य वर्ग अंग्रेजी के माध्यम से ही अपने बालकों का मुख खुलवाने पर आमादा है।

जहां कल तक कबीर के –

''सांच बराबर तप नहीं,
झूठ बराबर पाप।
जाके हिरदय सांच है,
वाके हिरदय आप।''

एवं रहीम के –

''रहिमन धागा प्रेम का,
मत तोड़ो चटकाय।
टूटे ते फिर ना जुरै,
जुरै ता गांठ पड़ जाय।''

इत्यादि दोहों से बालक उदात्ता मानवीय मूल्यों को आत्मसाथ करता हुआ अपना मुख खोलता एवं शिक्षा के परम उद्देश्यों से जुड़ता हुआ ही शिक्षा–पथ पर अग्रसर होता था। वहां आज ''जैक एंड जिल वेण्ट अप द हिल'' से मुंह, खोलता है और उठने–बैठने एवं खान–पान के पश्चिमी तरीके अपनाता हैं और आगे चरित्रहीन होता हुआ न जाने किस अंधकार की दिशा की ओर चल निकलता है। यह सब कुछ समाज में दृष्टिगोचर हो रहा है। अतः नई पीढ़ी के चरित्र निर्माण के लिए हमें ''हिंदी'' को ''राष्ट्र–भाषा'' एवं राजभाषा के रूप में अपनाना ही होगा।

स्वतंत्रता मिलने के बाद संविधान–सभा ने एकमत होकर स्वीकार किया था–

''संघ'' की ''राजभाषा'' ''हिंदी'' एवं ''लिपि'' ''देवनागरी'' होगी।

इसके साथ–साथ विभिन्न प्रादेशिक भाषाओं को भी मान्यता दी गई थी। हिंदी–भाषा को पूर्ण स्थान प्रदान करने के लिए 15 वर्षों का समय निश्चित किया गया। सरकार ने इसके लिए अपने प्रयत्न भी प्रारंभ कर दिए थे, किंतु कुछ लोगों का मानना था कि अंग्रेजी के अभाव में उनके बच्चे नौकरियों में पिछड़ जाएंगे और इन्हीं स्वार्थों एवं हीन भावों ने ''हिंदी''को उसके उचित पद पर प्रतिष्ठित नहीं होने दिया।

''मातृभाषा'' के प्रति यह हीन भाव एवं अंग्रेजी के प्रति उच्चभाव हमारी मानसिक दासता उजागर करता है। हमाने मन में अंग्रेजी वेशभूषा, रहन–सहन एवं अंग्रेजी भाषा के प्रति क्षुद्र राग बना हुआ है। चिकाल तक परतंत्र रहकर हमने राष्ट्रीयता एवं राष्ट्र–प्रेम के विधायक तत्वों को विस्मृत कर दिया। हम ''महात्मा गांधी'' को राष्ट्रपिता कहते हैं, किंतु

हमने उनके आदर्शों पर चलने का प्रयत्न नहीं किया। ''मोहनदास करमचंद गांधी'' की ''दक्षिण–अफ्रीका'' के ''रेल–यात्रा–अपमान'' एवं अन्याय ने उनकी अंतदृष्टि खोल दी और ''एडवोकेट गांधी'' से ''महात्मा गांधी'' बन गए। एक धोती के दो टुकड़ों को उन्होंने अपना परिधान बनाया। विदेशी कपड़ों की होली जलवाई। खुद चरखा से सूत कातकर आत्मनिर्भर बनने का एक महान संदेश दिया। ''गांधी जी'' का वही चित्र आज ''राजमुद्रा'' से लेकर घर–घर में विद्यमान है। उन्होंने ''सादा जीवन उच्च विचार'' जैसा भारतीय संस्कृति का संदेश दिया। ''धरती के लाल'' धीर–वीर महान युगपुरुष ''श्री लाल बहादुर शास्त्री'' ने भी ''जय जवान जय किसान'' का नारा देते हुए सादगी भरे जीवन–व्यवहार से हमें भारतीय–संस्कृति के मूल जीवन मूल्यों का उपदेश दिया था। हमने उनके चित्र एवं गाथाएं तो अपनायीं किंतु हम उनके जीवन–दर्शन को नहीं अपना सके। यही कारण है शस्य श्यामला भारत माता वसुन्धरा की गोद में मुख–समृद्धि के साधनों से सम्पन्न यह देश भुखमरी पिछड़ेपन अशिक्षा से धिरा हुआ है।

आधुनिकता के मोह ने हमें ''राजभाषा'' ''स्वसंस्कृति'' एवं ''स्वसाहित्य'' के प्रति प्रेम एवं आदर से वंचित कर दिया। अंग्रेजी भाषा को ही ''ज्ञान–विज्ञान'' का ''वातायन'' कहा जाने लगा है, जो कि बिल्कुल भी तर्क–संगत नहीं हैं। आधुनिक विज्ञान के इतिहास पर दृष्टि पात करने से यह सुस्पष्ट हो जाता है कि वैदिक–दार्शनिक–विज्ञान की पश्चिम में संक्रमित होकर भौतिक यांत्रिक परिवेश धारण करता हुआ विश्व की चकाचौंध का विषय बना हुआ है। ''गौतम'' का पदार्थ विज्ञान एवं ''परमाणु विज्ञान'', कपिल एवं ''पतंजलि'' का ''सारंव्य योग विज्ञान'' ''धन्वन्तरि'' ''चरक'' एवं ''सुश्रुत'' का आयुर्विज्ञान–सारे विज्ञानों के मूलाधान है जो सुदूर अतीत में ही मानवता के समक्ष प्रकाशित थे। आधुनिक विज्ञान भौतिक आविष्कारों के माध्यम से इनका रूपान्तरण मात्र है जो चमत्कार के हेतु तो है, किंतु मानवता को पतन एवं विनाश की तरफ धकेलता हुआ भयावह ही प्रतीत होता है। अतः हमें मानवता की संरक्षा हेतु भारतीय चेतन विज्ञान की ओर अभिमुख होना ही पड़ेगा। वह विज्ञान ''हिंदी'' एवं ''संस्कृत'' भाषाओं के माध्यम से ही हमें प्राप्त होगा।

हिंदी भारत के सर्वाधिक लोगों की भाषा है। अतः हमें अपनी प्रादेशिक भाषाओं की रक्षा तो करनी चाहिए किंतु उनका एकांकी व्यामोह छोड़कर ''राष्ट्र–भाषा' को समग्र राष्ट्र में संस्थापित करने उदारभाव से अध्ययन–अध्यापन का विषय बनाना चाहिए। तभी हमारी ''सार्वभौमिक–एकात्मता'' हमें एकसूत्र में बांध सकेगी और हम अपने क्षेत्रीय स्वरूप के व्यामोह को त्यागकर सच्चे मायनों में भारतीय बन सकेंगें।

हिंदी समझने में ''सरल'' है यह तर्कपूर्ण वैज्ञानिक भाषा है। इसकी लिपि ''देवनागरी'' ''सुबोध'' ''वैज्ञानिक'' एवं ''सरल'' है। आज विश्व में विभिन्न देशों में हिंदी बोली जाने लगी है। यह एक ऐसी उदार एवं सर्वसमन्वय की भाषा है, जो जिस भाषा से जुड़ती है, उसे अपना लेती है। अंत एवं यह मूलतः संस्कृतनिष्ठ होती हुई भी सभी भाषाओं के शब्दों को सहजभाव से ग्रहण करती है। इसके महत्व पर प्रकाश डालते हुए ''भारतेन्दु हरिश्चन्द्र'' ने कहा है–

अंग्रेजी पद के जदपि सब गुन होत प्रवीन।
पै निजभाषा ज्ञान बिन रहत हीन के हीन।।
निजभाषा उन्नति अहै, सब उन्नति कौ मूल।
बिन निजभाषा ज्ञान के मिटत न हिय कौ सूल।

हिंदी आदिकाल से लेकर वर्तमान तक विभिन्न रूपों में प्रसारित होती हुई साहित्य के विभिन्न आयामों का सृजन कर चुकी है। वीरगाथा ''काल'', ''रीतिकाल'' एवं ''आधुनिक काल'' की काव्यधाराओं को देखने से यह सुस्पष्ट हो जाता है कि यह एक बहती हुई कल–कल सरिता की तरह विभिन्न धाराओं को उजागर करती हुई उमड़ घुमड़ कर भारतीय जनमानस को आनन्द बोध कराती हुई सतत् प्रवाहमान है।

कविवर ''चन्द बरदायी'' द्वारा संरचित ''वीरगाथा काल'' की रचना ''पृथ्वीराज रासो''–पृथ्वीराज चौहान के शौर्य को प्रदर्शित करती हुई। उसके अत्यधिक उदार चरित्र को समुपस्थापित करती है, जिसे पढ़कर भारतीय जनमानस की वीरता एवं उदारता सहित ही अंतमानस में प्रकाशित हो जाते हैं। ''भक्तिकाल'' की रचनाएं तो शाश्वत है, जो भारतीय–संस्कृति के शाश्वत भावों से ओत–प्रोत है। ''भाक्ति–भाव– प्राणिमात्र की सेवा का भाव है। प्राणिमात्र के हृदय में अंतर्यामी रूप से एक ही चेतनसत्ता विराजमान है–''वायुदेवः अर्वम्''। अतः उस ''परात्पर पुरुष'' की ''भावमयी सेवा'' से प्रारंभ होकर ''भक्ति'' ''प्राणिमात्र की सेवा'' में परिणामित हो जाती है। उसे ही ''रामराज्य'' की संज्ञा दी गई है। ''महात्मा गांधी'' ''लाल बहादुर शास्त्री'' आदि सभी महान नेताओं ने स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत में ''रामराज्य'' की परिकल्पना की थी। भक्तिकाल के महान युग–कवि ''श्री गोस्वामी तुलसीदास'' ''रामचरितमानस'' में ''राम राज्य'' की छवि उजागर करते हैं–

राम राज बैठे त्रैलोका। हरषित भये गए सब सोका।।
बयरु न कर काहू सन कोई। राम प्रताप विषमता खोई।।
दैहिक दैविक भौतिक तापा। रामराज नहिं काहुहिं व्यापा।
सब नर करहिं परसपर प्रीती। चलहिं स्वधर्म निरत श्रुतिनीति।

सामाजित–प्रीति ही ''राम राज्य'' है। वही एकता का परम सूत्र है। इसी प्रकार भक्तिकाल के अन्य भक्त कवियों ने भी इसी प्रेम–भाव का प्रसार समाज में किया। जिनमें ''कबीरदास'', ''सूरदास'', मलिक मुहम्मद–जायसी, रहीम, रसखान आदि प्रमुख हैं।

इसी प्रकार रीतिकालीन कवियों में ''बिहारी'' ''केशव'' ''भूषण'' आदि कवियों की प्रौढ़ रचनाएं समाज में चारित्रिक प्रेम–संदेश देती हैं। आधुनिक काल के कवि एवं साहित्यकारों में ''जयशंकर प्रसाद'' ''हजारी प्रसाद द्विवेदी'' महावीर प्रसाद द्विवेदी, बालकृष्ण भट्ट, बेचन शर्मा ''उग्र'', महादेवी वर्मा, सूर्यकान्त त्रिपाठी ''निराला'', रामनरेश त्रिपाठी, ''सुमित्रानंदन पंत'', ''अज्ञेय'' आदि महान साहित्यकार हुए जिन्होनें अपनी रचनाओं से भारतीय जनमानस के साथ–साथ विश्व को प्रभावित किया।

यहां ''प्रसाद'' की ये पंक्तियां स्मरणीय हैं–

''अरुण यह मधुमय देश हमारा।
जहां पहुंच अनजान क्षितिज हो,
मिलता एक सहारा।
अरुण यह मधुमय देश हमारा।''

राष्ट्र प्रेम ही जीवन है। वह तभी होगा जब ''राजभाषा' से प्रेम करेंगे। राजभाषा हिंदी हमारी पहचान है। इसके द्वारा प्रसारित समग्र ज्ञान–विज्ञान संपूर्ण भारत को एक–सूत्रता में पिरो सकता है। फिर एक बार एक गौरवमयी ''राष्ट्र–संस्कृति'' के साथ विश्व के समक्ष ''वसुधैव कुटुम्बकम्'' की भावना को मानवता के महान संदेश के रूप में प्रकाशित करते हुए दृढ़ता पूर्वक खड़े हो सकते हैं। राष्ट्र कवि मैथिलीशरण गुप्त जी राष्ट्र प्रेम की भावना उजागर करते हुए कहते हैं–

जिसमें न निज गौरव तथा
निज देश का अभिमान है।
वह नर नहीं, नर पशु निरा,
और मृतक समान है।
जो भरा नहीं है भावों से,
जिसमें बहती रसधार नहीं।
वह हृदय नहीं बस पत्थर है,
जिसमें स्वदेश का प्यार नहीं।

अंत में अपनी चार पंक्तियों के माध्यम से ''राजभाषा'' – ''हिंदी'' का गुणगान करते हुए विराम लेता हूँ–

''भारत माता के माथे की,
झिल–मिल–झिलमिल–सी बिंदी है।
जन–जन–मानस में प्रेम भरे,
मधुमय भाषा ये हिंदी है।''

अरुणाचल प्रदेश : सांस्कृतिक विरासत की झलकियां

राजेश कुमार सिंह

अरुणाचल प्रदेश, पूर्वोत्तर भारत का सबसे अच्छा राज्य है। यहां के हिमाच्छादित पर्वत, घने वन, शंकुधारी वृक्ष, वेगवती नदियां, झरने, रंग–विरंगे ऑर्किड–पुष्प एवं वन्य–जन्तु सम्पदा, राज्य को विविधताओं का प्रदेश बनाते हैं। पांच नदियां–कामेंग, सुबनसिरी, सिआंग, दिबांग और लोहित, इस प्रदेश को उतनी ही नदी–घाटियों में बिभक्त करती है। सियांग नदी में दिबांग और लोहित के मिल जाने पर इसे ब्रह्मपुत्र का नाम दिया जाता है।

इस रमणीय राज्य में छब्बीस मुख्य जनजातियां एवं सौ से अधिक उपजनजातियां निवास करतीं हैं। जलवायु एवं ऊंचाई की भिन्नता के कारण यहां रहने वाले लोगों के रहन–सहन, रीति–रिवाजों, पर्वों, बोल–चाल, धार्मिक मान्यताओं और परम्पराओं में कई भिन्नताएं देखी जाती हैं।

आदि, गालो, अपातानी, अका, नियाशी, तागिनी जनजातियां सूर्य और चंद्र की उपासना करती है, जिसे दोन्यी–पोलो के नाम से जाना जाता है। पश्चिमी अरुणाचल के तवांग एवं कमेंग जिलों की मोनपा एवं शेरदुकपेन जनजातियां जहां महायान बौद्ध धर्म में विश्वास रखती हैं, वहीं पूर्वी अरुणाचल की खम्ति एवं सिंधयो जनजातियों ने हीनयान बौद्ध धर्म को अपनाया है। हिंदू धर्म को मानने वाली जनजातियां हैं, तिरप जिले की नॉक्टि और वाङ्चू।

प्रकृति से जुड़े अनेक पर्व यहां मनाए जाते हैं जिनमें से कुछ अच्छी फसल की कामना करने तो अन्य भरपूर फसल देने के लिए धन्यवाद स्वरूप मनाए जाते हैं। इन पर्वों में प्रमुख हैं लोसर, द्री, म्योको मोपिन, बुरी बूट खान, मोजियल, मूल सोलंग, मोपिन इत्यादि। इन अवसरों पर बच्चे–बूढ़े–जवान, स्त्री–पुरुष सभी नवीन पारम्परिक वस्त्र पहनते हैं। यहां की स्त्रियां पटु–शिल्पी होती हैं। हथकरघा का प्रयोग करके ये सुन्दर वस्त्रों के साथ–साथ अत्यंत सुन्दर कालीन एवं शाल भी बुनती हैं। अन्य राज्यों की तरह यहां की नारियां भी तरह–तरह के आभूषण धारण करती हैं। ये आभूषण चांदी, अन्य सस्ते धातुओं एवं बांस से बने होते हैं। इनके अलावा ऑकिंड्–पुष्पों का भी प्रयोग स्त्रियां सौंदर्य वर्धन के लिए करती हैं। अरुणाचल के टिपि, सेस्सा और दिरांग में आर्किड उद्यान विकसित किए गए हैं। प्रचलित किंवदंतियों के अनुसार यहां पाई जाने वाली दो आर्किड्–पुष्प प्राचीन काल में देवी सीता और देवी द्रौपदी द्वारा प्रयोग में लाए जाते थे, जिनसे इन पुष्पों का नाम सीता–पुष्प और द्रौपदी–पुष्प पड़ गया।

ऐसे अनेक पहलू हैं, जो इस प्रांत की संस्कृति को देश के अन्य हिस्सों की सांस्कृतिक धाराओं से जोड़ते हैं। भिस्माकनगर, मालिनीथान और परशुराम कुंड जैसे स्थान जहां एक ओर महाभारत, रामायण और पुराणों से जुड़े हैं वहीं तवाग, बोमडिला, नामसाई और ईटानगर जैसे अनेक स्थान बौद्ध धर्म के पवित्र मठ–विहारों के लिए जाने जाते हैं।

मान्यताओं के अनुसार अरुणाचल के सुदूर पूर्व में, पूर्वी–सियांग जिले के भिस्माक नगर में देवी रुक्मिणी, ईदू–मिश्मी जनजातीय में कन्या के रूप में जन्मी और पली–बढ़ी। इनका वरण करने श्री

कृष्ण, भारत के पश्चिमी छोर पर समुद्र के किनारे बसे, द्वारका से यहां आए थे। भिस्माक नगर में मध्यकालीन किले के पुरातात्विक अवशेष देखे जा सकते हैं।

भिस्माक नगर से द्वारका लौटते हुए नव–दम्पति ने अरुणाचल के जिस स्थान पर विश्राम किया था उसे मालिनीथान के नाम से जाना जाता है। इस स्थान का यह नाम इसलिए पड़ा क्योंकि देवी पार्वती ने मालिनी के रूप में यहीं पर देवी रुक्मिणी को पुष्पों की माला उपहार में भेंट की थी। यहां दसवीं–बारहवीं शताब्दी के समय निर्मित मंदिर के अवशेष अभी भी देखे जा सकते हैं जो उस समय की मंदिर निर्माण शैली का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। प्रदेश में अनेक और भी स्थान हैं, जहां पुरातात्विक अवशेष मिलते हैं। इनमें से सबसे ज्यादा प्रसिद्ध है ईटा किला जो चौदहवीं–पंद्रहवीं शताब्दी के बीच निर्मित किया गया था। इसी के नाम पर राज्य की राजधानी का नाम ईटा नगर पड़ा है। इस किले के कुछ हिस्से ही अब शेष हैं।

मालिनीथान में एक संग्रहालय भी निर्मित किया गया है, जिसमें इस स्थान से पाए गए पुरातात्विक अवशेषों को प्रदर्शित किया गया है। अरुणाचल में अन्य कई स्थानों पर संग्रहालयों की स्थापना की गई है जिनमें राज्य की सांस्कृतिक विरासत के विभिन्न पहलुओं को दर्शाती हुई कई वस्तुएं प्रदर्शित की गईं हैं। इनमें ईटानगर में स्थित राज्य संग्रहालय तथा जीरो एवं पासीघाट में बने जिला संग्रहालय उल्लेखनीय हैं।

मालिनीथान से कुछ दूरी पर आकाशीगंगा नामक जलकुंड है, जो श्री कृष्ण एवं रुक्मिणी द्वारा स्नान किए जाने से पवित्र तीर्थ स्थल के रूप में प्रसिद्ध है। हर साल मकर संक्रांति के समय यहां मेला लगता है। इसी अवसर पर अरुणाचल के सुदूर पूर्वी हिस्से में लोहित नदी के किनारे परशुराम कुंड पर भी मेला लगता है जहां, पुण्य स्थान एवं पूजा–अर्चना के लिए देश के अनेक हिस्सों से तीर्थयात्री आते हैं।

पौराणिक कथाओं के अनुसार श्री परशुराम ने अपने पिता ऋषि जमदग्नि के आदेश का पालन करते हुए अपनी माता देवी रेणुका का वध किया था। जिस स्थान पर यह घटना घटी थी वह हिमाचल प्रदेश के सिरमौर जिले में श्री रेणुका जी तीर्थ के नाम से प्रसिद्ध है। श्री परशुराम ने, प्रसन्न पिता से माता का जीवन तो वरदान में तुरंत ही वापस मांग लिया था, पर उन्हें मातृ वध के पाप से मुक्ति नहीं मिली और उनका परशु उनके हाथों से चिपक गया। इस पाप से मुक्त होने के लिए वे अनेक पवित्र स्थानों पर गए, पर उनको मुक्ति लोहित नदी के किनारे परशुराम कुंड में स्नान करके ही मिली।

अरुणाचल के मध्य में जीरो में हपोली के पास कार्डो की पहाड़ियों पर एक विशाल प्राकृतिक शिवलिंग है जिसकी ऊंचाई लगभग पच्चीस फुट और घेरा इक्कीस फुट के करीब है।

अरुणाचल के पश्चिमोत्तर हिस्से में तवांग जिले में देश का सबसे बड़ा और विश्व का दूसरा सबसे विशाल बौद्ध मठ स्थित है। राज्य के अन्य स्थानों, जैसे बोमडिला, नामसाई, ईटा नगर में भी कई बौद्ध मठ निर्मित किए गए हैं। रास्तों के किनारे, विशेषकर दिरांग में कई गोम्पा यादि छोटे स्तूप भी नजर आते हैं। राज्य के बौद्ध श्रद्धालुओं की मांग पर, दिल्ली स्थित राष्ट्रीय संग्रहालय में प्रदर्शित श्री बुद्ध की अस्थि–अवशेषों को बोमडिला एवं नामसाई में, कुछ वर्ष पहले, श्रद्धालुओं के दर्शन के लिए ले भी ले जाया गया था।

इस राज्य में जहां एक ओर धार्मिक विविधता देखी जाती है, वहीं भाषा की अनेकता भी प्रचलन में है। राज्य के विभिन्न क्षेत्रों का भ्रमण करने पर एक सुखद अनुभव यह होता है कि ज्यादातर लोग हिंदी बोलते और समझते हैं। कुछ दशकों पूर्व,

भारत–सरकार द्वारा यहां के विद्यालयों में, अन्य राज्यों से हिंदी अध्यापकों की नियुक्ति की गई, जिनके निरंतर योगदान का सुफल यह हुआ है कि इस राज्य के लोग हिंदी को बड़ी सरलता से लिख, पढ़ और समझ सकते हैं। एक तरह से हिंदी यहां संपर्क भाषा के रूप में प्रयोग में लाई जाती है क्योंकि विभिन्न जनजातियों के लोग आपस में भी हिंदी का बहुतायत प्रयोग करते हैं। देश के अन्य हिस्सों से आने वाले, इस कारण से यहां के लोगों से आसानी से घुल मिल भी जाते हैं।

हाल ही में नाहर लागून तक रेल लाईन की सुविधा हो जाने से एवं पासीघाट में शीघ्र ही एयरपोर्ट बनने की संभावना से, अरुणाचल में देश के अन्य हिस्सों से आना जाना और आसान हो जाएगा। इससे देश के अधिक लोगों को यहां आने का अवसर मिलेगा और वे अरुणाचल की संस्कृति से स्वयं साक्षात्कार कर सकेंगे।

फ्लैट नं.–22, सद्भावना अपार्टमेंट
आई पी एक्सटेंशन, दिल्ली–110092

पं. सं. 3246/77

प्रपत्र–4 (देखिए नियम–8)
प्रेस तथा पुस्तक पंजीकरण अधिनियम
समाचार पत्रों का पंजीकरण (केन्द्रीय) नियम
''राजभाषा भारती'' के स्वामित्व तथा विवरणों की सूचना

1.	प्रकाशन स्थान	नई दिल्ली
2.	प्रकाशन अवधि	त्रैमासिक
3.	मुद्रक का नाम	डॉल्फिन प्रिंटो–ग्राफिक्स, दिल्ली
4.	क्या भारत का नागरिक है?	भारतीय नागरिक
5.	प्रकाशक का नाम व पता	डॉ. धनेश द्विवेदी, उप संपादक राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार एन.डी.सी.सी.–2, भवन चौथा तल, बी विंग, नई दिल्ली–110001 दूरभाष : 011–23438159
6.	संपादक (पदेन) का नाम व पता	डॉ. श्रीप्रकाश शुक्ल संयुक्त निदेशक (नीति/पत्रिका), राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय एन.डी.सी.सी.–2, भवन चौथा तल, बी विंग, नई दिल्ली–110001
7.	उन व्यक्तियों के नाम व पते जो समाचार पत्र के स्वामी हों तथा जो समस्त पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक के साझेदार या हिस्सेदार हों।	अप्रयोज्य

मैं, डॉ. धनेश द्विवेदी घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिए गए विवरण सत्य हैं।

ह./–
प्रकाशक का हस्ताक्षर

कवर डिजाइन एवं टाइपसेटिंग–डॉल्फिन प्रिंटो–ग्राफिक्स, 1ई/18, झण्डेवालान विस्तार, चौथी मंजिल, नई दिल्ली–110055

भाषा का सार

डॉ. धनेश द्विवेदी

जीवन सृष्टि का सत्य है और भाषा जीवन का आधार, इस प्रकार सृष्टि तथा भाषा का संबंध भी बेहद अहम है। जीवन मे सवांद के लिये भाषा जरूरी ही नहीं प्राथमिक आवश्यकता होती है, यह भाषा किसी भी प्रकार की हो सकती है, यहां तक कि मूक भाषा भी सवांद की नजर में उतनी ही महत्वपूर्ण है जितनी बोलकर समझने वाली भाषा। जब बात सवांद की आती है तो हमें ज्ञात होता है कि केवल जनमानस ही नहीं बल्कि पशु–पक्षियों, जीव जंतुओं की भी अपनी भाषा है और अपनी भाषा में सवांद करके वे अपने जीवन चक्र को पूरा करते हैं।

मानव समाज की विशेषता है कि अपनी सुविधानुसार वह चीजों को ढाल लेता है और यही कारण है कि भाषा के क्षेत्र में इतनी विविधतायें विद्यमान हैं। विश्व में कितनी भाषायें मौजूद हैं इसकी सही गणना शायद आज तक नहीं हो पाई है और न ही कभी हो पायेगी। कितनी ही भाषायें लुप्त होती जा रही है और कितनी ही भाषाओं का स्वरूप बदलता जा रहा है। यदि हम भारत की बात करें तो पाते हैं कि भाषाओं की विविधता अनूठी है। कई बार छोटे–छोटे कबीलों–कस्बों की बोली को भी हम भाषा समझने की भूल कर देते है और यह गलत–फहमी समाज को भ्रमित करने का कार्य करती है। समय–समय पर कई भाषा–भाषी अपनी–अपनी भाषा के प्रति अधिक संवेदनशील हो जाते हैं और होना भी चाहिये पर संवेदनशील होना अलग बात है जुनून की हद तक जाना दूसरी बात है।

आज भारत के संविधान ने 22 भाषाओं को मान्यता दे रखी है इसका अर्थ है कि इन 22 भाषाओं को विकसित करने, उनका सरंक्षण करने की मूल जिम्मेदारी हर नागरिक पर है। हर भाषा का अपना महत्व है, अपनी लेखन शैली है। इतनी भाषायी विविधताओं वाले देश में संपर्क स्थापित करना किसी चुनौती से कम न था तब एक संपर्क भाषा यानि हिंदी का उद्‌भव व विकास सुनिश्चित किया गया। हिंदी भाषा ने अपनी सरलता एवं सुगमता से देश के एक बड़े हिस्से में संपर्क भाषा के रूप में स्थान बनाया और कई महत्वपूर्ण आंदोलनों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। यह हिंदी की सहजता का ही परिणाम था कि जापान के सुप्रसिद्ध विद्वान प्रो. क्यूया दोई के कथनानुसार वे अपने विद्यार्थियों से यह कहते हैं कि दस–दस साल में सीखी अंग्रेजी बोलने से तीन महीने में सीखी हिंदी बोलना आसान है।

वैसे कोई भी भाषा राष्ट्र की राजनैतिक सीमाओं को तब पार करती है जब इसमें कुछ विशेषता हो और उसका साहित्य समृद्ध हो। इन मानदण्डों पर हिंदी खरी उतरती है। तभी तो आज विश्व के विश्वविद्यालयों में हिंदी भाषा के पठन–पाठन के प्रति विशेष रूचि उत्पन्न हुई है। न जाने कितने ही विश्वविद्यालयों में हिंदी में शोध हो रहे हैं और हिंदी साहित्यकारों पर तो शोध की गणना भी मुश्किल है। इन सबके साथ–साथ आज भी हिंदी भाषा, हिंदी साहित्य और हिंदी साहित्यकारों पर शोध की अपार संभावनाये बनी हुई है। हिंदी साहित्य का मर्म–स्पर्शी,

समाज–सुधारक तथा समाज–चिंतन लेखन संबंधी उतार चढ़ाव किसी से भी छुपा नहीं है। प्रेम, विरह, सुख, दुख आदि का असीमित परिप्रेक्ष्य हिंदी साहित्य में मौजूद है और हमें प्रेरणा प्रदान करना रहता है।

हिंदी की बढती लोकप्रियता का कोई प्रमाण देने की आवश्यकता भी नहीं हैं क्योंकि पूरे विश्व में हिंदी का वर्चस्व लगातार बढ रहा है। अभी हाल में ही विश्व हिंदी दिवस का आयोजन हुआ। न जाने कितनी ही संस्थाओं ने अपने–अपने स्तर पर हिंदी दिवस का आयोजन कर सबका ध्यान आकर्षित किया। कुछ अखबारों की मानें तो हिंदी भाषा विश्व में सबसे ज्यादा बोली जाने वाली भाषा बन चुकी है। इन सब बातों से हमें बल तो मिलता ही है एक गर्व की अनुभूति भी महसूस होती है।

संविधान सभा ने हिंदी को राजभाषा का दर्जा प्रदान पर देश के प्रत्येक नागरिक पर एक अतिरिक्त दायित्व सौंपने का कार्य किया है। हर नागरिक का कर्तव्य बार–बार याद दिलाना उपयुक्त नहीं लगता किंतु इस बात का हमेशा ख्याल रखा जाना आवश्यक है कि जो जिम्मेदारियां सामने दिखाई देती हैं वही जिम्मेदारियों की श्रेणी में नहीं आती बल्कि बहुत सी जिम्मेदारियां छिपी हुई भी होती है और उन्हे निर्वहन करना भी उतना ही महत्वपूर्ण होता है जितना कि सामने दिखने वाली जिम्मेदारी का।

यह सोचना कि संविधान सभा ने हिंदी को राजभाषा का दर्जा दिया है तो केंद्र सरकार के कार्यालय की ही सारी जिम्मेदारी बनती है और उससे जुड़े संस्थान इसकी जिम्मेदारी लें पर यह उल्लेखित करना अत्यंत आवश्यक है कि कोई भी आदेश सरकार में बैठे लोगों के लिए ही होता है और वह आम लोग चाहे सेवा काल में हो या सेवा के बाद, उनकी जिम्मेदारी कभी कम नहीं होती। प्रश्न है तो स्वस्थ मानसिकता का, दृढ़ उसूलों का और मजबूत सकल्पों का। अब बात दृढ़ संकल्प की चल ही पड़ी है तो यह भी मानना होगा कि हिंदी के प्रभावी कार्यान्वयन की वर्तमान स्थिति के लिए दृढ़ संकल्पों की अपरिपक्वता ही जिम्मेदार रही होगी अन्यथा आजादी के सत्तर सालों में भाषा विकास में क्या बाधा हो सकती थी। एक दूसरे पर दोषारोपण किसी भी प्रयास को रोकने का ऐसा सफल मंत्र है जिसको तोड़ पाना कठिन ही नहीं चुनौतीपूर्ण भी है। हमें इस बात पर तो ध्यान देना ही होगा कि क्या कारण है कि जो भाषा पूरे विश्व में आसानी से समझ आ रही है, पूरे विश्व के लोग जिस भाषा के साहित्य को पढ़ने में रुचि दिखा रहे हैं और जो भाषा वैश्विक स्तर पर एक बड़े समूह द्वारा जीवनयापन के लिए उपयोग की जा रही है उसे अपने ही देश में अपने प्रति स्वस्थ वातावारण निर्माण के लिए इतनी जद्दोजहद करनी पड़ रही है। प्रश्न आसान हो सकता है पर उत्तर आसान नहीं और विद्वानों ने कहा है कि जब जवाब अत्यंत कठिन हो तो शांत रहना उचित होता है। हम शायद इसी सोच पर चल रहे हैं कि शांत रहा जाए और वक्त का इंतजार किया जाए किंतु कब तक.....

19011/7/2017- कें.हिं.प्र.सं./ग.भा.प्रशि०/1692 -2292

भारत सरकार

GOVERNMENT OF INDIA

गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग

MINISTRY OF HOME AFFAIRS, DEPARTMENT OF OFFICIAL LANGUAGE

केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण संस्थान

CENTRAL HINDI TRAINING INSTITUTE

दिनांक: 20.11.2017

सेवा में

1. भारत सरकार के सभी मंत्रालय/ विभाग, संबद्ध/ अधीनस्थ कार्यालय
2. विभागाध्यक्ष, सभी सार्वजनिक प्रतिष्ठान/ उपक्रम/ उद्यम/ स्वायत्तशासी तथा सांविधिक निकाय/ अभिकरण/ राष्ट्रीयकृत बैंक आदि।
3. राजभाषा सेवा के सभी अधिकारी।

विषय:- वर्ष 2018 में केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण संस्थान, नई दिल्ली, उप संस्थानों एवं उप केंद्रों में चलाए जाने वाले हिंदी प्रबोध, प्रवीण,प्राज्ञ एवं पारंगत के गहन (अल्पकालिक) प्रशिक्षण कार्यक्रमों के संबंध में।

महोदय/ महोदया,

राजभाषा विभाग के दिनांक 10.09.1987 के कार्यालय ज्ञापन सं. 18015/6/86-रा.भा.ई में दिए गए निदेशों के अनुसार केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण संस्थान, उप संस्थानों एवं उप केंद्रों द्वारा मंत्रालयों/ विभागों उनके नियंत्रणाधीन संबद्ध तथा अधीनस्थ कार्यालयों, सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों/ सांविधिक निकायों/ लोक उद्यमों/ निगमों/ स्वायत्त संस्थानों, संगठनों, अभिकरणों एवं राष्ट्रीयकृत बैंकों में नए भर्ती हुए हिंदीतर भाषा-भाषी अधिकारियों/ कर्मचारियों के लिए हिंदी प्रबोध, प्रवीण प्राज्ञ पाठ्यक्रमों के (अल्पकालिक) गहन कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं।

मूलत: ये पाठ्यक्रम नए भर्ती हुए अधिकारियों/ कर्मचारियों के लिए हैं, किंतु हिंदी प्रशिक्षण के लिए पहले से सेवारत अप्रशिक्षित अधिकारियों/ कर्मचारियों को भी इन प्रशिक्षण कार्यक्रमों के लिए नामित करने पर, उन्हें भी प्रवेश दिया जाएगा, ताकि संबंधित कार्यालय राजभाषा विभाग द्वारा निर्धारित समयावधि (2025) तक, प्रशिक्षण संबंधी लक्ष्यों को प्राप्त करने में सफल हो सकें।

राजभाषा विभाग के दिनांक 22.4.2015 के का० ज्ञापन सं० 12012/3/2015-रा०भा० (नीति) में संसदीय राजभाषा समिति के 7वें प्रतिवेदन की सिफारिश संख्या 16.7 (क) पर पारित राष्ट्रपति के आदेश के अनुपालन में, केंद्र सरकार के सभी मंत्रालयों/ विभागों तथा उनके संबद्ध तथा अधीनस्थ कार्यालयों, केंद्र सरकार के स्वामित्व अथवा नियंत्रणाधीन सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों/ सांविधिक/ स्वायत्त निकायों/ उद्यमों/ अभिकरणों/ निगमों तथा राष्ट्रीयकृत बैंकों आदि में कार्यरत हिंदी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त कार्मिकों को सरकारी कामकाज हिंदी में कार्य करने में दक्ष बनाने हेतु, अभ्यास पर आधारित नया पाठ्यक्रम पारंगत लागू किया गया है।

सभी मंत्रालयों/ विभागों आदि से अनुरोध है कि (अनुलग्नक-I) में उल्लिखित पाठ्यक्रमों के लिए अपने अधीन कार्यरत अधिकारियों/ कर्मचारियों को प्रशिक्षण हेतु प्राथमिकता के आधार पर भेजना सुनिश्चित करें।

---02/-

पृथ्वीराज रोड, नई दिल्ली-110011/2-A, Prithvi Raj Road, New Delhi-110011 फैक्स/Fax : 011-230187
मेल/e-mail : dirchti-dol@nic.in/वेबसाइट/Website : http://rajbhasha.nic.in/rajbhashachti.htm

हिंदी प्रबोध, प्रवीण, प्राज्ञ तथा पारंगत के लिए प्रशिक्षार्थी की पात्रता का निर्धारण निम्नानुसार करें।

1. प्रशिक्षण की संक्षिप्त जानकारी:

क्र.सं.	पाठ्यक्रम का नाम	अवधि	परीक्षा की तिथि	पात्रता
1	प्रबोध	25 पूर्ण कार्य दिवस	प्रशिक्षण का अंतिम दिवस	यह प्रशिक्षण प्रारंभिक स्तर का है। इसमें कन्नड़, मलयालम, तमिल, तेलुगु, मणिपुरी, मिजो और अंग्रेजी भाषा-भाषी अधिकारी/ कर्मचारी, प्रशिक्षण प्राप्त कर सकते हैं। वे सभी अधिकारी/ कर्मचारी जिन्हें हिंदी का ज्ञान प्राइमरी स्तर तक का नहीं है, प्रबोध प्रशिक्षण के पात्र हैं।
2.	प्रवीण	20 पूर्ण कार्य दिवस	प्रशिक्षण का अंतिम दिवस	यह पाठ्यक्रम माध्यमिक स्तर का है। इसमें प्रबोध परीक्षा उत्तीर्ण या मराठी, सिंधी, गुजराती, मैथिली, संथाली, बोडो, डोगरी, नेपाली, बंगला, असमिया और उड़िया भाषा भाषी अधिकारी/ कर्मचारी जिन्हें मिडिल/ माध्यमिक स्तर तक की हिंदी का ज्ञान नहीं हैं, सीधे प्रवेश ले सकते हैं।
3.	प्राज्ञ	15 पूर्ण कार्य दिवस	प्रशिक्षण का अंतिम दिवस	यह उन सभी अधिकारियों/ कर्मचारियों के लिए है, जो प्रवीण पास कर चुके हैं या जिनकी मातृभाषा उर्दू, कश्मीरी, पंजाबी तथा पश्तो है या जिनका हिंदी का ज्ञान मैट्रिक या दसवीं कक्षा से कम है, प्रशिक्षण हेतु पात्र हैं।
4.	पारंगत	20 पूर्ण कार्य दिवस	प्रशिक्षण का अंतिम दिवस	केंद्र सरकार के सभी मंत्रालयों/ विभागों तथा उनके संबद्ध तथा अधीनस्थ कार्यालयों, केंद्र सरकार के स्वामित्व अथवा नियंत्रणाधीन सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों/ सांविधिक निकायों/ उद्यमों/ अभिकरणों/ निगमों तथा राष्ट्रीयकृत बैंकों के हिंदी में कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त सभी कार्मिक, पारंगत पाठ्यक्रम के प्रशिक्षण हेतु पात्र होंगे।

---03/-

नोट:- वर्ग "घ" से वर्ग "ग" में आए कार्मिकों को हिंदी भाषा का प्रशिक्षण देने के संबंध में।

राजभाषा विभाग के कार्यालय ज्ञापन संख्या 14034/30/2009-रा0भा0(प्र0) दिनांक 06 जनवरी, 2010 के अनुसार छठे वेतन आयोग की सिफारिशों के अनुसार, वर्ग "घ" के कार्मिकों को वर्ग "ग" में शामिल कर लिया गया है और इसलिए महामहिम राष्ट्रपति जी के अप्रैल, 1960 के आदेशानुसार वर्ग "ग" के कार्मिकों को हिंदी भाषा/हिंदी टंकण का प्रशिक्षण दिया जाना अनिवार्य है, अत: वर्ग "घ" से वर्ग "ग" में आए उन कार्मिकों के लिए, जो वर्ग "ग" श्रेणी के लिए निर्धारित शैक्षिक योग्यता रखते हैं, उनको पात्रतानुसार हिंदी प्रबोध, प्रवीण, प्राज्ञ का प्रशिक्षण दिया जाए। इसी अनुक्रम में पात्रतानुसार, अपने कार्यालय के वर्ग "घ" से "ग" में आए कार्मिकों को भी नामित करने का कष्ट करें।

नामांकन विधि एवं प्रपत्र :-

- उपर्युक्त प्रशिक्षण के लिए नामित किए जाने वाले अधिकारियों /कर्मचारियों की सूची अनुलग्नक-।। में दिए गए प्रपत्र में पाठ्यक्रम प्रारंभ होने से कम से कम एक महीना पूर्व अवश्य भिजवा दी जाए।
- कार्यालय की सुविधा के लिए नामांकन निर्धारित प्रपत्र में ही भेजा जाए।
- प्रशिक्षण का समय सोमवार से शुक्रवार, सुबह 9.30 बजे से शाम 6.00 बजे तक निर्धारित है।
- प्रशिक्षण के लिए विभिन्न कार्यालयों से नामित अधिकारियों/ कर्मचारियों के लिए, नामांकन की पुष्टि का पत्र संबंधित प्रशिक्षण केंद्र के सहायक निदेशक द्वारा भेजा जाता है।
- नामांकन के संबंध में प्रशिक्षण केंद्र के सहायक निदेशक से पुष्टि पत्र प्राप्त होने पर ही, अधिकारियों कर्मचारियों को प्रशिक्षण के लिए कार्यमुक्त किया जाए।
- प्रशिक्षण केंद्रों की सूची अनुलग्नक -।।। में दी गई है।

परीक्षा:

- इन पाठ्यक्रमों की परीक्षाएँ, प्रत्येक प्रशिक्षण के अंतिम कार्य दिवस पर आयोजित की जाती हैं।
- परीक्षा के लिए आवेदन पत्र प्रशिक्षार्थी से, पाठ्यक्रम में प्रवेश लेने के समय भरवाया जाता है।
- नई दिल्ली, चैन्ने कोलकाता हैदराबाद, बडोदरा एवं बेंगलूरू केंद्रों पर प्रबोध, प्रवीण और प्राज्ञ की ऑनलाइन परीक्षा आयोजित की जाएगी । पारंगत की परीक्षा परंपरागत आधार पर ली जाएगी।

परीक्षा शुल्क:

ये सभी पाठ्यक्रम केंद्र सरकार के सरकारी अधिकारियों / कर्मचारियों के लिए नि:शुल्क हैं, किंतु बैंकों तथा अन्य सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों आदि के अधिकारियों / कर्मचारियों के लिए, उनके कार्यालयों को, हिंदी प्रबोध, प्रवीण एवं प्राज्ञ की परीक्षा के लिए रु०100/-प्रति प्रशिक्षार्थी परीक्षा शुल्क देय है। प्रशिक्षार्थियों के कार्यालयों को परीक्षा शुल्क का भुगतान ऑनलाइन अथवा **उप निदेशक (परीक्षा), हिंदी शिक्षण योजना,** नई दिल्ली में देय बैंक ड्राफ्ट द्वारा करना होगा।

नोट:- पारंगत पाठ्यक्रम की परीक्षा के लिए कोई परीक्षा शुल्क नहीं है।

पाठ्य पुस्तकें:

➢ सभी प्रशिक्षार्थियों को पाठ्य-पुस्तकें प्रशिक्षण केंद्र पर, केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण संस्थान द्वारा, नि:शुल्क प्रदान की जाती हैं।

वित्तीय प्रोत्साहन

- **राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा निर्धारित शर्तों को पूरा करने तथा हिंदी की निर्धारित अंतिम परीक्षा पास करने पर, केंद्रीय सरकार के कर्मचारियों को, 12 महीनों की अवधि के लिए एक वेतन- वृद्धि के बराबर राशि का, वैयक्तिक वेतन प्रदान किया जाता है।**
- हिंदी प्रवीण एवं प्राज्ञ की परीक्षा पास करने और निर्धारित शर्तें पूरी करने पर, नीचे दी गई तालिका के अनुसार, अधिकारियों/ कर्मचारियों को, नकद पुरस्कार प्रदान किए जाते हैं। इस राशि का भुगतान, प्रशिक्षार्थियों के कार्यालयों द्वारा ही किया जाता है। पारंगत परीक्षा उत्तीर्ण करने पर वित्तीय प्रोत्साहन देने का मामला, मंत्रालय के विचाराधीन है।

क्र.सं.		प्रबोध	प्रवीण	प्राज्ञ
1.	70% या इससे अधिक अंक प्राप्त करने पर	₹1600/-	₹1800/-	₹2400/-
2.	60% या इससे अधिक, परंतु 70% से कम अंक प्राप्त करने पर	₹800/-	₹1200/-	₹1600/-
3.	55% या इससे अधिक, परंतु 60% से कम अंक प्राप्त करने पर	₹400/-	₹600/-	₹800/-

विशेष नोट:

- सभी मंत्रालयों/ विभागों, उपक्रमों, बैंकों, निगमों आदि के प्रशासनिक प्रमुखों से अनुरोध है कि वे इस परिपत्र को अपने सभी संबद्ध कार्यालयों, इकाइयों/ शाखाओं में शीघ्र परिचालित करवाने की कृपा करें।

- यह सुनिश्चित करना संबंधित कार्यालय के प्रशासनिक प्रधान का दायित्व है कि अधिकारियों/ कर्मचारियों को अधिक से अधिक संख्या में प्रशिक्षण हेतु नामित किया जाए, नामित कर्मचारी कक्षाओं में निश्चित रूप से प्रवेश लें, परीक्षा में भी सम्मिलित हों, ताकि प्रशिक्षण के लिए उपलब्ध सरकारी संसाधनों का पूर्ण सदुपयोग हो और निर्धारित समय में (2025) तक प्रशिक्षण के लक्ष्य प्राप्त किए जा सकें।

- यह भी सुनिश्चित करने की कृपा करें कि प्रशिक्षण कार्यक्रम में जिन अधिकारियों/ कर्मचारियों के नामों की पुष्टि प्रशिक्षण केंद्र के सहायक निदेशक द्वारा भेजी जाती है, उन्हें अवश्य कार्यमुक्त किया जाए। यदि किसी कारणवश उन्हें भेजना संभव न हो, तो उनके स्थान पर किसी अन्य अधिकारी/ कर्मचारी को भेजा जा सकता है। पहले नामित अधिकारी/ कर्मचारी को अगले सत्र में भिजवाने की व्यवस्था करना भी सुनिश्चित करें।

- यात्रा भत्ता आदि जो भी देय होगा, उसे प्रशिक्षार्थी के कार्यालय द्वारा ही वहन किया जाएगा।

---05/-

- प्रशिक्षण पूरा करने के उपरांत प्रत्येक प्रशिक्षार्थी को कार्यमुक्ति आदेश दिया जाता है।
- प्रशिक्षण से संबंधित अन्य वांछित जानकारी के लिए, संबंधित सहायक निदेशक से फोन 011-23063321 एक्सटेंशन 2207 पर संपर्क करें।
- **नई दिल्ली केंद्र के अधिकारी का संपर्क सूत्र, प्रशिक्षण केंद्र, हॉस्टल का पता तथा बस रूट अनुलग्नक IV पर देखें।**

भवदीय

(डॉ. जयप्रकाश कर्दम)
निदेशक

पृष्ठांकन सं. 19011/7/2017 -कें.हि.प्र.सं./ग.भा.प्रशि./1692-2292 दिनांक: 20.11.2017

प्रतिलिपि सूचनार्थ:-

1. संयुक्त सचिव(राजभाषा) के निजी सचिव, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, एन.डी.सी.सी. भवन, चौथा तल, जयसिंह रोड, नई दिल्ली-110001.
2. संपादक, राजभाषा भारती, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, एन.डी.सी.सी.भवन, चौथा तल, जयसिंह रोड, नई दिल्ली-110001.
3. संयुक्त निदेशक (मु0), हिंदी शिक्षण योजना, 7वाँ तल, पं.दीनदयाल अंत्योदय भवन,केंद्रीय कार्यालय परिसर, लोधी रोड, नई दिल्ली-110003.
4. सभी क्षेत्रीय उप निदेशक, हिंदी शिक्षण योजना, केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण संस्थान नई दिल्ली, मुंबई, चेन्नै, कोलकाता, गुवाहाटी।
5. सभी उप निदेशक (कार्यान्वयन), व्यापक प्रचार-प्रसार हेतु।
6. उप निदेशक (परीक्षा), हिंदी शिक्षण योजना, पूर्वी खंड-7,लेवल-6, आर.के. पुरम, सैक्टर-1, नई दिल्ली- 110066
7. प्रभारी सहायक निदेशक, केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण उप संस्थान, बैंगलूरु, हैदराबाद।
8. सभी सहायक निदेशक (भाषा), केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण संस्थान, नई दिल्ली, उप संस्थान बैंगलूरू, हैदराबाद,चैन्ने, कोलकाता उप केंद्र, वडोदरा।
9. सहायक निदेशक(भाषा) अनुसंधान एवं विश्लेषण एकक, केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण संस्थान, नई दिल्ली-110003.
10. सहायक निदेशक(टं/आशु॰) अनुसंधान एवं विश्लेषण एकक, केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण संस्थान, 7वां तल पं.दीनदयाल अंत्योदय भवन, नई दिल्ली को इस निदेश के साथ कि वे इसे राजभाषा विभाग के पोर्टल/ वैबसाइट पर उपलब्ध करवा दें।

(डॉ॰ जयप्रकाश कर्दम)
निदेशक

अनुलग्नक -I

केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण संस्थान, नई दिल्ली द्वारा वर्ष 2018 में आयोजित किए जाने वाले हिंदी प्रबोध, प्रवीण, प्राज्ञ एवं पारंगत अल्पकालिक गहन प्रशिक्षण कार्यक्रम तथा पाठ्यक्रम की सत्रावधि :-

	गहन पाठ्यक्रम	कार्य दिवस	प्रशिक्षण की अवधि
सत्र प्रथम	प्रबोध	25	01.01.2018 से 05.02.2018 तक
	प्रवीण	20	06.02.2018 से 07.03.2018 तक
	प्राज्ञ	15	08.03.2018 से 28.03.2018 तक

	गहन पाठ्यक्रम	कार्य दिवस	प्रशिक्षण की अवधि
सत्र द्वितीय	प्रबोध	25	01.05.2018 से 04.06.2018 तक
	प्रवीण	20	05.06.2018 से 02.07.2018 तक
	प्राज्ञ	15	03.07.2018 से 23.07.2018 तक

	गहन पाठ्यक्रम	कार्य दिवस	प्रशिक्षण की अवधि
सत्र तृतीय	प्रवीण	20	04.09.2018 से 03.10.2018 तक
	प्राज्ञ	15	04.10.2018 से 25.10.2018 तक
	पारंगत	20	26.10.2018 से 27.11.2018 तक

अनुलग्नक -II

नामांकन का प्रपत्र

क्र.सं.	प्रशिक्षार्थी का नाम और पदनाम और बल सं०	मातृभाषा	पाठ्यक्रम जिसके लिए नामित किया गया है	शैक्षिक/ तकनीकी अर्हताएं	हिंदी का ज्ञान	कर्मचारी के कार्यालय का नाम पता तथा 1. फोन नं. 2.फैक्स नं० 3.ई मेल आई डी

प्रायोजक अधिकारी के हस्ताक्षर

नाम और पदनाम .....

कार्यालय का नाम और पता.....

.....

.....

टेलीफोन नं ..... फैक्स नं.....

ई मेल आई डी .....

अनुलग्नक-III

प्रशिक्षण केंद्रों की सूची

1. सहायक निदेशक (भाषा), केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण संस्थान, कमरा नं. 449-ए उद्योग भवन, नई दिल्ली - 110011 (दूरभाष 011-23063321 एक्स. 2207 फैक्स 011-23062626 फैक्स 011-23018740 (पृथ्वीराज रोड) नई दिल्ली-
2. सहायक निदेशक (भाषा), केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण उप संस्थान, द्वितीय तल, राजाजी भवन, ई-3 सी ब्लॉक, बेसंट नगर, चेन्नै -600090.(दूरभाष 044-24918904)
3. सहायक निदेशक (भाषा), केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण उप केंद्र , सी जी ओ टावर कमरा नं० 403 कावडी गुड़ा हैदराबाद 500080 (फोन नं०- 040- 27537211)
4. सहायक निदेशक (भाषा), केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण उप केंद्र , बी विंग, 5वाँ तल, केंद्रीय सदन, 17वाँ मेन रोड, दूसरा ब्लॉक, कोरमंगला, बैंगलूर-560034 (फैक्स 080-25537089) दूरभाष सं. 080- 25537087)
5. सहायक निदेशक (भाषा), केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण उप संस्थान, केंद्रीय सदन, सी विंग, छठा माला, सी.बी.डी बेलापुर, नवी मुंबई-400614 (दूरभाष 022-27572705, 27572706) फैक्स नं. 022-27565417
6. उप निदेशक(पूर्व), हिंदी शिक्षण योजना, निजाम पैलेस परिसर, 234/4, द्वितीय बहुतलीय भवन, 18 वाँ तल, आचार्य जगदीश चन्द्र बोस रोड, कोलकाता-700020 (दूरभाष -033-22870793 और 22890038) फैक्स नं. 033-22870793
7. सर्वकार्यभारी अधिकारी एवं पोस्टमास्टर जनरल, सर्वकार्यभारी अधिकारी एवं पोस्टमास्टर जनरल का कार्यालय, गहन भाषा प्रशिक्षण उप केंद्र वडोदरा- 390002

अनुलग्नक -IV

संपर्क सूत्र :-

निदेशक, केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण संस्थान, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, 7वाँ तल, पं.दीनदयाल अंत्योदय भवन, बी ब्लॉक, केंद्रीय कार्यालय परिसर, लोधी रोड, नई दिल्ली-110003. दूरभाष सं. 011-24361852 फैक्स सं. 011-24361852 ई-मेल-dirchti- dol@ nic.in	सहायक निदेशक, केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण संस्थान, वाणिज्य और उद्योग मंत्रालय, औद्योगिक नीति और संवर्धन विभाग, कक्ष सं० 449-ए, उद्योग भवन, रफ़ी मार्ग, नई दिल्ली-110011 दूरभाष सं. 011-23063321, एक्सटेंशन सं० 2207 फैक्स सं. 011-23062626

नई दिल्ली के प्रशिक्षण केंद्र तथा हॉस्टल का पता तथा उनके बस रूट नं०:-

नई दिल्ली के प्रशिक्षण केंद्र का पता	**हॉस्टल का पता**
केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण संस्थान, वाणिज्य और उद्योग मंत्रालय, औद्योगिक नीति और संवर्धन विभाग,गेट नं०- 12, कक्ष सं. 449-ए, चौथा तल, उद्योग भवन, रफ़ी मार्ग, नई दिल्ली-110011. दूरभाष सं. 011-23063321 एक्सटेंशन सं० 2207 फैक्स सं. 011-23062626, प्रशिक्षण केंद्र के लिए नई दिल्ली,चांदनी चौक (पुरानी दिल्ली) कश्मीरी गेट (आई एस बी टी) से मेट्रो रेल सेवा उपलब्ध है। मेट्रो स्टेशन का नाम "उद्योग भवन" है।	वार्डन (हॉस्टल), केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण संस्थान, फ्लैट नं. 2, गवर्नमेंट हॉस्टल, तीसरा तल, देवनगर, करोल बाग, नई दिल्ली-110005 फोन नं० 011-28716509 नई दिल्ली से बस रूट नं०181, 166 पु.दि.रेलवे स्टेशन से बस रूट सं. 926 बस स्टॉप का नाम खालसा कॉलेज है। हॉस्टल से प्रशिक्षण केंद्र उद्योग भवन तक आने के लिए बस रूट नं० 610, 166, 181 है।

rduhdh lxk"Bh] tk/kiqj e epklhu lfpo ¼jk-Hkk-½ Jh iHkkl dqekj >k]
l;qDr lfpo ¼jk-Hkk-½ Mk- fcfiu fcgkjh o vU; vfrfFkx.kA

if'Pke rFkk e/; {ks=ksa dk jktHkk"kk lEesyu dk nhjku epklhu vfrfFkx.kA

Hkkjr ljdkj] jktHkk"kk foHkkx ¼xg ea=ky;½] ,u Mh lh&II Hkou] ubZ fnYyh&110003
ds fy, Mk- /kus'k f}osnh] mi lEiknd }kjk izdkf'kr rFkk
MkWfYQu fizVks&xzkfQDl] ubZ fnYyh }kjk eqfnzr